पलासी
का
युद्ध
तपन मोहन चट्टोपाध्याय
भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क—१३७

पलासीका युद्ध

लेखक

तपन मोहन चट्टोपाध्याय

अनुवादिका

डॉ० कणिका विश्वास एम० ए०, एम० एड्०, पी० एच्० डी०

हिन्दी विभाग, विश्वभारती शान्ति निकेतन

भारतीय ज्ञानपीठ • काशी

निवेदन

मेरी बँगला पुस्तक 'पलाशिर युद्ध' का यह हिन्दी अनुवाद 'पलासीका युद्ध' नामसे प्रकाशित हो रहा है। बँगलाके पाठकोंमें इसका यथेष्ट समादर हुआ है। फलस्वरूप थोड़े समयमें ही बँगलामें इसके दो संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। आशा है, हिन्दी पाठकोंको यह पुस्तक पसन्द आयेगी।

इसका हिन्दी अनुवाद विश्व भारतीके हिन्दी विभागकी प्राध्यापिका डाक्टर कणिका विश्वास एम० ए०, एम० एड०, पी०-एच० डी० ने किया है। कणिका मेरे आशीर्वादकी अधिकारिणी है, उसे मुझे धन्यवाद नहीं देना है। भगवान् उसे सुखी रखें और उसकी उन्नतिका मार्ग प्रशस्त करें। अनुवादमें मैंने चाहा है कि मूल भाषाकी प्रकृतिकी झलक मिले; इसलिए जहाँ कुछ अनुवादमें विचित्र-सा लगे, उसे नया मानकर स्वीकार किया जाये, यह मेरी इच्छा है।

—तपन मोहन चट्टोपाध्याय

आरम्भ

मैं एक ऐतिहासिक कहानी कहने जा रहा हूँ।

कहानीके रूपमें मैं अपनी बात कहने जा रहा हूँ। इसलिए यह इतिहास नही हैं, ऐसी बात कोई जिसमें न समझे। क्योंकि बना-बनाकर कोरी कहानी रचना करनेकी कल्पना-शक्ति मेरेमें बिलकुल नहीं है। इसके अलावा मैं जिस कालकी कहानी कहनेके लिए तैयार हुआ हूँ, उस कालकी समस्त घटनाओंका ब्योरेवार विवरण इतिहासके बड़े-बड़े ग्रन्थोंके पन्ने-पन्नेमें बड़े विस्तारसे स्पष्ट भावसे लिखा हुआ है। जो कोई भी जिस समय इच्छा हो उन पुस्तकोंको उलट-पुलटकर इस बातकी जाँच कर ले सकता है कि जो मैं कह रहा हूँ वह इतिहास हैं अथवा नहीं। इसीलिए, यह कहानी होनेपर भी सत्य कहानी हैं, यह मैं बिना किसी हिचकके कह सकता हूँ।

फिर भी इसमें एक बात हैं। आजकलके पण्डित कहते हैं कि इतिहास-ग्रन्थ होनेपर भी पहलेकी नाईं अब उन्हें जो-हो सो-हो कर लिखनेसे नहीं चलेगा। केवल कई नाम-धाम, सन-तारीख ठीक-ठीक बैठा देनेसे ही अथवा फुटनोट, एपेन्डिक्सके द्वारा ग्रन्थको भाराक्रान्त कर देनेसे ही वह एक अच्छा-सा इतिहास-ग्रन्थ हो जायगा, ऐसी बात नहीं।

अर्थात् सीधी-सी बात यह है कि इतिहास होनेपर भी पढ़नेमें उसे नाटक-नावेलके समान सरस होना चाहिए। बड़े मज़ेमें रस ले-लेकर सोचते-सोचते सहज भावसे अगर इतिहास-ग्रन्थ नहीं पढ़ा जा सका तो उसका लिखा जाना बेकार है; कोई भी उसे चावसे पढ़ना नहीं चाहेगा। भले ही उस ग्रन्थको टेक्स्ट-बुक कर दिया जाय, लेकिन उसे पढ़ने लायक़ एक इतिहास-ग्रन्थ नहीं बनाया जा सकता।

हालमें एक और आवाज़ उठने लगी है। कहा जाने लगा है कि आज

तक इतिहासकी रचना ग़लत ढंगपर हुई है। अब सम्पूर्ण रूपसे एक नये ढंगसे इतिहास लिखना होगा। इतिहास कहते ही स्वभावतः हम लोगोंके मनमें केवल राजाओं-बादशाहोंके युद्ध-विग्रह, विप्लव-षड्यन्त्रकी बात ही जाग उठती है; इतिहासका अर्थ इन्हीं सबोंका विस्तृत विवरण समझा जाता है; लेकिन यह इतिहास तो बिलकुल एकांगी होगा। मनुष्यके विराट जीवन-प्रवाहके साथ इसका सम्बन्ध ही कितना है? मनुष्यके दिन-प्रतिदिनकी जीवन-यात्राकी बात, उसके सुख-दुःख, आशा-आकांक्षाकी बात, उसके रहन-सहनकी बात, धर्म-कर्मकी बात, कला-कौशलकी बात, इन्हीं सब बातोंकी चर्चा ही तो इतिहास है।

इसीलिए तो कुछ लोग कहते हैं कि पानीपतकी तीसरी लड़ाईमें किस पक्षमें कौन-कौन लड़े थे, नेपोलियन किस सालमें ड्यूक आफ वेलिंगटनसे किस युद्धमें हार गया था, बादशाह औरंगज़ेबने दिल्लीकी गद्दी पानेके लिए कौन-कौनसे कुकर्म किये थे, इन सब बातोंका ठीक-ठीक ब्यौरा रखनेकी अपेक्षा इस बातका जानना, सोचना और लिखना कहीं अधिक आवश्यक है कि प्रथम किसने कब धान रोपना सिखाया था, सर्वप्रथम किसने कपड़ा बुननेका आविष्कार किया था, रंग और तूलिकाके रहस्यका किसने प्रथम उद्घाटन किया था अथवा यही कि मनुष्यको प्रथम-प्रथम किसने हर्बा-हथियार पकड़ना सिखाया था।

और कोई-कोई तो स्पष्ट रूपसे यह भी कह देते हैं कि मुसलमान-शासनके आरम्भ होनेके पूर्व भारतीय इतिहासमें सन्-तारीख़ घटन-अघटनको खोजने जाना व्यर्थका परिश्रम मात्र है। वे कहते हैं कि यह एक बहुत बड़ी भूल है। भारतवर्षके लोग तो महाकालकी साधनामें खण्डकालको सम्पूर्ण-रूपसे लुप्त कर देना चाहते हैं। वे कालको अनादि कहते हैं। सृष्टि भी उनके निकट 'अनादि-अनन्त है। कालका जहाँ कोई परिमाण नहीं वहाँ इतिहास किस प्रकारसे लिखा जाय?

ज़िस देशमें मृत व्यक्तिको जलाकर राख कर दिया जाता है, और

उसके चिताभस्म तकको पानी उडेलकर साफ़ कर दिया जाता है, वहाँ स्पष्ट ही समझा जा सकता है कि मनुष्यकी बाह्य अवस्थाके ऊपर उस देशके लोगोंकी आस्था कितनी कम है। और घटना? उसमें प्राण ही कितना है? वह भी तो उसी कालके ऊपर प्रतिष्ठित है। और असंख्य, करोड़ों कल्पों-की तुलनामें उसका मूल्य ही क्या है? जिन लोगोंके मनकी अवस्था इस प्रकारकी है, उन्हें लेकर चाहे और जो-कुछ भी क्यों न कर लिया जाय, लेकिन भद्रभावसे इतिहास कैसे लिखा जाय?

आर्य पितामहगण तो बाद वालोंकी सुविधाके लिए, जिसे हम इतिहास कहते हैं, उसकी सामग्री कुछ विशेष रख नहीं गये हैं। सामग्रीके अभावको इसीलिए तो कल्पना द्वारा पूरा कर लेना पड़ता है; इसीलिए तो भारतवर्षके पुरातन इतिहासको लेकर इतनी थ्योरी, इतनी मारामारी और इतना वाद-प्रतिवाद है—नाना मुनियोंके नाना प्रकारके मत हैं।

मुसलमान और अंग्रेज़ समयको काफ़ी महत्त्व देते हैं। इसी वजहसे वे कालका भी एक हिसाब रखते हैं। इसके अलावा वे सांसारिक राजत्वको स्वर्गके राज्यसे कहीं अधिक काम्य मानते हैं। इसीलिए मृत्यु-लोककी घटनाएँ उनके लिए एकदम उपेक्षाकी वस्तु नहीं हैं। पीछे लोगोंकी स्मृतिसे ये सब विलुप्त न हो जायँ इसी भयसे तो मौक़ा पाते ही वे इन्हें लिपिबद्ध कर देते हैं।

केवल यही नहीं। मरनेके बाद भी इस विषयसे उन्हें विरत होते नहीं देखा जाता है। क़ब्रके ऊपर इमारत, स्तम्भ, शिलापट्ट आदिका निर्माण करते हैं और फिर उसीपर सन्-तारीख, नाम-धाम, पूर्वजोंका तथा अपना परिचय देकर अपने कीर्तिकलापोंका विवरण लिख रखते हैं और इस प्रकार-से सर्वग्रासी कालको जय करना चाहते हैं।

यही कारण है कि मुसलमानोंके शासन कालसे अंग्रेज़ोंके शासन काल तकके भारतवर्षके इतिहासको पण्डित लोग बहुत दूर तक विश्वसनीय इतिहास मानते हैं। पूराका-पूरा क्यों नहीं मानते, इसके लिए मनुष्यकी

प्रकृति ही उत्तरदायी है। मनुष्यका मन तो किसी बँधे-बँधाये नियमको मानकर चलता नहीं। इसीलिए मनुष्य जो देखता अथवा सुनता है, वह जब उसके मनके रससे परिपाक होकर प्रकाशमें आता है, तब देखा जाता है कि एक ही वस्तुको अलग-अलग व्यक्तियोंने अलग-अलग ढंगसे देखा है। और भिन्न-भिन्न प्रकारसे सुना है। विभिन्न लोगोंके हाथमें पड़कर एक ही वस्तुने विभिन्न रूप धारण किये हैं। तव उसका असली रूप क्या है, उसे ठीक-ठीक समझना मुश्किल है।

यह सब देखकर ही तो वहुतसे विचारक कहते हैं कि भारतवर्षके इतिहासमें घटनाओंका विवरण देनेकी जरूरत ही क्या है? और अगर लिखना ही चाहते हो तो भारतवर्षने जिस वस्तुको वड़ा समझा था, उसकी उसी भावधाराका इतिहास क्यों नहीं लिखते? किस प्रकारसे वैदिक युग धीरे-धीरे व्राह्मण-युगमें परिणत हुआ, किस प्रकारसे व्राह्मण-युगसे बौद्ध-युगका उद्‌भव हुआ और फिर किस तरहसे बौद्ध धर्मको उन्मूलित कर हिन्दू-धर्मका उदय हुआ; इसके वाद मुसलमान और ईसाई धर्मोंके घात-प्रतिघात और संघर्षसे हिन्दू-धर्मने कौन-सा रूप ग्रहण किया, उसीका इतिहास लिखो। कहाँसे उसकी उत्पत्ति हुई, क्या उसका स्वरूप है, कैसी उसकी गति रही, कैसी उसकी परिणति होगी, इन्हीं सव बातोंको सुलझाकर कहो।

वात वड़ी सख्त है। यह आकस्मिक प्रहार वहुत ही कठिन है। सु-प्रतिष्ठित प्रवीण इतिहासज्ञ इसे इतिहास कहना चाहेंगे या नहीं इसमें सन्देह है। पत्थरके समान मजवूत स्थूल पदार्थके ऊपर इतिहास आश्रय लेता है। भावधाराके समान सूक्ष्म पदार्थ क्या उसका भार सह सकता है? वह चाहे जो हो, मेरे जैसे आदमीके लिए भावके गहन वनमें प्रवेश करनेकी चेष्टा वौनेके चाँद छूनेके लिए हाथ वढ़ाने जैसी है। फलस्वरूप, "गमिष्यामि उपहास्यताम्" अर्थात् उपहासके सिवा उससे और कोई लाभ नहीं होगा। वह पथ पण्डितोंके लिए खुला रहे।

और इतिहासकी पुस्तकोंको पढ़कर भी तो देखता हूँ, उसका वाहरसे

चौदह आना अंश मनुष्यकी अपकीर्तियोंसे ही भरा हुआ है। मनुष्यके बड़ेसे-बड़े कुकृत्योंमें भी विराट प्राणशक्तिकी एक प्रचण्ड लीला देखनेको मिलती है। इसीलिए तो वे मनुष्यको इतना आकर्षित करते हैं। गोपालके समान सुबोध-सुशील बच्चोंके निरीह कार्यकलापको लेकर तो कोई इतिहास लिखने बैठता नहीं।

सम्पूर्ण रूपसे भले ही न हो लेकिन बहुत अंश तक यही कारण है कि अन्त तक एक युद्धकी ही कहानी कहनेका मैंने संकल्प किया है। लेकिन घटनाके नहीं रहनेपर तो कहानी नहीं होती। मेरी कहानीकी घटना पलासीका युद्ध है।

भारतीय इतिहासकी इतनी घटनाओंमेंसे सहसा पलासी-युद्धकी घटनाको कहानी कहनेके लिए मैंने क्यों चुना, यह प्रश्न पाठकोंके मनमें जगे तो कोई आश्चर्य नहीं। निश्चय ही एक कारण है। वह क्या है उसे थोड़ा खुलकर कहें।

मुझे लगता है पलासीका युद्ध एक सन्धिकाल है। इसी सन्धिकालमें बंगालमें मध्य-युगका अवसान होता है और वर्तमान युगका आविर्भाव होता है। यहाँ आकर बंगाली जातिकी जीवन-धाराने जैसे एक और मोड़ लिया। धीरे-धीरे अज्ञानका काला कुहरा दूर हो गया और ज्ञानके सूर्यालोकने बंगाली जातिके जीवन और समाजमें एक नयी आबहवाकी सृष्टि की। फलस्वरूप एक सम्पूर्ण नये ढंगका बंगाली समाज धीरे-धीरे गठित हुआ। पूर्ववर्ती समाजकी किसी धारामें इसका सादृश्य नहीं पाया जाता।

इस प्रकारके समाज-निर्माणमें प्रत्यक्ष रूपसे अंग्रेज़ोंका अधिक हाथ नहीं था। लेकिन अंग्रेज़ोंके संस्पर्शसे ही वह गठित हुआ था, इसमें भी कोई सन्देह नहीं है। उस समाजका चेहरा पूराका-पूरा विलायती नहीं है, लेकिन पूराका-पूरा देशी भी नहीं है; दोनोंको मिलाकर वह नये प्रकारकी एक अलग वस्तु है। उसी समाजने ही एक दिन समस्त भारतवर्षके विद्या-बुद्धि-ज्ञानका चिराग़ लेकर लोगोंको आलोक-पथ दिखलाया था।

इसका इतिहास अभी भी अच्छी तरहसे नहीं लिखा गया है। कभी लिखा जायगा कि नहीं, नहीं जानता। जब तक नहीं लिखा जाता तब तक कहानीको लेकर ही सन्तोष करना होगा। दूधकी साध छाछसे नहीं मिटनेपर भी मिठाईके अभावमें गुड़से काम चलानेकी व्यवस्था तो शास्त्रमें ही हुई है।

: १ :

पलासी-युद्धकी कहानी आरम्भ करनेके पहले कलकत्ताके भित्ति-स्थापन-की एक वार चर्चा कर लेनी उचित होगी, वह चाहे जितना ही संक्षेप क्यों न हो। क्योंकि कलकत्ताको लेकर ही तो पलसी-युद्धका आरम्भ होता है।

दक्षिणमें वेहाला-वंड़शे और उत्तरमें दक्षिणेश्वर है। इसीके बीच कालीक्षेत्र है जो सावर्ण-चौधुरियोंकी ज़मीदारीके अन्तर्गत था। मार्नासह जव बंगालके सूवेदार होकर आये तव उन्हींकी सिफारिशसे सावर्ण-चौधुरियों-के पूर्वज लक्ष्मीकान्त गांगुलीने अकबर बादशाहके पाससे इस ज़मीदारीको पाया था। और इसीके साथ उन्हें मजुमदारकी उपाधि मिली थी। सावर्ण गोत्रवाले गांगुली वंशके इन ब्राह्मण ज़मीदारोंको लोग चलती भाषामें केवल सावर्ण-चौधुरी कहा करते थे।

कालीघाटकी भद्रकाली कालिका, कालीक्षेत्रकी अधिष्ठात्री देवी हैं। नकुलेश्वर महादेवके साथ वे यहाँपर आनन्दसे विराज रही हैं। किंवदन्ती प्रचलित है कि उन दिनों चौरंगीके विशाल जंगलमें नाथ-सम्प्रदायी चौरंगी-नाथ नामक एक वातसे पंगु साधु रहते थे। कहते हैं कि उन्होंने ही इस देवी मूर्तिको मिट्टीके नीचेसे पाया था।

यह भी सुननेमें आता है कि पहले भवानीपुर ग्राममें इसी देवीका एक मन्दिर था। नाम सुननेसे ही यह अनुमान किया जा सकता है। वादमें, सावर्ण-चौधुरियोंने कालीघाटमें आदि अथवा बूढ़ी गंगाके ऊपर देवीके लिए एक मन्दिर वनवा दिया। उसी समयसे ही कालीघाट, हिन्दुओंका एक वड़ा तीर्थ-स्थान है।

सामाजिक नियमके अनुसार सावर्ण-चौधुरी लोग स्वयं देवीके पुजारी नहीं हो सकते थे। इसलिए उन लोगोंने हालदार वंशके एक श्रोत्रिय ब्राह्मण परिवारको लाकर कालीघाटमें उनके रहनेका स्थान बनवा उन्हें देवीकी सेवाके लिए नियुक्त किया। उसी हालदार वंशकी शाखा-प्रशाखा ही देवी मंदिरकी रक्षक है।

इसी काली-क्षेत्रके मध्यभागमें तीन छोटे-छोटे नगण्य ग्राम थे। उत्तरमें सुतोनुटि, बीचमें कलकत्ता तथा दक्षिणमें गोविन्दपुर था। इन्हीं तीन गाँवोंको लेकर ही कलकत्ता शहर बना था। आज हम लोग कलकत्ताको इतना बड़ा शहर देखते हैं। पृथिवीके एक बड़े शहरके रूपमें इसकी ख्याति है। परन्तु उस समय यह साराका-सारा जंगल था। चारों ओर सड़े-गले कीचड़से भरे छोटे-छोटे जलाशय, सेवारसे भरे पोखर, स्रोतहीन जलवाली निम्नभूमि तथा जलसे चप-चप करते हुए जंगल थे। उसीके बीच कुछ धानकी खेती, कुछ फल-मूलके बाग़ और बाक़ी सबमें होग्ला (जलसे चप-चप करनेवाली भूमिमें उत्पन्न होनेवाला वृक्ष विशेष) की झाड़ी और बाँसोंका झुरमुट था।

कहनेके लिए बड़ा रास्ता वही एक था। पतली गली जैसा टेढ़ा-मेढ़ा वह उत्तरमें चित्पुर ग्रामसे दक्षिण कालीघाट तक चला गया है। उससे होकर तीर्थयात्री दल बाँधकर देवीके दर्शनके लिए जाते। सम्पूर्ण रास्तेके दोनों तरफ़के झाड़-झंखाड़ोंमें दस्युओं—डकैतोंका अड्डा था। थोड़ा भी असावधान होनेपर धन-प्राण दोनों ही जाते। अनगिनत हिंस्र जन्तु भी थे। ऊँचे स्थलोंमें बनैले सूअर, साँप और बाघ तथा जलसे भरी हुई नीची भूमि और गड्ढोंमें मगर-घड़ियाल रहते।

एक छोटा रास्ता भी था। लालदीघीसे शुरू होकर वह पूरबकी ओर साल्ट लेक तक चला गया है। आजकल उसे हम लोग धापाका मैदान कहते हैं। इसी रास्तेसे होकर आस-पासके गाँवोंके रहनेवाले माथेपर गठरी रखे गंगाके किनारे आते। उस पारके शाल्केसे व्यापारी सौदा लेकर गंगा

पारकर इस पार आते। उनके साथ खरीद-बिक्रीका काम पूरा कर इस पारके लोग गंगा स्नान कर घर लौटते।

लालदीघीके पश्चिमी किनारेपर सावर्ण-चौधुरियोंकी कचहरी थी। समूचे गाँवमें केवल मात्र वही एक पक्का मकान था। और थोड़े-से मकान जो इधर-उधर बने हुए थे, उनकी दीवार मिट्टीकी थी और छप्पर फूसका।

किंवदन्ती है कि इसी कचहरीमें बैठा कवि-गान करनेवाला (बंगालके गाँवोंमें तुकबन्दी करनेवालोंका दल होता है। इस प्रकारके दो दलोंमें किसी विशेष प्रसंग या विषयको लेकर शास्त्रार्थ होता है। कवितामें ही उत्तर प्रत्युत्तर चलता है। गाँववाले इसमें खूब रस लेते हैं।) फिरंगी एन्टनी सावर्ण-चौधुरियोंके दफ़्तरमें वहीखाता लिखता और अवसर पाकर गीत-रचनामें लग जाता। लेकिन इस किंवदन्तीमें तथ्य बहुत कम है। थोड़ा-सा हिसाब लगाकर देखनेपर यह मालूम हो जाता है कि कविगान करनेवाला एन्टनी बहुत बादमें हुआ है। जो एन्टनी सावर्ण-चौधुरियोंकी कचहरीमें काम करते थे, उनका कवि-गान करनेवालोंके साथ अगर कोई सम्बन्ध होता तो उम्रके लिहाज़से वे कविके पितामह साबित होते।

गंगाका पश्चिमी किनारा वाराणसीके तुल्य है। उसी ओर सभी उच्च श्रेणीवालोंका वास-स्थान था। गंगाके पूर्वी किनारे उस समय जंगल-झाड़ थे, वह सुन्दर वनका एक अंश ही था। यह कहना ही ठीक होगा कि उस अंचलमें सम्भ्रान्त लोगोंका वास नहीं था। जिनको हम लोग अवज्ञा-पूर्वक निम्न श्रेणीका कहते हैं अर्थात् जो हाथकी कमाईसे अपना गुज़ारा करते हैं, अधिकांश वे ही वहाँ थे। और अन्य व्यवसायमें लगे हुए लोगोंकी श्रेणी भी कुछ-कुछ थी। और जिनके बिना काम नहीं चलता, वे भी थे, जैसे धोबी, नाई तथा एक घर गोसाई-पुरोहित।

कलकत्तेके विभिन्न मुहल्लोंके नाम इन आदिम बाशिन्दोंके साक्षी स्वरूप आज भी वर्तमान हैं। जैसे अहीरी टोला, कलु टोला (कोल्हू टोला), जेले टोला (धीवर टोला), कमोर टुली (कुम्हार टोली), शाखारी टोला

(शंखकी चूड़ियाँ बनानेवालोंका मुहल्ला), पटुया टोला (पट्ट-चित्र बनानेवालोंका टोला), कसाई टोला, डोम टोला, व्यापारी टोला, कपाली टोला, चाषा-धोपा-पाड़ा (खेत-मज़दूर और धोबियोंका मुहल्ला), निकाशी पाड़ा (नक्काशी करनेवालोंका मुहल्ला), दर्जी पाड़ा, छुतोर पाड़ा (बढ़ईका मुहल्ला), मोची पाड़ा, हाड़ि-पाड़ा (भंगी मुहल्ला), दुले पाड़ा (कहारोंका मुहल्ला), सूँड़ी पाड़ा, कांसारी पाड़ा, योगी पाड़ा, कामार डाँगा (लुहारोंका मुहल्ला), ताँती बाग़ान (जुलाहोंकी बस्ती), नाथ बाग़ान इत्यादि। उच्च श्रेणीवाले क़सबों अथवा ग्रामोंके बामुन पाड़ा (ब्राह्मणोंका मुहल्ला), कायेत पाड़ा (कायस्थोंका मुहल्ला) तथा बद्यि पाड़ा (वैद्य जातिका मुहल्ला)—ये सब इस अंचलमें सुननेको नहीं मिलते।

जो थोड़ा दिमाग़ी काम कर सकते अर्थात् जो उन दिनों फ़ारसीनवीस थे, वे इस अज्ञात अख्यात स्थानमें किस लोभसे आते ? उन लोगोंका स्थान राजधानीमें था। पहले राजमहलमें, उसके बाद ढाकामें और सबके अन्तमें मुर्शिदाबादमें। इनमें कोई-कोई नवाबके दफ़्तरमें काम पाते, वैसे अधिकांश बड़े-बड़े ज़मींदारोंके सिरिश्तामें ही पाते।

अंग्रेज़ोंने किस प्रकार इस सब जंगलको काटकर, जलाशयोंको भरकर, दलदलको साफ़कर, रास्ते-घाटका निर्माण कर कलकत्ता शहरकी नींव डाली थी और किस प्रकार धीरे-धीरे उसकी श्री-वृद्धि की थी, इसका इतिहास बड़े-बड़े राज्योंके जय करनेके इतिहाससे किसी भी तरह कम नहीं है। कितने कठिन अध्यवसायके कष्टको एक दम तुच्छ मानने और मृत्युसे ज़रा भी विचलित नहीं होनेकी कहानी इस शहरके अतीतके गर्भमें छिपी हुई है। उसकी सब बात इन दिनों खुलकर कहनेपर, हो सकता है, किसीको विश्वास ही न हो। लगेगा जैसे वह सब कोरा बकवास है।

सवेरे जो आदमी जीता-जागता देखा गया, सन्ध्या समय उसको ही कन्धेपर ढोकर कब्रिस्तानमें ले जानेकी पुकार मची। सन्ध्या समय जिसके साथ खाना-पीना, आमोद-प्रमोद किया गया उसीकी कब्रपर भोरहरीमें

मिट्टी डालकर लौटना पड़ा। तो भी अदम्य उत्साह, काम-काजमें विराम नहीं, तो भी यही सुन पड़ता है, आगे वढ़ो, आगे वढ़ो।

नगण्य ग्राम होनेपर भी अंग्रेजोंके आनेके पहले, पीठस्थानके निकट होनेके कारण, कलकत्ताकी थोड़ी ख्याति थी। बंगलामें लिखी हुई दो पुरानी हस्तलिखित ग्रन्थोंमें कलकत्ताका उल्लेख है। पहला हस्तलिखित ग्रन्थ विप्रदास पिप्पलाइका 'मनसा मंगल' है और दूसरा विख्यात मुकुन्दराम चक्रवर्तीका 'चण्डी मंगल' है।

विप्रदासका काव्य सन् १४९५ अथवा १४९६ ई० का लिखा हुआ है। लेकिन उसके जिस अंशमें कलकत्ताके सम्बन्धमें लिखा हुआ है, उसे वहुत-से पण्डित प्रक्षिप्त मानते हैं फिर भी मुझे लगता है, जिन्होंने यह प्रक्षेप किया था वे विप्रदासके समान उतने प्राचीन नहीं होनेपर भी हम लोगोंकी तुलनामें निरे अर्वाचीन भी नहीं हैं।

मनसा मंगलमें दिया हुआ है—

डाहिने कोतरं बाहि कामारहाटि बामे।
पूर्वेते आड़ियादह घुषुड़ि पश्चिमे॥
चित्पुरे पूजे राजा सर्वमंगला।
निसिदिसि वाहे डिंगा नाहि करे हेला॥
ताहार पूर्व कूल वाहि एड़ाय कलिकाता।
बेंतड़े चापाय डिंगा चांद महारथा॥

कवि कंकण मुकुन्दरामका 'चण्डी काव्य' १५७४ से १६०४ के बीचका लिखा हुआ है। मुकुन्दराम लिखते हैं—

त्वराय चलिल तरी तिलेक ना रय।
चितपुर सालिखा एड़ाइया जाय।
कलिकाता एड़ाइल बेनियार बाला।
बेंतड़ेते उतरिल अवसान बेला॥

इसके अलावा, बादशाह अकबरके प्रधान मन्त्री अबुल फ़ज़लके 'आइने अकबरी' (१५९६ साल) में भी कलकत्ताका उल्लेख है। उसमें कहा गया है कि कलकत्ता सातगाँ अथवा सप्तग्राम सरकारमें अन्तर्भुक्त है।

: २ :

अंग्रेज़ोंके आनेके बहुत पहले ही यूरोपसे इस देशमें वाणिज्य करनेके लिए सर्व-प्रथम पोर्तुगीज़ लोग आये। बंगालमें इन लोगोंका प्रधान अड्डा चटगाँव था। वहींसे वे प्रायः समस्त पूर्वी बंगालमें फैल गये थे। इनमेंसे अनेक युद्ध विद्यामें निपुण होनेके कारण पूर्व देशके छोटे-बड़े बहुतसे ज़मींदार भूमिपतियोंके सैन्यदलके सेनापति बन बैठे थे।

जैसा कि सर्वत्र होता है, व्यवसायियोंके पीछे-पीछे बहुतसे निकृष्ट लोग भी भाग्यकी आजमाइश करने आने लगे। और उनके साथ ही पोर्तुगीज़ ईसाई साधु-संन्यासियोंका दल भी कुछ कम नहीं आया। निम्न श्रेणीके पोर्तुगीज़ोंका प्रधान काम जलदस्युका था और उसके साथ ही इस देशके लोगोंको पकड़ क्रीतदास बना विदेशमें चालान करना था।

बंगालका सम्पूर्ण दक्षिण-पूर्व भाग इन लोगोंके अत्याचारसे बिल्कुल जर्जर हो गया था। नाम सुनते ही सभी भयसे काँपते। इस जातिके लोगोंका प्रधान अड्डा सन्द्वीप था। वहाँसे समस्त सुन्दरवन-अंचलपर प्रहार करते-करते वहाँके समृद्ध, खुशहाल शहरोंको उन लोगोंने श्मशान बना दिया था।

जो व्यापारी थे, वे प्रत्येक वर्ष गंगासे होकर ऊपरकी ओर चले आते। खरीद-बिक्रीका काम समाप्त होनेपर, फिर वे अपने स्थानपर लौट जाते।

पोर्तुगीज़ोंके बड़े-बड़े जहाज़ ऊपरकी ओर बहुत दूर तक नहीं आ पाते इसलिए उन लोगोंने मटियाबुर्ज़के उस पार बाँतड़ (वर्तमान कालका बाँटरा) नामक स्थानमें अपना अड्डा क़ायम किया। उससे थोड़ी ही दूरपर एक मिट्टीका क़िला था, आत्मरक्षाके लिए उन लोगोंने उसे भी दख़ल कर

लिया। उस क़िलेके मुग़लोंके हाथमें आनेपर वहाँ एक पुलिस थाना बना। उसीसे क़िलेका नाम भी थाना हो गया। वहाँ आजकल बोटेनिकल गार्डेन्स-के सुपरिण्टेण्डेण्टका दुमंज़िला मकान है। चलने-फिरनेकी और थोड़ी सुविधा होनेपर पोर्तुगीज़ोंने शाल्केमें अपना अड्डा जमाया।

पोर्तुगीज़ोंके साथ व्यापारको ध्यानमें रख चार वसाक-परिवार और एक सेठ-परिवारने सप्तग्राम छोड़कर कलकत्तेके दक्षिण गोविन्दपुर ग्राममें आकर रहना प्रारम्भ किया। सेठ, वसाक तन्तुवाय जातिके होनेपर भी उस समय सूत नहीं कातते और न करघा चलाते। अब वे कपड़ेका कारबार करते। सूत ख़रीदकर वे ताँतियोंको कपड़ा बुननेके लिए देते। कपड़ा तैयार होनेपर उसे ही अधिक मूल्यपर विदेशियोंके हाथ बेचते। 'भद्रलोक' कहलानेवालोंमें ये सेठ-वसाक आदि ही पूर्ण रूपसे आदिम कल-कतिया हुए।

पोर्तुगीज़ लोग जब शाल्केमें आ जमे तब सेठ, वसाकोंने व्यापारकी सुविधाके लिए कलकत्तेके उत्तर सुतोनुटि ग्राममें हाट लगानेकी व्यवस्था की। यह हाट ही उन दिनों गंगाके इस पार–उस पार ख़रीद-बिक्रीका एक प्रधान केन्द्र हो गया था। उसीके सामने गंगाके ऊपर सुतोनुटि-घाट था। वहींपर पोर्तुगीज़ोंके जहाज़ आ टिकते।

पोर्तुगीज़ लोग धीरे-धीरे और कुछ बढ़े। अन्तमें सप्तग्राममें जाकर जम गये। सरस्वती नदीके ऊपर स्थित सप्तग्रामका उस समय ख़ूब बोल-बाला था। उसमें भरा-पूरा होनेका भाव पूरी मात्रामें था। वह अत्यन्त समृद्ध था। वहाँ देश-विदेशसे माल आता-जाता। वहाँपर ही वह एक हाथसे दूसरे हाथमें जाता। भीड़-भाड़, चमक-दमक, घर-बारसे सप्तग्राम आठों पहर गुलज़ार रहता।

लेकिन अन्तमें एक ऐसा दिन आया कि सरस्वती नदीके जलशून्य होनेसे सप्तग्रामकी वह चमक-दमक जैसे अकस्मात् एक दिनमें ही नष्ट-भ्रष्ट होकर समाप्त हो गई। एक-एक कर सभी गंगाके किनारे हुगली चले आये।

देखते-देखते हुगली भी समृद्ध हो उठी। यह हुगली नाम पोर्तुगीज़ोंका ही दिया हुआ है। यह ओग्लीसे बिगड़कर बना है। देशी भाषामें इसका अर्थ गोदाम है। कालक्रमसे हुगली मुग़ल-साम्राज्यकी दक्षिण बंगालमें अन्तिम बड़ी चौकी हो गयी। एक मुग़ल फौजदार वहाँपर रहकर उस अंचलकी निगरानी करता।

पोर्तुगीज़ोंपर अकबर बादशाहकी सुदृष्टि पड़ी। बादशाहके दरबारमें क्रिश्चियन पादरियोंका अच्छा सम्मान था। पोर्तुगीज लोग जिसमें हुगलीमें स्थायी भावसे रह सकें और भले लोगोंके समान व्यवसाय-वाणिज्य कर सकें, इसके लिए बादशाहने उन लोगोंको एक फ़रमान लिख दिया।

अकबर और जहाँगीरके शासन-कालमें पोर्तुगीज़ लोग बड़े मजेमें रहे। उनके पादरियोंने जहाँगीरके रंग-ढंगको देखकर यह बिलकुल पक्का समझ लिया था कि बादशाह शीघ्र ही निश्चित रूपसे क्रिश्चियन-धर्म ग्रहण कर लेंगे। किन्तु अन्ततक उनकी यह आशा पूरी नहीं हुई। हिन्दू लोगोंने भी यह समझ रखा था कि इन दोनों बादशाहोंके शासनकालमें उनका हिन्दुत्व ठीक बचा रहेगा। और उनकी यह धारणा बहुत दूरतक ठीक रही।

पोर्तुगीज़ लोग अगर केवल व्यापार लेकर ही रहते तो हो सकता है अंग्रेज़ोंकी तरह वे भी इस देशमें बहुत दिनोंतक अच्छी तरह टिके रह पाते। लेकिन उन्हें एक बहुत ही खराब रोग था कि वे इस देशके लोगोंको समय-समयपर पकड़कर क्रिश्चियन बनाया करते। मौक़ा पाते ही बच्चोंको चुरानेवालोंके समान इस देशके छोटे-छोटे लड़के-लड़कियोंको पकड़कर क्रिश्चियन बनाकर छोड़ देते। चाहे वह हिन्दू हो चाहे मुसलमान।

वे सब देशी क्रिश्चियन नामसे क्रिश्चियन होनेपर भी आचार-व्यवहार, खान-पान, बात-चीत यहाँतक कि धर्म-कर्ममें भी पूरी तरह देशी ही रह जाते। लेकिन बड़े होनेपर उनके भाग्यमें क्रीत दास-दासी होनेके सिवा और कोई चारा नहीं रह जाता। उन दिनों क्रीत दासकी खरीद-बिक्रीका

सर्वत्र खूब प्रचलन था। इन नये क्रिश्चियन लड़के-लड़कियोंमें बहुतोंको इसी कारणसे विदेशमें चालान होना पड़ता।

शाहजहाँ किन्तु अन्य प्रकृतिके थे। लगता है जैसे उनके शरीरमें कुछ हिन्दू रक्त रहनेके कारण वे पहले-पहल अच्छे-खासे कट्टर मुसलमान हो गये थे। उनके पुत्र औरंगजेवने लगता है हिन्दू मन्दिरको विध्वंस करनेकी विद्या बापके पास ही सीखी थी। पोर्तुगीज़ोंके कीर्ति-कलापकी कहानी जब शाहजहाँके कानोंमें पड़ी तो अत्यन्त क्रुद्ध होकर उन्होंने कासिम खाँ नामक एक ज़बर्दस्त आदमीको हुगलीका फौजदार बनाकर भेज दिया और कह दिया कि जैसे भी हो क्रिश्चियन कुत्तोंको बिलकुल समुद्र पार लँघाकर ही छोड़ना।

पोर्तुगीज़ोंपर बादशाहका आन्तरिक क्रोध बराबर बना रहा। बादशाह जब युवराज थे तब बंगालमें रहकर उन्होंने अपने बापके विरुद्ध विद्रोहकी घोषणा की थी। उस समय पोर्तुगीज़ोंसे सहायताकी प्रार्थना उन्होंने की लेकिन विफल ही रहे। इस बातको शाहजहाँ बादशाह होनेपर भी एकदम नहीं भूले।

और भी एक बात थी। पोर्तुगीज़ोंकी शक्ति दिन-दिन जिस ढंगसे बढ़ रही थी उससे लगता है कि बादशाहके मनमें भय हो गया था कि और उसे अधिक बढ़ने देनेपर अन्तमें शायद समस्त बंगला-मुल्कको पोर्तुगीज़ोंके हाथमें छोड़ देना पड़ेगा।

डेढ़ लाख सेना लेकर क़ासिम खाँने हुगलीपर घेरा डाल पोर्तुगीज़ोंको प्रायः निर्मूल करके ही छोड़ा (सन् १६३२ ई०)। उनका और कोई चिह्न ही उन्होंने अवशिष्ट नहीं रहने दिया। जो बच गये उन्हें बन्दी बना कर आगरा रवाना कर दिया।

उनके तैयार किये हुए एक गिर्जेका भग्नावशेष केवल रह गया। हुगलीके निकट हो बंडेलमें वह गिर्जा है। और कुछ दिनों बाद बादशाहकी

क्षमा प्राप्त कर पोर्तुगीज़ लौटे और उसे पक्का बनवा दिया। बंडेलका वह गिर्जा आज भी वहीं खड़ा है। आज भी वह भारतीय रोमन कैथोलिक क्रिश्चियनोंका एक अत्यन्त पवित्र तीर्थ स्थान है।

इसके अलावा पोर्तुगीज़ लोग कुछ शब्द छोड़ गये हैं। वे सभी शब्द आज पूरी तरहसे बंगला हो गये हैं। फीता, चावी, बाल्टी, नीलाम, बेहला, पिरेक, तौलिया, साबुन, आलपीन, जांगला, आलमारी आदि नित्य व्यवहारके शब्द किसी समय पोर्तुगीज़ शब्द थे अगर यह स्पष्ट रूपसे बता नहीं दिया जाय, तो कितने बंगाली आज उसे समझ पायेंगे ?

लगता है और एक बात बहुतोंको मालूम नहीं। पोर्तुगीज़ोंने ही पहले-पहल बंगलाकी पुस्तक छापी। वैसे उसमें उन्होंने बंगला लिपिके बदले रोमन लिपिका प्रयोग किया। सन् १७४३ ई० में लिसबन शहरमें यह छपी। इसका नाम 'कृपार-शास्त्रेर-अर्थभेद' है। पादड़ी फादर मनोएल-दा आस्सुम्पशाकी लिखी हुई है। यद्यपि बहुत स्थलोंपर टीका-टिप्पणी छोड़कर पुस्तकका अर्थ एकदम समझमें नहीं आता फिर भी बीच-बीचमें सरल भाषा-में इसमें मज़े-मज़ेके क़िस्से दिये हुए हैं। उनमें साहित्य-रसका भी कुछ आभास है। इसके अलावा पोर्तुगीज़से बंगलाका एक व्याकरण-शब्दकोष भी उसी समय उसी जगहसे छपा। ग्रन्थकार वही पादरी साहब हैं।

एक समय पोर्तुगीज़ भाषा, परवर्ती कालकी हिन्दुस्तानी भाषाके समान देशी लोगोंके साथ विदेशी लोगोंकी बातचीतका माध्यम थी। इसीलिए हम देखते हैं कि अंग्रेज़ी कम्पनीके डायरेक्टर भी यहांके अपने मुंशियोंको पोर्तुगीज़ भाषापर अच्छी तरह अधिकार करनेका बार-बार आदेश देते हैं।

हुगलीसे भगाये जानेपर पोर्तुगीज़ बंगालमें फिर प्रबल हो सिर नहीं उठा सके। व्यापार छोड़कर पोर्तुगीज़ लोग बंगालके पूर्व-दक्षिण अंचलमें और भी अच्छी तरहसे जल-दस्युगिरीमें प्रवृत्त हुए। पोर्तुगीज़ जल-दस्युओं-का अनाचार-अत्याचार बहुत दिनोंतक चलता रहा। उसकी बहुत-सी

विचित्र कहानियाँ आज भी सुननेको मिलती हैं। अन्तमें शाइस्ता खाँ बंगालके नवाब होकर आये और उन्होंने इन लोगोंकी पूरी खबर ली।

पोर्तुगीज़ोंके वंशधरोंमें अनेक यहाँ विवाहादि कर बंगाली समाजमें घुल-मिल गये हैं। पूर्वी बंगालमें ऐसे अनेक पोर्तुगीज़ वंशके अवतंस हैं जिन्हें अब और अलग कर पहचानना कठिन है।

: ३ :

उस ओर डच लोग भी घात लगाये बैठे थे। पोर्तुगीज़ोंके हुगली छोड़ते ही डच लोग उनके व्यवसायके उत्तराधिकारी बन बैठे।

इसके कुछ पहले (सन् १६२५ ई०), हुगलीमें मुग़ल फौज़दारके बिलकुल आँखोंके आगे रहना खतरेसे खाली नहीं समझकर डच-ईस्ट-इंडिया कम्पनीने वहाँसे थोड़ा हटकर चुँचड़ामें अपने लिए स्थान कर लिया था।

डच लोग बंगालमें बड़े मज़ेमें पैसे कमा रहे हैं, यह देख अंग्रेज़ लोग भी बंगालमें आनेका उपक्रम करने लगे। इसके पहले ही अंग्रेज़ लोग सूरत, मद्रास और बालेश्वरमें पैठ एक-एक कोठी बनवा कर जम चुके थे। उन्हें लगा कि अगर वे बंगालमें आ जायें तो उनका व्यापार कुछ खराब नहीं चलेगा। क्योंकि बंगालका सोरा, रेशम, चीनी, चावल और कपड़ा—पतला मसलिन, छपी हुई छींट तथा मोटी धोती—उस समय संसार भरमें प्रसिद्ध थे। और साथ ही यहाँ पंसारियोंवाले कुछ-कुछ मसाले आदि भी थे। केवल अकेले डच लोग उसका फल क्यों भोगा करें ?

वास्तवमें इन सब कोठियोंका मालिक एक अंग्रेज़ व्यापारी-कम्पनी थी। लन्दन शहरके कई बड़े-बड़े नामी-गिरामी सौदागरोंने मिलकर साझेदारीमें यह कम्पनी खोली थी। सन् १६०० ई० में इंगलैण्डकी रानी एलिजाबेथने इन्हें एक चार्टर प्रदान किया। उसीके बलपर ये लोग दुनियाके पूर्वी भागके व्यापारपर एकाधिपत्य जमानेकी चेष्टामें लगे। पूर्व देशका उन दिनों

ईस्ट इण्डिस नाम था। इसीलिए इस कम्पनीका संक्षिप्त नाम ईस्ट इण्डिया कम्पनी पड़ा।

ईस्ट इण्डिया कम्पनीका हेड क्वार्टर लन्दनमें था। कम्पनीके स्टाक-होल्डर, एक गवर्नर और चौवीस डायरेक्टर तीन-तीन वर्षके अन्तरसे निर्वाचित करते। वे ही लन्दनके इण्डिया हाउसमें वैठे-वैठे चिट्ठी-पत्रीके द्वारा कम्पनीका काम चलाते। वैसे असली काम उन्हें यहाँके अपने कर्म-चारियोंके द्वारा ही चलाना पड़ता।

कम्पनीके डायरेक्टर इन सब कर्मचारियोंका लन्दनसे ही चुनाव कर और काम सौंप अपने जहाज़पर इस देशमें भेजते। यहाँ आकर उन्हें डाय-रेक्टरोंके आदेशानुसार ही चलना पड़ता। लेकिन कार्यक्षेत्रमें उन सभी आदेशोंको मानकर चलना सब समय सम्भव नहीं होता। 'क्षेत्रे कर्म विधी-यते'—यह नियम ही माना जाता जैसा कि सर्वत्र होता है।

तीस हज़ार पाउण्ड अर्थात् उन दिनोंका तीन लाख रुपयेका मूलधन, चार जहाज़ और एक छतवाली छोटी नौका (Pinnace) लेकर सन् १६०१ ई०में ईस्ट इण्डिया कम्पनीका प्रथम वाणिज्य-अभियान शुरू हुआ।

भाग्यकी बलिहारी! कई वर्ष जाते-न-जाते कम्पनीका व्यापार खूब ज़ोरोंमें बढ़ा। ईस्ट इण्डिया कम्पनीका स्टाक खरीदनेके लिए इंगलैण्डके राजा-रजवाड़े, अमीर-उमराव तथा धनी सेठ-सौदागरोंमे होड़-सी लग गई। कम्पनी दिनोंदिन फूलती-फलती गयी।

अंग्रेज़ोंने सन् १६५० ई० में हुगलीमें आकर एक कोठी बनवा साधा-रण भावसे ही पहले-पहल अपने व्यवसायका श्रीगणेश किया।

इस समय एक सुविधा हो गयी थी। शाहजहाँका मँझला लड़का शुजा उस समय बंगालका गवर्नर था। राजमहलमें रहकर वह शासन करता। उसीके दरबारमें गेब्रियल बाउटन नामक एक अंग्रेज़ डाक्टरका खूब सम्मान था। नवाबका बन्धुत्व पाकर उनकी कृपासे डाक्टर साहब राजमहलमें बड़े आरामसे रहते। इन्होंने शुजासे बहुत कह-सुनकर सन् १६५२ ई० में

अंग्रेज़ोंके लिए एक सनदकी व्यवस्था करवा दी जिससे अंग्रेज़ लोग वार्षिक तीन हज़ार रुपया देकर बंगालमें निर्विघ्न व्यापार चला सकें।

अंग्रेज़ लोगोंने धीरे-धीरे हुगलीसे प्रारम्भ कर मालदह, पटना, ढाकामें अपनी कोठी बनवा ली।

लेकिन औरंगज़ेबके शासन कालमें प्रारम्भसे ही अंग्रेज़ लोग हुगलीके फौजदारके कोपभाजन बन गये थे। अंग्रेज़ोंको वह देख नहीं सकता था। वे उसकी आँखोंके काँटे थे। रोज़ कुछ-न-कुछ लेकर खटपट होती ही रहती।

इसका एक और भी कारण था। दूसरे-दूसरे यूरोपीय व्यापारियोंके समान अंग्रेज लोग मुग़लोंके साथ मिल-जुलकर नहीं रह पाते। अंग्रेज लोग न्यायोचित टैक्स आदिके अलावा और कुछ देना नहीं चाहते। आजकलके समान उस समय भी ऊपरसे कुछ दिये विना काम नहीं चलता था। इसके अलावा अंग्रेज़ोंकी स्वाधीन प्रकृति, स्वच्छन्द गतिविधि, गम्भीर व्यवसाय-बुद्धि—ये सभी उस कालके अधिकारी वर्गकी आँखोंमें खटकनेवाली चीज़ें थीं। इसपर भी अंग्रेजोंमें जाने कैसा एक अलग-अलग रहनेका भाव था। बराबर ही कैसा एक नाक-भौं सिकोड़नेका स्वभाव था। लगता जैसे कहना चाहते हैं मुझे स्पर्श न करो, अलग रहो।

बंगालके तत्कालीन गवर्नर मीर जुमला विदेशी वणिकोंके प्रति खूब सदय नहीं होनेपर भी और अन्य ज़रूरी कार्योंमें व्यस्त रहनेके कारण अंग्रेज़ोंके ऊपर उतनी नजर नहीं रख सके। सन् १६६३ ई० में मीर जुमलाकी मृत्युके बाद औरंगज़ेबके मामा शाइस्ता खाँ बंगालके नवाब होकर आये।

मीर जुमलाके समान शाइस्ता खाँ अंग्रेजोंसे प्रतिवर्ष तीन हज़ार रुपया वसूल कर पहले-पहल बहुत दूर तक चुपचाप ही रहे। क्योंकि शुरूमें उनके हाथमें भी बहुतसे काम थे। उनमें प्रधान था पोर्तुगीज-जल-दस्युओंको ठगना। इसीलिए जब अंग्रेज़ोंने शाइस्ता खाँसे उनके कर्मचारियोंके विरुद्ध

शिकायत की कि वे समय-असमय अंग्रेज़ोंका माल रोकते हैं, उनके व्यवसाय-में बाधा पहुँचाते हैं, जब तब रुपया माँग बैठते हैं, तब कृपाकर उन्होंने [illegible]ा हुक्म दिया कि जिसमें पहलेकी नाईं ही स्वच्छन्द भावसे व्यापारकर अंग्रेज़ अपना भोजन जुटा सकें। कर्मचारियोंसे उन्होंने कह दिया कि वे अनुचित ढंगसे अंग्रेज़ोंके पीछे न लगें।

लेकिन अधिक दिन यह नहीं चल पाया। अंग्रेज़ोंके लिए तब बुरा हुआ जब दक्षिणमें शिवाजीसे पराभूत होकर शाइस्ता ख़ाँ दुबारा बंगालके नवाब होकर आये।

सरकारी ख़ज़ानेकी पूर्ति करनेके बाद जो कुछ बचता उससे शाइस्ता ख़ाँ जैसे आदमीकी नवाबी नहीं चल पाती। कहा जाता है कि उनका दैनिक ख़र्च ही पचास हज़ार रुपये था। नवाब साहबको रुपया जमा करने-की भी बुरी बीमारी थी। फलस्वरूप जो होनेका था वही हुआ। अर्थात् रुपयेकी आमदनी करनेके जितने तरीक़े हो सकते हैं, उनमेंसे एकको भी उन्होंने नहीं छोड़ा। उससे प्रजा मरे या जिये, उससे उनका कुछ आता-जाता नहीं।

इसका परिणाम यह हुआ कि लोगोंके हाथमें इतना कम रुपया रह गया कि अत्यन्त ही कम दाममें चीज़ें बिकने लगीं। चावलका दाम रुपयेका आठ मन हो गया। शाइस्ता ख़ाँ जब बंगालकी गवर्नरी छोड़कर ढाकासे दिल्ली गये तो शहरके पश्चिमी दरवाज़ेसे होकर गये और उस दरवाज़ेको ईंटसे बन्द करवाते गये। गर्वके साथ बन्द दरवाज़ेके ऊपर लिखवा दिया कि जितने दिन चावल फिर रुपयेका आठ मन न हो जाय बादका कोई भी गवर्नर इस दरवाज़ेको न खोले। सन् १७४० ई० सरफराज़ जब बंगालके नवाब हुए तब वह गेट फिर एक बार खोला गया था। उस समय चावल-का दाम उसी प्रकारसे गिर गया था।

किन्तु इसमें शाइस्ता ख़ाँके लिए गर्व करनेको कुछ भी नहीं था। एक तो पूर्वी बंगाल चावलकी ही आढ़त है और उसपर लोगोंके हाथ ख़रीदनेके

लिए पैसे नहीं थे । इसलिए इकनामिक्सके नियमके अनुसार चीज़ों[illegible]
सस्ता होता ही । इसमें कुछ भी आश्चर्यकी बात नहीं । [illegible]

बंगाल प्रान्तसे जानेके समय शाइस्ता खाँ इस प्रान्तसे अड़तीस [illegible]ख रुपये चूस कर ले गये थे । यह हम लोगोंको एक्सप्लेयटेशन नहीं म[illegible]गन होता । क्योंकि शाइस्ता खाँ तो इसी देशके थे । बंगालको पेरकर यहाँसे रुपया लेकर सिर्फ दिल्लीमें ही तो जाकर जम गये । देशका रुपया देशमें ही तो रह गया !

विदेशी व्यापारियोंका माल रोक रखने, उनको भय दिखानेके साथ-ही-साथ मजेमें दो पैसे वसूल किये जा सकते हैं । ऐसी सुविधा क्या सहज ही छोड़ी जा सकती है ? इसीलिए रोज़ ही एक-न-एक उत्पात अंग्रेज़ोंके सर-पर होता ही रहता । अंग्रेज़ोंके हाथमें उस समय न ढाल थी, न तलवार । वे बाध्य होकर घूस देते और बीच-बीचमें फौजदारके अत्याचारकी बात चिट्ठीमें लिखकर शाइस्ताखाँ तक पहुँचाते । ढाका जाकर हुगलीकी अँग्रेज़ी कोठीके अध्यक्ष विलियम हेजेने नबावके पास स्वयं दरबार किया किन्तु उसका कोई फल नहीं हुआ ।

अंग्रेज़ोंने तर्क उपस्थित किया, सुलतान शुजा ही तो साल-साल तीन हज़ार रुपया महसूल लेकर व्यवसाय करनेकी अनुमति दे गये हैं । शाइस्ता खाँने उसके जवाबमें कहा कि सुलतान शुजाने जो सनद दी थी वह बाद-शाही फ़र्मान तो नहीं है । इसलिए वे जितने दिन बंगालके गवर्नर थे उतने दिनों तक उनकी सनद भी कारगर थी । लेकिन बादमें जो लोग गवर्नर होकर आये वे लोग शुजाकी सनदको क्यों मानेंगे ? इसके अलावा, शुजाके समय तुम लोगोंका व्यापार ही कितना था और इस समय क्या हो गया है, बतलाओ तो ?

लेकिन अँग्रेज़ोंने अपनी ज़िद नहीं छोड़ी । 'बड़े लोगोंकी एक बात'के समान वे यही कहते रहे, व्यापारमें वृद्धि हो या न हो लेकिन महसूल (कर)

[illegible]कायन देंगे बस वही तीन हज़ार रुपये। सुलतान शुजा सनद दे गये हैं। में [illegible] पलटा जवाब दिया। अतएव विवाद मिटा नहीं।

[illegible] हुगलीमें एक दिन झगड़ा चरमपर पहुँच गया। सुलगते-सुलगते एक अंग्रे[illegible]हाथापाईकी नौवत आ पहुँची। उस समय हेजेस साहव इस देशमें नहीं थे। उनके वाद और कई साहव प्रधान होकर आये गये। जोव चारनक उन दिनों हुगलीमें कम्पनीके एजेण्ट थे। यह सन् १६८६ ई० की वात है।

जोव चारनक इसके वहुत पहले अर्थात् सन् १६५६ ई० में पहले-पहल इस देशमें आये। प्रारम्भमें थोड़े दिन कासिम वाज़ारमें रहनेके वाद उनकी वदली पटनेकी अँग्रेज़ी कोठीमें हुई। इसके वाद कासिम वाज़ार कोठीमें एकदम प्रधान होकर आये।

कासिम वाज़ारमें उनके रहते-रहते वहाँके दलालोंके गुमाश्ताओंने वकाया रुपयेके लिए कम्पनीपर नालिश की। जोव चारनक तथा कासिम वाज़ार-कोठीके अन्य-अन्य अधिकारियोंके ऊपर चालीस हज़ार रुपयेकी डिग्री हुई। चारनकने ढाकामें अपील की लेकिन वह अपील डिसमिस हो गयी।

तो भी चारनकने रुपये नहीं दिये। हुक्म हुआ, उन्हें ढाका जाना पड़ेगा। ढाका जानेका मतलव था, जव तक रुपया वसूल न हो जाय तव तकके लिए क़ैद रहना। चारनक यह अच्छी तरह जानते थे। ढाका न जाकर वे चुपकेसे हुगली भाग आये। कासिम वाज़ार आकर मुगल फौजने वहाँकी अँग्रेज़ी-कोठीपर दखल जमा लिया।

इस देशमें वहुत दिन रहते-रहते जोव चारनक अच्छी तरह समझ गये थे कि इस देशमें खूव ज़ोर-व्यवसाय चलानेके लिए केवल मुगलोंके सनद-फ़रमानके ऊपर निर्भर करनेसे नहीं चलेगा। मुगलोंके साथ जितने भी शर्तनामे क्यों न हों कामके समय वे सभी वेकार हो जाते हैं। अपने पैरों-पर खड़े हुए विना कोई चारा नहीं है। वैसा नहीं करनेपर एक-न-एक

दिन सारा व्यवसाय-वाणिज्य बन्द होकर ही रहेगा। यहाँसे विस्त[illegible]
हीं पड़ेगा।

जीव चारनकने यह भी समझ लिया था कि अपने पैरोंपर खड़े [illegible]
एक मात्र उपाय है, अपनी ताक़त। सैन्यबल बिना बढ़ाये और उस [illegible]
ही एक मज़बूत क़िला बिना बनाये, सब राखमें घी ढालने जैसा होगा।
अपने मनोभावको उन्होंने छिपाया नहीं खुल्लम-खुल्ला उन्होंने सब कुछ
कम्पनीके डायरेक्टरोंको बतला दिया।

कम्पनीने लिखा, तब तक आस-पास जितने भी अँग्रेज़ हैं उन्हें हुगलीमें जमा किया जाय। और क़िला बनानेकी बात? वह तो रातोरात मुगलों-की आँखोंके सामने उठाया नहीं जा सकता। वे बादमें अच्छी तरह समझ-बूझकर इस विषयमें अपनी राय देंगे।

धीरे-धीरे चारों ओरसे अँग्रेज़ सैनिक थोड़ा-थोड़ा कर हुगलीमें आकर इकट्ठा होने लगे। शीघ्र ही खबर ढाकामें नवाबके पास पहुँची। सुनकर शाइस्ता खाँ भी निश्चिन्त बैठे नहीं रहे। बारह हज़ार सैनिकोंकी एक पल्टन उन्होंने हुगली भेज दी। पल्टन आते देख फ़ौजदार अब्दुल गनी साहबका मिजाज़ एकदम सातवें आसमानपर चढ़ गया। गर्म होकर उन्होंने हुक्म जारी कर दिया कि अँग्रेज़ अब और यहाँ व्यापार नहीं कर सकते। केवल इतना ही नहीं, बाज़ारके सभी दुकानदारोंको बुलाकर उन्होंने मना कर दिया कि वे अँग्रेज़ोंके हाथ कोई भी चीज़ नहीं बेचें।

एक दिन सवेरे उठकर तीन अँग्रेज़ छोकरे हुगली बाज़ारमें खानेकी चीज़ खरीदने जाकर देखते हैं कि कोई भी दुकानदार उनके हाथ कुछ भी नहीं बेच रहा है और इसपर न कुछ कहना न सुनना, अचानक कोतवाल-के आदमी उन्हें धर-पकड़ एकदम फौजदारके पास ले जाकर हाज़िर करने-का उपक्रम करने लगे। खबरका सुनना था कि अँग्रेज़ सैनिक जो जहाँ थे हू-हू कर निकल पड़े। उसके बाद जो होता है वही हुआ। मारकाट, खून खराबी।

[illegible]ों ओरसे गोलाबारी हुई। अँग्रेज़ी पल्टनके गोलेसे अब्दुल गनी [illegible]काय[illegible] आँखोंमें अँधेरा छा गया और अधिक विलम्ब न कर छद्म वेशमें [illegible] में बा[illegible]वपर चढ़ हुगली छोड़कर चम्पत हो गये। चारों ओर घास-[illegible] हु[illegible]र आगसे धू-धूकर जल उठे। यह अक्तूबर, सन् १६८६ ई० की अंग्रेज़[illegible] [illegible]ता है।

इन छोटे-मोटे युद्धोंमें अँग्रेज़ोंके जीतनेपर भी जोव-चारनकने इसके बाद और अधिक दिन हुगलीमें रहना किसी भी प्रकारसे ठीक नहीं समझा। उनका मन मुगलोंकी नज़रके ठीक सामने रहना बहुत दिनोंसे स्वीकार नहीं कर रहा था। बहुत दिनों पहलेसे ही हुगली छोड़कर चले जानेका उनका संकल्प था। इसके अलावा, उनके सुननेमें आया कि शाइस्ता खाँने प्रण किया है कि अँग्रेज़ जहाँसे आ घुसे थे वहीं अर्थात् उसी समुद्रमें ही उन्हें फिर वापिस कर देनेके बाद ही वे और अन्य काम करेंगे।

इसके बाद दो मास बीतते-न-बीतते लाव-लस्कर, माल-असबाब सब कुछ हुगलीमें ला इकट्ठा कर जोव चारनक जहाज़पर चढ़ हुगली छोड़ चल पड़े। उनकी इच्छा थी कि एकदम बालेश्वर पहुँचकर वहाँकी अँग्रेज़ी-कोठीमें ही आश्रय लेंगे। लेकिन रास्तेमें सुतोनुटि ग्राम मिला और वे वहीं उतर पड़े।

: ४ :

सुतोनुटि-हाटके पास ही मिट्टीका घर बना उसपर फूसका छप्पर डाल जोव चारनक और उनके सभी आदमी वहीं रहने लगे।

सन् १६८६ ई० के दिसम्बर महीनेमें यहीं रहकर उन लोगोंने क्रिसमस मनाया और इसीके बीच चिट्ठी-पत्रीके द्वारा शाइस्ता खाँके साथ झगड़ेके निपटारेकी चेष्टा भी चलने लगी। लेकिन फल कुछ नहीं होता। शाइस्ता खाँ बीच-बीचमें आश्वासन देते अवश्य, किन्तु अन्तमें कुछ भी नहीं मानते।

जोव चारनकने सुतोनुटि छोड़ दिया। जाते समय क्रोधसे ग[illegible] पारके शाल्केके जितने भी सरकारी नमकके गोदाम थे उन्हें जल[illegible] इसके वाद शिवपुरके थाना-दुर्गको भी ज़वर्दस्ती ले लिया।

अन्तमें नदीके रास्ते चलते-चलते क़रीव सागर संगमपर हि[illegible] जाकर रुके। सर्वत्र यह वतला गये कि वे भी कुछ ऐसे-वैसे नहीं है[illegible] छोड़नेपर वे भी कुछ कम नहीं कर सकते। किन्तु इतनी दूर हिजलीमें आनेपर भी अंग्रेज़ लोग स्थिर नहीं वैठ सके। यहाँ भी मुग़ल फौज इनके पीछे आ धमकी। वीचमें एक अच्छा खासा छोटा-मोटा युद्ध हो गया। इसपर एक और कठिनाई थी। हिजलीकी जलवायु नरक-कुण्डके समान थी। प्लेगके चूहोंके समान अंग्रेज़ लोग पटापट मरने लगे। चारनक साहवने कहा, और नहीं, वहुत हो गया। अव यहाँसे चलें।

उस ओर शाइस्ता ख़ाँ भी जैसे कुछ नरम पड़े। उन्होंने चट अंग्रेज़ोंको लौटनेकी अनुमति दे दी। चारनक फिर सुतोनुटि लौट जानेके लिए जहाज़-पर चढ़े। वीच रास्तेमें उलुवेड़ेमें उतरकर चारों ओर देखने-सुनने लगे कि जगह कैसी है, चल सकतो है या नहीं। एकदम गयी-गुज़री जगह थी। कहीं कुछ भी नहीं था। केवल उल्लुओंका निवास स्थान था। अगर लक्ष्मी-वाहन उलूक होता तो भी एक वात थी। वहाँ तो केवल कुछ जंगली उल्लुओंका अड्डा था।

प्रायः एक वर्ष इधर-उधर घूम-फिरकर जोव चारनक फिर उसी सुतो-नुटिमें लौट आये। वहाँ उतरते ही अपने दो साथियों, चार्ल्स आयर तथा रोज़र व्राडिलको ढाका भेज दिया। नवावको समझा-वुझाकर यदि वे व्यवसायका कोई रास्ता निकाल पाते।

लेकिन सव व्यर्थ गया। आयर तथा व्राडिलके नवावसे वातचीत पूरी करके आनेके पहले ही कैप्टेन हीथ कई जहाज़ लेकर सुतोनुटिमें आ पहुँचे।

कप्तान साहव एक तो खप्ती और तेज़ मिजाज़के आदमी थे। उसपर कम्पनीके डाइरेक्टरोंने उन्हे जोव चारनककी जगह एजेण्ट नियुक्त कर भेजा

[illegible] गुप्त रूपसे यह भी कह दिया था कि अगर तुम्हें लगे कि बंगला-
[illegible]रवार ठीक चल निकला है और जोव चारनक खूब अच्छी तरह
[illegible]ठ गया है, तो और कुछ कहनेकी ज़रूरत नहीं है, सीधे यहाँ लौट
[illegible] और वैसा न हो तो चटगाँव शहर दखल कर वहाँ अंग्रेज़ोंको ले
[illegible]ना अड्डा जमाओ।

हीथ साहब जहाज़से उतरते ही सबसे बोले, चलो, चलो। एक रातकी भी देरी उन्हें सह्य नहीं थी। सबको जहाज़में भर एकदम उसी मगोंके मुल्कमें आ धमके। चटगाँव पहुँच, आराकानके राजासे बातचीतके बीच ही अचानक एक दिन कैप्टेन हीथने अपनी राय बदल दीं। फिर बिना रुके जहाज़में सबोंको लेकर सीधे मद्रास आ पहुँचे।

मद्रासमें उस समय अंग्रेज़ोंका खूब जमा हुआ था। वहाँ जोव चारनक एकान्तमें बैठ रात-दिन यही सोचने लगे कि बंगालमें फिरसे कैसे व्यापार चालू किया जाय। लेकिन कुछ भी नहीं हो पाता।

इस बार स्वयं बादशाह औरंगज़ेबके मनमें खलबली मची। अंग्रेज़ोंके व्यवसाय-वाणिज्य बढ़नेके साथ-साथ सरकारी खज़ानेमें भी कुछ आमदनी हो जाती थी। यह आमदनी बन्द हो गई। उस समय बादशाहको रुपयेकी बहुत कमी पड़ गई। पश्चिममें राजपूत, दक्षिणमें मराठे और बीचमें बीजा-पुर-गोलकुण्डाके दो-दो नवाब। आखिरी उम्रमें उन सभीके साथ लगातार युद्ध करते-करते दिल्लीके बादशाह जिनकी स्तुति 'जगदीश्वरो वा' कहकर इस देशके ब्राह्मण कर गये हैं, उनके दौलतखानेसे भी लक्ष्मी 'छोड़े-छोड़े' कर रही है।

इसके अलावा एक और बात थी। मुसलमानोंके मक्का जानेके रास्तेमें पोर्तुगीज़ जलदस्युओंने हज़ करने जानेवालोंके ऊपर बार-बार झपट्टा मार-मारकर उन्हें बिलकुल बेदम कर रखा था। वे अमानुषिक अत्याचार करते। उन्हें रोकनेका कोई उपाय भी नहीं था। इसका कारण यह था कि मुग़लों-की नौ-सेना यूरोपवालोंके सामने नहींके बराबर थी। थी ही नहीं ऐसा भी

कहा जा सकता है। बादशाह औरंगज़ेव बड़ा धूर्त था। उस[illegible]
तरहसे समझ लिया था कि पोर्तुगीज़ जलदस्युओंको ठण्डा क[illegible] एक
मात्र उपाय अंग्रेज़ोंको अपने हाथमें रखना था। [illegible]

बादशाहका संकेत पाकर बंगालके नवाबने अंग्रेज़ोंको बुला भेज[illegible]
समय शाइस्ता खाँ बंगालकी गवर्नरी छोड़कर दिल्ली चले गये थे[illegible] इसलि[illegible]
बाधा देनेवाला और कोई नहीं था। बंगालके नवाब इब्राहीम खाँ थे। व[illegible]
खानदानी घरके थे। इनके पिता अलीमर्दान शाहजहाँके वज़ीर थे जो सभी
अमीर-उमराओंके सिरमौर थे। इसके अलावा इब्राहीम खाँ पढ़े-लिखे,
मौलवी जैसे आदमी थे। वे अत्यन्त शान्तिप्रिय थे। युद्ध-विग्रहकी अपेक्षा
फ़ारसी ग्रन्थ लेकर दिन बिताना ही वे अधिक पसन्द करते।

इब्राहीम खाँने अत्यन्त आदरपूर्वक अंग्रेज़ोंको बंगालमें लौट आनेके लिए
बुला भेजा। उन्होंने व्यवसाय-वाणिज्यकी सभी प्रकारकी सुविधाएँ उन
लोगोंको प्रदान कीं। अंग्रेज़ लोग भी लिख गये हैं कि इब्राहीम खाँके
समान न्यायी, दयालु और सभ्य नवाब उन लोगोंने इसके पहले कभी नहीं
देखा था।

कुछ दिनोंके बाद औरंगज़ेब बादशाहके वज़ीर आसाद खाँने सील-मुहर
लगाकर बादशाही फ़र्मान भेज दिया। कुल मिलाकर सालाना तीन हज़ार
रुपया सरकारी दफ़्तरमें दाखिल कर अंग्रेज़ लोग फिर सब जगह बिना
किसी रोक-टोकके व्यवसाय चला सकेंगे। और कुछ नहीं देना होगा।

सन् १६९० ई० के २४ अगस्तको जोब चारनकने एक अत्यन्त उमस
भरे दिनकी दुपहरीमें अपने कुछ साथियोंके साथ फिर सुतोनुटि घाटपर
आकर लंगर डाला। इस बार मैदानमें आ उन्होंने विलायती झंडा उड़ा
दिया। आसपासके गाँवके लोग उन सफ़ेद चेहरों, लाल केश, अद्‌भुत ढंग-
से कसे-क़साये कुर्ता-कुर्तीसे सज्जित तथा चोंगाके समान विचित्र टोपी पहने
हुए लोगोंके कार्य-कलापोंको मुँह बाये देखते रहे। उस समय क्या देशी, क्या

[illegible]कायं[illegible]सीने भी क्या कभी स्वप्नमें भी सोचा था कि धीरे-धीरे एक दिन में वा[illegible] [illegible]यती झण्डा संपूर्ण भारतवर्षमें फहराने लगेगा ?

[illegible]ा हु[illegible] मैदानमें रहना और अधिक दिन नहीं चला। आसमान फाड़कर अंग्रेज़[illegible]। घनघोर वर्षा। किसी तरह भी और नहीं थमती। पिछले साल [illegible]नक[illegible] भी दो-चार मिट्टीके मकान बनवाये थे, वे सभी ढह चुके हैं। [illegible]ारनक अपने साथियोंके साथ फिर नावमें चले आये।

जोव चारनक स्वभावसे ढीले-ढाले, सरल प्रकृतिके होनेपर भी काममें खूब पक्के और होशियार थे। उनके समसामयिक लोगोंने उन्हें अच्छा कह कर भले ही उनकी तारीफ़ न की हो, लेकिन कम्पनीके डायरेक्टरोंके निकट कामकाजी आदमीके रूपमें ही उनकी ख्याति थी। वैसे इस देशमें बहुत दिन रह जानेके कारण यहाँकी आवहवाके गुणसे चारनक बहुत कुछ इस देशवालों जैसा हो गये थे। बीच-बीचमें गर्म होकर लोगोंके ऊपर बहुत अत्याचार भी करते।

सियालदह पहुँचनेके पहले जो बहुबाज़ारका रास्ता है वहाँ किसी समय जैसे डैना फैलाये एक विशाल वटवृक्ष था। कहा जाता है कि उसीकी छाया-में बैठकर एक बड़े गड़गड़ेसे तम्बाक़ूका क़श लेते-लेते जोव चारनक व्या-पारियोंको लेकर दरबार करते। खरीद-बिक्रीकी बातचीत उसी वटवृक्षवाले बैठकखानेमें बैठे-बैठे चलती।

एक बहुत पुराना विशाल वटका पेड़ बहुबाज़ार स्ट्रीट और सर्कुलर रोडकी मोड़पर दिक्पालके समान खड़ा रहकर पुरानी घटनाकी अवश्य ही याद दिलाता था। सन् १७९९ ई० में जब बहुबाज़ारवाले रास्तेको चौड़ा करनेकी आवश्यकता हुई तब उस वटवृक्षको काट दिया गया।

लेकिन एक बात मनमें आती है। सुतोनुटिके हाटखोलाके निकट ही एक वटवृक्षके रहते जोव चारनक इतनी दूर सियालदहके पास बैठकखाना क्यों करने जाते ? हाटखोलाका वटवृक्ष अवश्य ही अब नहीं है लेकिन उसका नाम अभी भी रह गया है। यह वही 'वटतला' है जहाँसे पुरानो बँगलाकी

पुस्तकें प्रकाशित होतीं। और जिन्हें हम लोगोंके लिए वचपन[illegible]
मनाही थी। वादमें चलकर इसी स्थानपर आठचाला मंडपके नी[illegible]
करनेवालोंका अड्डा जमता।

इसके वहुत पहले जव जोव चारनक पटना कोठीमें मुंशी थे त[illegible]न,
इस देशकी एक लड़कीसे शादी की थी। कहानी प्रचलित है [illegible]
एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री अपने मृत स्वामीके साथ सती होने जा रही थी।
यह देखकर जोव चारनक अपने दल-वलको ले जाकर उस स्त्रीके साथवालों-
को भगाकर उसका उद्धार कर उसे घर ले आये। वादमें उसे ईसाई धर्ममें
अन्तर्भुक्त कर ईसाई मतसे विवाह करके आनन्दसे गृहस्थी चलाने लगे।

उसी स्त्रीसे जोव चारनकको तीन कन्याएँ हुईं। वे सभी खान्दानी
अंग्रेज़ोंके घरमें गयीं। वहुत वड़े-वड़े कुलीन अंग्रेज़ अमीर-उमरावोंकी वंश-
परम्पराकी खोज-ढूंढ़ की जाय तो देखा जा सकता है कि उनके पूर्व-पितामहों-
का रक्त खूब विशुद्ध नहीं है। अनेक स्थलोंमें इस देशका रक्त मिश्रित
हुआ है।

१० जनवरी, सन् १६९३ ई० को सुतोनुटिमें ही जोव चारनककी
मृत्यु हुई। वर्तमान काउन्सिल हाउस स्ट्रीट और हेस्टिंगस स्ट्रीटकी मोड़पर
जो सेण्ट जोन्स चर्च है उसे लोग चलती भाषामें पाथुरे गिर्जा (पत्थरका
गिर्जा) कहते हैं। उस कालके गौड़के पुराने मकानके पत्थरको तोड़कर
इस गिर्जाका विचला हिस्सा तैयार हुआ था, इसीलिए इसका ऐसा नाम
पड़ा। उसी स्थानपर कलकत्ता पहले-पहल आनेवाले अंग्रेज़ोंका कब्रिस्तान
है। उसीके एक किनारे जोव चारनक दफ़नाये गये हैं।

उसी एक ही कब्रिस्तानमें उनकी तीनों लड़कियाँ भी दफ़नाई गई हैं।
वड़ी लड़की मेरी, सर चार्ल्स आयरकी पत्नी थी। मँझली लड़की एलिजावेथ,
विलियम वाउरिजकी स्त्री थी। छोटी लड़की कैथरिन, जोनाथन ह्वाइटकी
पत्नी थी।

जोव चारनक मृत्युके पहले अपने देशी कर्मचारी वदलीदास और दो

[illegible]कायस्थ श्याम तथा दुर्लभ को ध्यानमें रख अपनी वसीयतमें सरकार में बा[illegible] एक सौ रुपया और दोनों नौकरोंको बीस-बीस रुपये दानकर गये [illegible]ा हु[illegible] शेखर नामके एक वंगाली उनके चिकित्सक थे। इन्होंने मृत्युके अंग्रेज[illegible]न्हें भी वहुत कुछ दिया था।

सन् १६९४ ई० में जोव चारनकके दामाद सर चार्ल्स आयर जव वंगालमें अंग्रेज़ी-कोठीके प्रमुख थे तव उन्होंने जोव चारनककी क़ब्रपर आठ-कोनेवाला एक पक्का क़ब्र-घर वनवा दिया था। वह घर अभी भी वहाँ मौजूद है। यही कलकत्ता शहर की सवसे पुरानी पक्की इमारत है जो अभी तक टिकी हुई है।

: ५ :

सुतोनुटिमें आकर अंग्रेज़ोंने प्रथम जिस स्थानको अपना वासस्थान वना लिया था वह वर्तमान समयमें शहरके उत्तरी भागके खास देशी मुहल्लेका हाट-खोला अंचल है।

वहाँ कुछ दिनों रहनेके बाद ही अंग्रेज़ोंने समझ लिया कि जोव-चार-नक उन्हें वहुत खराब जगहपर नहीं ले आये हैं। वह स्थान मलेरियाका डिपो होनेपर भी चारों ओरसे वहुत ही एकान्त था।

पूरवकी ओर घना जंगल और जलसे डूवी हुई नीची भूमि थी। उस तरफके साल्ट लेकको पारकर उस ओरसे आ किसीके आक्रमण करनेकी सम्भावना नहीं थी। पश्चिममें गंगा थीं। मुग़लोंमें वह दम-खम नहीं कि जलमें अंग्रेज़ोंके साथ लड़ाई करें। दक्षिणमें आदि गंगाको पार करते ही फिर भले लोगोंकी वस्ती नहीं है। उस अंचलमें मुग़लोंकी वैसी कोई वड़ी चौकी भी नहीं थी। रह गई उत्तर दिशा। उसे किसी प्रकारसे एक वार सँभाल लेनेपर और कोई भय नहीं। इसके अलावा नदीपर तो जहाज़ हैं ही। ऐसा-वैसा कुछ होनेपर उनपर चढ़ समुद्रकी ओर निकल पड़नेमें कितनी देर लगेगी?

सुविधा तो थी, लेकिन वहाँ आकर बैठ जानेका कोई [illegible] अधिकार अंग्रेज़ोंको नहीं था। वैसे ही आकर वे वहाँ जम गये। पर ज़मीनपर वास करनेका कोई भी अधिकार उन्हें नहीं था। यहाँ [illegible] वे किसीके अस्थायी रैयत भी नहीं थे। वैसे उस जंगल-झाड़में [illegible] रहनेपर कोई बाधा देने नहीं आता, कोई बोलनेवाला नहीं था, एक कुशल था। किन्तु इस हालतमें सिर ऊँचा कर, बेधड़क घुमा-फिरा तो नहीं जा सकता। बराबर ही जैसे चोरके समान ऐसे-वैसे रहना पड़ता है।

केवल इतनी हो सुविधा है कि सुतोनुटि हाट बिलकुल पास है। और सेठ-साहूकार बगलके गाँवके हैं। इसीलिए खरीद-बिक्री, व्यवसाय-वाणिज्य एकदम ढीला नहीं पड़ गया।

इस प्रकार रहते-रहते एक दिन मद्रासके कम्पनीके कमिश्नर जेनरल सर जान गोल्डस्बरा सुतोनुटिमें इन्सपेक्शनके लिए आये। हालत देखकर वे दंग रह गये। कहाँ दो घड़ी खड़े होंगे, बैठेंगे, इसका ठिकाना नहीं। फ्रान्सिस एलिस नामका एक अत्यन्त अकर्मण्य, गया-गुज़रा व्यक्ति जोब-चारनककी मृत्युके बाद सुतोनुटिमें अंग्रेज़ी-कोठीका प्रधान था। कोठीके नामपर तो वहीं कई फूसके मकान थे। उसीमें मूल्यवान् माल, हिसाबकी बही और खरीद-बिक्रीके रुपये रखने पड़ते। अंग्रेज़ोंमें कोई उसी तरहके फूसके मकानमें रहता, कोई तम्बू गाड़ कर रहता और कोई बिलकुल गंगामें नावपर। कभी-कभी आग लगती और सब जलकर भस्म हो जाता। और फिर नये सिरेसे नींव डालनी पड़ती। कई जो साहब थे वे समस्त दिन बोतलकी-बोतल चढ़ाकर मज़ेमें आँखें बन्द कर नशेमें चूर रहते। और बात-बातमें आपसमें ही खून-खराबी कर मरते।

गोल्डस्बराने चारों ओर घूम-फिर कर खोजते-खोजते पाया कि सुतो-नुटिके दक्षिणमें कलकत्ता ग्रामके पास थोड़ी-सी ज़मीन एक ऊँचे टीले जैसी थी। उससे लगी हुई गंगा है। पूरबकी ओर एक बड़ा तालाब है। उसको थोड़ा-बहुत ठीक-ठाक कर देनेपर सालभर उसका पानी काममें लाया जा

[illegible]। उसीके किनारे जमींदार सावर्ण-चौधुरियोंकी पक्की कचहरी में [illegible] खरीद लेनेपर माल-असवाव रखनेका झंझट दूर हो जायगा।

[illegible]ड्स्वराने रातोरात एलिसको वर्खास्त कर जोव-चारनकके दामाद [illegible] आयरको मद्राससे बुला भेजा। सावर्ण-चौधुरियोंकी कचहरीको तव-[illegible] भाड़ेपर लेकर वहाँ माल-असवाब उठाकर लाया गया। उसके वाद वैठे-वैठे गोल्ड्स्वरा साहवने एक क़िला बनानेका प्लान वना लिया।

लेकिन विशेष-कुछ करनेके पहले ही मद्राससे आनेके तीन महीने वाद ही कलकत्तेकी आवहवाके फलस्वरूप गोल्ड्स्वराको वहीं मिट्टीकी शरण लेनी पड़ी। उस समय उनकी पसन्द की हुई जगहके दक्षिण-पूर्व कोनेमें एक वुर्ज़ और उसे ही घेर कर केवल एक मिट्टीकी दीवार वनी थी।

चार्ल्स आयर वंगालकी अंग्रेज़ी-कोठीके प्रधान होकर आनेपर गोल्ड्स्वरा-के प्लानको काममें लगानेकी प्राणपण चेष्टा करने लगे। लेकिन वहुत दूर तक अग्रसर नहीं हो सके। वरावर भय बना रहता कि बात कहीं नवाबके कानोंतक नहीं पहुँच जाय। वैसा होनेपर फिर सव समेट-वटोरकर उठ जाना पड़ेगा। क्योंकि जिस ज़मीनपर वे लोग रहते थे, उसपर उनका हक़ अभी भी पक्का नहीं हुआ था। और उन दिनों कोठा आदि बनाने अथवा क़िलेका निर्माण करने, यहाँ तक कि एक टुकड़ा ज़मींदारी खरीदने-के लिए भी सरकारी हुक्म मँगा लेना पड़ता था।

क्या करें, क्या करें यह जल्पना-कल्पना चल ही रही थी कि एक मौक़ा मिल गया। वर्तमान मेदिनीपुर जिलाके घाटाल सव डिविजनमें चन्द्रकोना-के पास उन दिनों बेतुया नामका एक जमींदारी परगना था। उसका तालुकेदार शोभासिंह था। सन् १६९५ ई० के वीचोवीच यह शोभासिंह अचानक विद्रोही हो गया और आसपासके गाँवोंमें लूटपाट करने लगा।

बर्द्धमानके राजा कृष्णरामने शोभासिंहको रोकनेके लिए युद्ध किया लेकिन हार गये और उसके हाथों मारे गये। युवराज जगतराय ढाका राजधानीमें भाग कर गये और अपने प्राणोंकी रक्षा की। शोभासिंहने

वर्द्धमानमें आकर राजमहलको दखल कर लिया तथा रानी और [illegible] कन्याओंको वन्दी बना लिया। इसके वाद अपनेको राजा कहक[illegible] ओर प्रचार करने लगे। [illegible]ठव

इधर ढाकामें बैठ प्रायः सत्तर वर्षके वृद्ध नवाव इब्राहीम खाँ फ़[illegible] ग्रन्थोंको पढ़नेमें लगे तो लगे ही रहे। उन्होंने सोचा कि उस तरहके एकाध विद्रोह तो सव समय लगे ही रहते हैं। दो दिनोंके वाद फिर अपने-आप ही सव ठण्डा होकर ठीक हो जाता है।

उधर विना वाधा पाये शोभासिंह लूटमार करते-करते विलकुल हुगली-के फ़ौजदारके दरवाज़े तक आ पहुँचे। शोभासिंहका दल उस समय खासा भारी था। कटकसे पठान सरदार रहीम खाँ उनसे आ मिला था।

: ६ :

विद्रोहियोंके उत्पातसे वादमें कहीं व्यापार नष्ट न हो जाय, इस भयसे विदेशी व्यापारियोंने—अँग्रेज़, डच और फ्राँसीसी—नवाव इब्राहीम खाँसे अनुमति माँगी कि आत्मरक्षाके लिए अपने-अपने इलाक़ेमें एक-एक क़िला वनानेका जिसमें उन्हें हुक्म मिले।

नवावने कोई स्पष्ट उत्तर नहीं दिया। सादीके गुलिस्ताँके शेर पढ़ते-पढ़ते केवल इतना बोले, 'तुम लोग स्वयं जिस प्रकारसे हो सके अपनी रक्षा करो।'

विदेशियोंने उनकी वात अच्छी तरह नहीं समझ यह सोचा कि नवाव वोले, तथास्तु। अत्यन्त उत्साहसे अपने-अपने स्थानपर एक-एक दुर्ग उन्होंने वना डाला।

अँग्रेज़ोंका दुर्ग ठीक उसी स्थानपर वना जिस स्थानको कई वर्ष पहले गोल्ड्स्वरा साहव स्वयं देख-सुनकर पसन्द कर गये थे। उसका वर्तमान चिह्न है डलहौजी स्क्वायरके पश्चिमी किनारेका एक अंश। इसीके भीतर

[illegible]में कोयला घाट और उत्तरमें फेयर्ली प्लेस। इस समय उस स्थान-में [illegible] हैं जेनरल पोस्ट आफिस, कलकत्ता कलेक्टोरेट, कस्टम्स हाउस [illegible] र्न रेलवेका दफ़्तर।

अंग्रेज़ [illegible] पूर्व और पश्चिम दोनों ओरकी सीमा अभी भी प्रायः वही है। पूर्वमें वही आदि कालकी लाल दीघी है। पश्चिममें गंगा हैं। तबसे वह गंगा इस समय और भी पश्चिममें हट गई हैं। उस स्थानपर इस समय स्टैण्ड रोड है।

कलकत्तेमें यहीं अंग्रेज़ोंका पहला क़िला बना। उस समय इंगलैण्डके बादशाह विलियम दि थर्ड थे। उन्हींके नामपर इसका नामकरण हुआ, फोर्ट विलियम। इसके बहुत बाद यद्यपि क्लाइवने गढ़के मैदानमें और भी एक बड़े क़िलेका आरम्भ किया था। फिर भी फोर्ट विलियम नाम अंग्रेज़ोंके शासन कालके अन्त तक बना रहा।

नामसे फोर्ट होनेपर भी कामके लिए विशेष कुछ नहीं था। उस समय भी ऐसा नहीं था कि पाँच आदमियोंको बुलाकर दिखाया जाय। मिट्टीकी दीवारसे घिरे हुए कई कच्चे-पक्के गुदाम थे। उसीके चारों ओर चार बुर्ज़ थे। और बुर्ज़के ऊपर दो तोपें बैठाईं गई थीं—बस। तो भी यही भविष्यत् कालके ब्रिटिश पराक्रमका प्रतीक था।

नवाब इब्राहीम खाँ भले ही निर्लिप्त भावसे किताब पढ़ते रह सकते थे लेकिन बादशाह औरंगजेब इन सब बातोंमें बड़ा सतर्क था। बात इतनी दूर तक चली गई है यह सुनकर उन्होंने इब्राहीम खाँको बंगालके नवाबके पदसे बर्खास्त कर दिया और अपने नाती सुलतान अजीमुद्दीनको जो बादमें अजीमुस्सान कहलाये, बंगालका गवर्नर बनाकर भेजा।

सुलतान अजीमुद्दीनके बंगाल पहुँचनेके पहले ही डचोंने अपनी तोपोंकी मारसे विद्रोहियोंको हुगलीसे भगा दिया था। इब्राहीम खाँका पुत्र, ज़बर्दस्त खाँ उन लोगोंसे लड़ते-लड़ते उन्हें ठेलते हुए ले जाकर चन्द्रकोनांके जंगलमें वापिस कर दिया।

अजीमुस्सानने वर्द्धमानमें आकर तम्वू डाला । विद्रोहियोंके द[illegible] में उन्हें वहुत कष्ट नहीं उठाना पड़ा । शोभासिहकी मृत्यु इससे [illegible] हो चुकी थी ।

वही पुरानी घटना । विजय गर्वसे प्रमत्त होकर शोभासिहने व[illegible] की राजकुमारीका धर्म नष्ट करनेका संकल्प किया । यह सुनकर राजकुमारीने मौनका अवलम्वन किया और इसे सम्मतिका लक्षण समझ शोभासिंह जैसे ही उसका आलिंगन करने गये वैसे ही राजकुमारीने अपने वस्त्रमें छिपे हुए एक तीक्ष्ण छुरेको निकालकर शोभासिहकी छातीमें घुसेड़ दिया । इसके वाद उसी छुरेको अपनी छातीमें घुसेड़ उस महिमामयी नारीने पशुके हाथोंसे अपनी इज़्जतकी रक्षा की ।

अन्तमें चन्द्रकोनाके पास विद्रोहियोंका दल बिलकुल हार गया । हमीद खाँ नामका अजीमुस्सानका एक अरवी सेनापति अपने हाथसे रहीम खाँका सिर काटकर ले आया । उस समय जो जहाँ हुआ भागकर अपने प्राण वचाये ।

नवाव वहादुरने खुश होकर सैन्य सामन्तोंको उचित पुरस्कार दिया । ग़रीव-दुखियोंको रुपया वाँटा । इसके वाद मस्जिदमें जाकर नमाज़ पढ़ी और खुदाको धन्यवाद दिया ।

अंग्रेजोंका क़िला जैसे भी हो एक प्रकारसे वना । किन्तु असली काम तव भी वाक़ी था । तवतक भी ज़मीनकी टाइटिल (स्वत्व) ठीक नहीं हुई थी ।

नवाब अजीमुस्सान राजधानी ढाकामें जाड़ोंके पहले जव वर्द्धमानमें वैठे दरवार कर रहे थे, उसी समय उनके पास अंग्रेज़ोंने एक दूत भेजा । प्रार्थना यही थी कि कलकत्तेमें एक टुकड़ा ज़मीन खरीदकर जिसमें वे अच्छी तरह रह सकें, हुज़ूर जिसमें इसके लिए हुक्म दें । अंग्रेज़ोंके दूत खोजा सरहद नामक एक आर्मिनियन सौदागर थे ।

[illegible] -किसीका अनुमान है कि आर्मिनियनोंका एक छोटा-सा समुदाय [illegible] पहले ही कलकत्तेमें आकर रहने लगा था। अवश्य ही उनमेंसे [illegible] लोग या तो ढाका या हुगलीके पास चुँचुड़ामें रहते। आर्मिनियन अंग्रेज [illegible] सके बहुत पहलेसे ही इस देशमें व्यापार करने लगे थे। वे लोग [illegible] देशका हाल-चाल अच्छी तरह जानते। इसीलिए अंग्रेज़ोंको कहीं दूत भेजनेकी आवश्यकता पड़नेपर उन्हें पद-पदपर आर्मिनियनोंका शरणापन्न होना पड़ता।

खोजा साहब अच्छी तरह जानते थे कि रुपयेपर अजीमुस्सानका कितना अधिक लोभ है। रुपया-पैसा जो कुछ जहाँसे पाते बिना किसी द्विधा और संकोचसे उसे पाकेटमें भरते।

बंगालमें आते ही अजीमुस्सानने रुपया कमानेकी एक पुरानी चाल चली थी। उस चालका फ़ारसी नाम सौदा-ए-खास था। होता यह था कि सरकारका नाम लेकर नवाबके लिए जितनी जीवन-निर्वाहकी वस्तुएँ थीं, विशेष रूपसे खाने-पहननेकी वस्तुएँ सस्ती थोक दरमें एक साथ खरीद ली जातीं। और उसके बाद फुटकर दरमें अधिक मूल्यपर बाज़ारमें बेंच दी जातीं। बहुत कुछ आजकलके कण्ट्रोल-जैसा और क्या।

गुप्तचरोंके मुँहसे नातीकी कार्रवाइयाँ सुनकर तो बादशाह औरंगज़ेब क्रोधसे आगबबूला हो गया। उन्होंने अजीमुस्सानको लिख भेजा कि मैं तो सौदेका एक ही अर्थ जानता हूँ। शब्दकोशमें उसका अर्थ पागलपना है। अरबी भाषामें सौदाका अर्थ सचमुच पागलपना है। औरंगज़ेबने और लिखा तुम राजवंशके हो, यह बात याद रखना, अभी पागलपन छोड़कर राज-कार्यमें मन लगाओ यही मेरी इच्छा है। प्रजापालनके लिए तुम्हें उस अंचलमें भेजा गया है, प्रजाको दुःख देनेके लिए नहीं—यह भी नहीं भूलना।

रुपया बहानेपर नवाब साहबके पाससे सब तरहके काम हासिल किये जा सकते हैं, खोजा सरहद साहबको यह बात बिलकुल अज्ञात नहीं थी। माल-असबाब और नक़द मिलाकर सोलह हज़ार रुपये नवाब अजीमुस्सान-

को उपहार देकर अंग्रेज़ोंने सुतोनुटि, कलकत्ता और गोविन्दपु[illegible] ग्रामोंको खरीदनेकी अनुमति प्राप्त कर ली।

इसके कई महीने वाद ही, १० नवम्वर सन् १६९८ ई० को [illegible] लिखवाकर अंग्रेज़ोंने सावर्ण-चौधुरियोंसे उन तीनों ग्रामोंको खरीद [illegible] चौधुरियोंकी उस समय गिरती अवस्था थी। और उसपर वहुतसे हिस्सेदा[illegible] थे। उन्होंने पहले तो कुछ आनाकानी की लेकिन वादमें कुछ दर वढ़ाकर तेरह सौ रुपयेमें उन तीनों ग्रामोंको अंग्रेज़ोंके हाथमें छोड़ दिया।

फिर भी कम्पनीको सन्तुष्ट नहीं किया जा सका। लन्दनसे डायरेक्टरों-ने कलकत्ता लिख भेजा, देख रहे हैं कि ज़मींदारी खरीदने जाकर तुम लोगोंने हम लोगोंके दोनों पाकेटोंमें छेद कर डाला। ऐसा करनेसे तो दो दिनोंमें ही हम लोग कंगाल हो जायेंगे। कलकत्तेसे प्रत्युत्तर गया कि कम्पनीके रुपयेका इतना सदुपयोग उन लोगोंने कभी किया है ऐसा उन्हें याद नहीं आता।

ज़मींदारी खरीदकर कलकत्ताके अंग्रेज़ोंने इतने दिन वाद चैनकी साँस ली। इस वार जैसे-तैसे भी कुछ ठिकाना तो लगा। कलकत्तेको और नज़र-अन्दाज़ नहीं किया जा सका। कम्पनीने हुक्म दिया, अवसे कलकत्ता एक प्रेसिडेन्सी हुआ। यहाँ एक प्रेसिडेण्ट रहेंगे और उनके साथ एक काउन्सिल रहेगी। वंगालमें जितनी भी अंग्रेज़ी-कोठियाँ हैं वे सभी उन्हींके जिम्मे रहेंगी। वे अव मद्रास-कोठीके प्रेसिडेण्टके अधीन नहीं रहेंगी।

इसके पहले ही चार्ल्स आयर अस्वस्थ होकर विलायत लौट गये थे। वहुत अनुनय-विनय कर कम्पनीने उन्हें कलकत्तेका प्रथम प्रेसिडेण्ट वनाकर भेजा। उस समय वे सर-चार्ल्स आयर हो गये थे।

: ७ :

एक शताब्दीके वाद दूसरी शताब्दी आ गई। सन् १६०० ई० समाप्त होकर सन् १७०० ई० का आरम्भ हुआ।

[illegible]काय[illegible] चार्ल्स आयर कुछ ही दिन काम कर स्वदेश लौट गये हैं। उनकी जगह [illegible] ... [illegible] बेन वियर्ड कलकत्ताके प्रेसिडेण्ट हैं। वियर्ड साहव वचपनसे ही [illegible] हैं। इस देशकी राजनीतिका रंग-ढंग उन्हें नखदर्पण है। अंग्रेज़ [illegible]ाव-चारनकके समान रिचार्डने भी समझ लिया था कि इस देशमें रहते हुए ठीक ढंगसे व्यवसाय चलानेके लिए मुग़ल दरबारमें दूत भेजनेकी अपेक्षा खूव मज़वूत क़िला वनाना कहीं अधिक कामका होगा। इसीलिए वात-वातमें वे अपनी काउन्सिलके सभी सदस्योंको वुला सुना-सुनाकर कहते, दूतकी अपेक्षा क़िला अच्छा।

उन्होंने उसी ओर ध्यान दिया। और नहीं दें तो करें क्या? व्यवसाय-वाणिज्य तो एकदम वन्द होनेको हुआ। दोष अंग्रेज़ोंका ही था। पुरानी ईस्ट-इण्डिया कम्पनीके सौभाग्यको देखकर और एक दलने नई ईस्ट-इण्डिया कम्पनी खोली। इंगलैण्डके वादशाह विलियम दि थर्डसे कह-सुनकर उन लोगोंने एक चार्टर भी जुटा लिया। फल यह हुआ कि दोनों कम्पनियोंमें किसी भी कम्पनीका व्यापार ठीकसे नहीं चलता। दोनों कम्पनियोंमें रात-दिन वाद-विवाद, गाली-गलौज और मान-अभिमान चलता।

वादशाह औरंगज़ेवने देखा कि यह अच्छा तमाशा है। कौन असल अंग्रेज़ी कम्पनी है, टैक्स वसूल करनेके लिए किसे पकड़ेंगे, किससे ज़रूरी कामके सम्बन्धमें वातें करेंगे यह वे ठीक नहीं कर सके।

उस समय फिर सूरतके पास हज करने जानेवालोंके ऊपर नये सिरेसे आक्रमण होना शुरू हो गया। वहुतसे गये-गुज़रे अकर्मण्य अंग्रेज़ोंने भी इसी-लिए जलमें उतर डकैती करना शुरू कर दिया। वादशाहके आदमियोंके पूछनेपर एक कम्पनीके लोग दूसरी कम्पनीवालोंको डकैत वता देते।

वास्तवमें कौन लोग डकैत थे, इसे स्थिर नहीं कर सकनेके कारण वादशाह औरंगज़ेवने हुक्म दिया कि एक ओरसे सभी यूरोपीय कम्पनियोंका व्यवसाय वन्द कर दो। जहाँपर जितने टोपवाले साहव हैं, उन सभीको

पकड़कर फाटकमें वन्द कर दो। उन सवोंका जहाँ भी जो माल [illegible] जप्त कर लो।

अंग्रेज़ोंका जो माल वाहर था वह सव चला गया। जो-जो मु[illegible]व थे वे सभी पकड़ लिये गये। [illegible]

नई कम्पनी तो एकदम फेरमें पड़ गई। वे माल खपा देनेके उत्साह[illegible] सभी दलवलको लेकर मालके साथ वाहर-वाहर घूम रहे थे। उन सवोंका [illegible] ही सव चला गया। पुरानी कम्पनीका विशेष-कुछ नुक़सान नहीं हुआ। उनके सभी आदमी, माल-असवाव सव कलकत्तेमें ही था।

अन्तमें नई कम्पनी पुरानीके साथ मिलकर एक हो जानेके लिए वाध्य हो गई। लेकिन मिल जानेपर भी एक कठिनाई रह गई। नवावके आदमी इस मिल जानेकी वातको अच्छी तरह नहीं समझ सके। उन लोगोंने सोचा, कि लगता है कि टैक्ससे वचनेका ही यह एक फ़रेव है। वे दोनों कम्पनियोंके वावत डवल टैक्स तलव कर बैठे। अन्तमें वहुत आरजू-मिन्नत करने तथा वहुत समझाने-वुझानेपर वह माफ़ हुआ।

इसी समय और एक विघ्न आ उपस्थित हुआ। वह था मुर्शीद कुली खाँका वंगालमें आगमन। सन् १७०१ ई० में वादशाह औरंगज़ेवने मुर्शीद कुली खाँको वंगालका दीवान वनाकर यहाँ भेजा। नवावका काम जैसे देशमें शान्ति-रक्षा करना था वैसे ही दीवानका काम राजस्वकी अदायगी तथा वन्दोवस्त करना आदि था।

मुर्शीद कुली खाँ ब्राह्मण सन्तान थे। वचपनमें किसी वच्चोंके अपहरण करनेवालेके हाथमें पड़ एक मुसलमानके हाथमें वेच डाले गये। इसीलिए वाध्य होकर उन्हें इस्लाम धर्म ग्रहण करना पड़ा था। मुर्शीद कुली खाँ चढ़ती उम्रमें मालिकके साथ फारस देशमें रहे, और फिर इस देशमें आकर दक्षिणमें औरंगज़ेवकी सूवेदारी ग्रहण की। फिर वादशाहके समान ही खाने-पीने, विलास अथवा स्त्रियोंके सम्वन्धमें वहुत दूर तक वे निस्पृह थे। लेकिन वकाया वसूल करनेके समय तथा हिसाव करते समय पैसे-कौड़ी

[illegible]कायं [illegible]हिसाब ठीक-ठीक समझ लेनेके मामलेमें वे अत्यन्त निर्दय तथा [illegible]में वा[illegible] [illegible]। इसके ऊपर टैक्स वढ़ा लेनेका प्रत्येक कला-कौशल मुर्शीद [illegible]को कण्ठस्थ था।

[illegible]ा हुए [illegible]

अंग्रेज[illegible] [illegible]गालमें आकर मुर्शीद कुली खाँने देखा कि अपनी-अपनी अच्छी खासी [illegible]ार दखल करके सभी बैठे हुए हैं। कोई भी खजानेका रुपया देना नहीं चाहता। इसीलिए वादशाहकी सरकारको वहुत दिनोंसे ठीक-ठीक राजस्व नहीं भेजा जा रहा है और इस समय औरंगज़ेवको ठीक-ठीक रुपया नहीं भेज सकनेपर मुर्शीद कुली खाँ की नौकरीका रहना ही कठिन था।

मुर्शीद कुली खाँका प्रथम कोप सौदागरोंके ऊपर जाकर पड़ा। सव लोग जानते हैं कि उनके पास नगद पैसा रहता है। उनके ऊपर जुल्म करनेसे हाथों-हाथ रुपया निकाला जा सकता है।

इसके वाद मुर्शीद कुली खाँ जागीरदारोंसे भिड़े। वंगालमें उनकी अच्छी-अच्छी जागीरोंको छीनकर उड़ीसाकी जंगलोंवाली जागीरोंको देकर उन्हें वहीं भेज दिया।

अंग्रेज़ लोग वड़ी मुश्किलमें पड़े। किसको रखें, किसको देखें, इसका ठीक नहीं। 'श्यामको रखें कि कुलको रखें' जैसी दशा हो गई। इसका कारण यह था कि केवल दीवान मुर्शीद कुली खाँके साथ समझौताकर किसी प्रकारका वन्दोवस्त कर लेनेसे ही काम पूरा नहीं होता। उस ओर नवाव अजीमुस्सान खड्गहस्त वैठे हैं।····निशाना साधकर तीर मारनेमें वे भी कम उस्ताद नहीं थे।

इसपर नवाव साहव फिरसे भविष्यके लिए रुपया जमा करनेमें लग पड़े हैं। वादशाह वूढ़े हो गये हैं। अव हैं तव नहीं। उनके मरनेपर वह रुपया खूव ही काम आयगा।

एक ओर नवाव-अजीमुस्सान और दूसरी ओर दीवान मुर्शीद कुली खाँ थे। इन दोनोंके वीचमें पड़के अंग्रेज़ ही क्यों इस देशके वड़े-वड़े ज़मींदार

भीं घवड़ा उठे थे। खज़ानेका रुपया जमा करनेमें ज़रा भी देरी [illegible] मुर्शीद कुली खाँके कर्मचारी ज़मीदारोंके ऊपर वहुत अत्याचार कर[illegible] फिर उससे भी रुपया वसूल नहीं होता तो परिवार सहित पवित्र इस्ला[illegible] ग्रहण करनेके लिए उन्हें वाध्य किया जाता। [illegible]

अत्यधिक अत्याचारके शिकार हो अनेक पुराने खान्दानी ज़मीदा[illegible] परिवार एक-एककर विनष्ट हो गये। उनके स्थानपर नये-नये नवाव ज़मीं-दारोंका जैसे सहसा ही उदय हुआ।

देखते-देखते नवाव और दीवानमें ही खूब ज़ोरकी ठन गई। दोनों ही परस्पर एक-दूसरेके सम्वन्धमें वादशाहके पास शिकायत करते। मुर्शीद कुलीखाँको नवावके पास रहनेका अव अधिक साहस नहीं हुआ। दीवानी दफ़्तरको वे ढाकासे मुक्सुदावाद ले आये। यह मुक्सुदावाद ही मुर्शीद कुली-खाँके नामपर मुर्शिदावादके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

अन्तमें वादशाहके पास दीवानजीकी ही जीत हुई। और क्यों नहीं होती? मुर्शीद कुली खाँके ऊपर औरंगज़ेवका अगाव विश्वास था। दीवानीके मिलनेके वादसे ही मुर्शीद कुलीखाँ वादशाहके पास प्रत्येक साल एक करोड़ रुपया भेजते। एक वार भी चूक नहीं हुई। ऐसा इसके पहले कभी नहीं हुआ था।

और रुपया भी नगद चमचमाता चाँदीका रुपया। वैलगाड़ीपर लाद-कर वह रुपया दक्षिण भेजा जाता, वहाँ अपने जीवनके अन्तिम दिनोंमें युद्ध करते-करते ही वादशाह औरंगज़ेवकी मृत्यु हुई थी। इसीका फल था कि वहुत दिनों तक वंगालमें किसीने फिर चाँदीका मुँह नहीं देखा। कौड़ीसे ही सव काम-काज चलाने पड़ते। वोलचालकी भाषामें ही चल गया 'टाका कौड़ी'।

यही सव देख-सुनकर अंग्रेज़ोंने कलकत्तेमें फोर्ट विलियमकी उन्नति की ओर विशेष ध्यान दिया। उन लोगोंके मनमें और भी एक भय हो गया था। वादशाह औरंगज़ेव जैसे वूढ़े हो गये हैं। उससे वे अधिक दिन वचेंगे

[illegible]काय[illegible] इसमें सन्देह था। उनके मरते ही तो फिर दिल्लीकी गद्दीके लिए में [illegible] [illegible] होने लगेगी, खून-खरावी शुरू हो जायगी। सारे देशमें अशान्ति-[illegible] भड़क उठेगी। उस समय यदि कोई उनकी रक्षा कर सकता है [illegible] उनका क़िला ही। सन् १७०० ई० से सन् १७०७ ई० तक उन्होंने अंग्रेज़ [illegible]थक परिश्रमसे फोर्ट विलियमकी श्री-वृद्धि कर डाली।

क़िलेके ऊपर और भी कई नये वुर्ज वने। क़िलेको चारों ओरसे दीवारसे घेर दिया गया। नदीकी धारासे बचनेके लिए घाटको पक्का वना दिया गया। माल-असबाब चढ़ाने-उतारनेके लिए कई जेटियाँ बनीं। गंगा-के ऊपर दो नये घाट भी वने।

क़िलेके भीतर ही प्रेसिडेण्टके रहनेके लिए वहुत वड़ा मकान वना जिसे देखते ही आँखें चौंधियाँ जातीं। केवल रहनेके लिए मकान ही नहीं। वर्तमान चौरंगीका जहाँ मिड्लटन स्ट्रीट है वहाँके जंगल-झाड़को साफ़ कर प्रेसिडेण्टके खानेकी टेवुलके लिए शाक-सब्जी फल-मूलका एक वगीचा भी वना। पोखरा खोदकर मछली छोड़ी गई। उनके लिए चाँदीसे मढ़ी पालकी आई। उनके आगे-पीछे चोवदार दण्डधारी, हुक्का ढोनेवाले, एकदम नवावी कारवार!

सब बात सुनकर कम्पनीके डायरेक्टरोंने खवर भेजी तुम लोग कर क्या रहे हो? हम लोग सुन रहे हैं कि तुम लोगोंने ऐसा क़िला वनवाया है कि जिसे देखकर चारों ओरके लोग ख़ूब तारीफ़ कर रहे हैं। लेकिन विपत्तिके समय वह दुर्ग तुम लोगोंकी रक्षा कर सकेगा न? या केवल दर्श-नीय होकर ही खड़ा रहेगा?

वड़े-वड़े साहव लोग और विशेष रूपसे जिनके साथ मेमसाहव थीं, चाहे वे देशी हों अथवा विदेशी अब क़िलेके भीतर छोकरे मुंशियोंके साथ इकट्ठा रहनेके लिए राजी नहीं हुए।

इस समयके लाल बाज़ार क्लाइव स्ट्रीटसे लेकर फोर्टको छोड़कर डलहोज़ी स्क्वायरके चारों ओर तीन रुपये बीघेके हिसावसे उन लोगोंने

काउन्सिलके पाससे ज़मीनकी वन्दोवस्ती ली। वहींपर उन लोगों [illegible] वड़े आलीशान मकान धीरे-धीरे उठने लगे। एकान्तमें रहनेके [illegible] किसी-किसीने कलकत्तेसे वाहर अर्थात् सुतोनुटि और गोविन्दपुरमें [illegible] वाड़ी (उद्यान-भवन) वनवायी और वहीं जाकर रहने लगे। [illegible]

इसी प्रकारके दो वड़े-वड़े वगीचे किसी समय शहरके जैसे दो दिक्पा[illegible] होकर चौकीकी निगरानी करते। उत्तरमें पेरिन साहवका वगीचा था जो इस समयका वाग़ वाज़ार है। और दक्षिणमें सुरमन साहवका वगीचा था जो आजकलका कुली वाज़ार है अथवा हेस्टिंग्स है।

लालदीघीको अच्छी तरह साफ़ कर उसका पंकोद्धार किया गया। उसके चारों किनारोंपर मिट्टी डाल-डालकर पेड़-पौधे रोपकर तथा घास लगाकर साहव और मेम साहवके लिए हवा खानेकी जगह वनाई गई। इसी-का पुराना नाम टैंक स्क्वायर था, अव वह डलहौज़ी स्क्वायर कहलाता है। लालदीघीको अंग्रेज़ोंके दि ग्रेट टैंक कहकर वातें करनेपर भी इसका पुराना दुलारका नाम अभी भी चला आ रहा है।

लालदीघीके चारों ओर जो मकान वने उनकी वनावटमें सौन्दर्य नहीं था। देखनेमें भले ही वे विशाल और लम्वे-चौड़े हों। उस समय तो कारपोरेशन अथवा इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्टका झमेला ही नहीं था कि लोग वढ़िया प्लान तैयारकर मकान वनवाते। जिनसे जहाँ वन पड़ा वैठ गये।

सामने थोड़ा-थोड़ा-सा कम्पाउण्ड रहता। उसीमें नौकर-चाकरोंके रहनेके फूसके घर होते। भीतरकी ओर वड़ी-वड़ी, ऊँची-ऊँची दर-दालानें होतीं। उस समय तक लकड़ीके दरवाज़े-खिड़कियाँ नहीं वनीं थीं, शीशेके किवाड़ नहीं थे, सामान आदि भी साधारण तरहके थे। ये सभी चीज़ें वहुत वादमें आईं।

अपनी ज़मींदारीकी उन्नतिकी ओर भी अंग्रेज़ोंने अच्छी तरहसे ध्यान दिया। भले ही वह थोड़ी-सी छोटी ज़मींदारी क्यों न हो, लेकिन तौ भी तो ज़मींदारी है। इसके लिए हर साल हुगलीमें पन्द्रह सौ रुपये खज़ानेमें

[illegible]काय[illegible] [illegible]ड़ते हैं। कमसे-कम उस रुपयेको भी वसूल नहीं कर पानेपर [illegible]में वा[illegible] [illegible] सामने कौन-सा मुँह दिखाया जाय ?

[illegible]ा हु[illegible] [illegible]उन्सिलमेंसे ही एक मेम्वरको विशेष रूपसे ज़मींदारीका काम देखने-अंग्रेज़[illegible]ए चुन लिया गया। देशी प्रथाके अनुसार उसका नाम ज़मींदार [illegible]पड़ा। लेकिन ज़मींनदारको वहुत तरहके काम थे वे अकेले ही कलक्टर, मजिस्ट्रेट, पुलिस कमिश्नर, कलक्टर ऑफ़ कस्ट्मस, कारपोरेशनके चीफ़ एक्जिक्यूटिव ऑफिसर तथा इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्टके प्रेसिडेण्ट सव कुछ थे।

कलकत्ताका प्रथम ज़मींदार राल्फ शेल्डन था। सन् १७०९ ई० में शेल्डनकी यहींपर मृत्यु हुई। कामका आदमी समझकर कम्पनीने सन् १७१० ई० में उन्हें प्रेसिडेण्टकी गद्दी भी दी। लेकिन यह खवर जव कलकत्ते पहुँची उस समय वे सव सम्मानके परे जा चुके थे।

ज़मींदारको इतने अधिक काम थे कि सवको अकेले कर डालना उनके लिए मुश्किल था। विशेष रूपसे देशी लोगोंकी संख्या कलकत्तेमें इतनी वढ़ चली कि उनका तदारुक करनेके लिए एक देशी आदमीकी सहायता नहीं लेनेपर काम नहीं चल सकता।

शोभासिंहके विद्रोहके समयसे हो मुगल सरकारके हाथों धन-प्राण दोनोंमें किसीको भी बचते नहीं देख वहुतसे देशी लोगोंने अपने स्थानका त्याग कर विदेशी वनियोंका आश्रय लिया था। इसी सूत्रसे वहुतसे देशी लोग कलकत्तेमें भी आ जुटे थे। वहो जो उस समयसे कलकत्तेमें लोगोंका आना शुरू हुआ वह आज तक नहीं रुका।

इसके ऊपर मुर्शीद कुलीख़ाँके अत्याचारसे जो पुराने ज़मींदार घर उच्छिन्न हो गये थे, उन घरोंके वहुत-से लड़के नये सिरेसे जीवन-यात्रा आरम्भ करनेके उद्देश्यसे कलकत्तेमें आ उपस्थित हुए। कलकत्तेमें काम-काजकी सुविधाकी चर्चा उस समय लोकमुखसे वहुत-वहुत दूर तक फैल गई थी।

अन्तमें ज़मींदारोंके काममें सहायता करनेके लिए एक देशी आदमीको चुन कर लेना ही पड़ा। कलकत्ताके प्रथम ब्लैक ज़मींदार या डिप्टी

मैजिस्ट्रेट नन्दराम सेन थे, जो मौलिक कायस्थ थे। अंग्रेज़ोंके अ[illegible] सरकारी काममें बंगालीका यह प्रथम प्रवेश था।

लेकिन नन्दराम बहुत दिनों तक अपने पदपर टिके नहीं रहे। [illegible] वसूल किये हुए ख़ज़ानेके रुपयेको तसरुफ़ कर पकड़ जानेके भयसे हु[illegible] भाग गये। बहुत कह-सुन कर अंग्रेज़ हुगलीके फ़ौजदारके हाथसे नन्दरामको उद्धार कर कलकत्ता लौटा ले आये। इसके बाद जगह-ज़मीन, घर-द्वार, माल-असबाब कुर्क कर और सबको बेंचकर अपना बक़ायेका कौड़ी-कौड़ी वसूलकर छोड़ दिया।

नन्दराम सेनकी कहानी आज कोई नहीं जानता। लेकिन किसी समय इनकी खूब प्रतिष्ठा थी। इस समय उनके नामपर सिर्फ़ हाटखोला अंचलमें एक रास्ता रह गया है। उनका तैयार कराया हुआ गंगापर एक स्नानघाट रथतला घाटके नामसे प्रसिद्ध अट्ठारहवीं शताब्दीके अन्त तक खड़ा था। वह घाट इस समय गंगाके गर्भमें है।

: ८ :

प्रायः पचास वर्षोंतक राज्य कर कालके नियमानुसार शाहंशाह मुही-उद्दीन मुहम्मद बादशाह औरंगज़ेब आलमगीरने सन् १७०७ ई० की २० फरवरी, शुक्रवारके शुभ दिनको नब्बे बरसकी उम्रमें ज्ञान रहते अन्तिम साँस छोड़ी।

अंग्रेज़ोंने जो सोचा था वही हुआ। बादशाहकी नश्वर देहपर अच्छी तरहसे मिट्टी पड़ते-न-पड़ते ही उनके बेटोंके बीच लड़ाई छिड़ गई।

उस समय बंगालके गवर्नर अजीमुस्सान बंगाल छोड़ गये थे। दीवान मुर्शीद कुलीखाँको भी उसके कुछ बाद ही जाना पड़ा। उस समय तो और उन्हें अपने खूँटेका जोर नहीं रहा। नये बादशाह शाहआलम बहादुर शाह उस समय दिल्लीकी गद्दीपर थे।

[illegible]ज़ोंका व्यवसाय-वाणिज्य जिस अन्धकारमें था, उसी अन्धकारमें [illegible]। सरकारी कर्मचारी फिर नये सिरेसे रुपया माँगते। रुपया नहीं [illegible]रका अत्याचार चलाते। किन्तु अंग्रेज़ अब और नये सिरेसे रुपया [illegible] राज़ी नहीं थे। उस समय उनका फोर्ट वन चुका था। इसीलिए [illegible]नका साहस भी बढ़ चला था। इस वार उन लोगोंने सीधे-सीधे कहला भेजा कि मुफस्सिलमें एक भी अंग्रेज़पर हाथ उठानेपर हुगलीमें वे दस मुग़लोंपर उसका बदला लेंगे।

व्यवसायके क्षेत्रमें पग-पगपर वाधा होनेपर भी अंग्रेजोंकी खरीद-विक्री विलकुल वन्द नहीं हो गई। इसी समय फ्रान्समें युद्ध होनेके कारण फ्रान्सीसी लोगोंने यहाँके कामकाजको समेट लिया था। डच लोगोंने भी वंगालकी अपेक्षा सिंहल, जावा, सुमात्रा आदिकी ओर ही अधिक मन लगाया। उस ओर उनके प्रतिद्वन्द्वी एक-एककर हट गये।

अंग्रेज़ोंने देखा खरीद-विक्रीका काम अच्छी तरहसे चलानेके लिए देशी लोगोंकी सहायताकी ज़रूरत है। सोच-विचारकर उन लोगोंने देशी दलाल रखना ठीक किया।

पहले पहल सुप्रसिद्ध उमीचन्दके बड़े भाई दीपचन्दको उन्होंने पकड़ा। लेकिन लगता है अन्ततक उससे कोई विशेष फ़ायदा नहीं हुआ। इसके वाद सेठोंके घरानोंके मालिक जनार्दन सेठको बुला लाकर मुसलमानी क़ायदेके मुताविक़ उन्हें शिरोपा (पगड़ी) देकर और इत्र, गुलाव, पान-सुपारीसे अभिषेककर बड़े दलालके पदपर प्रतिष्ठित किया। उसीके बादसे बहुत दिनोंतक वंशानुक्रमसे सेठ लोग ही अंग्रेज़ोंके बड़े दलालका काम करते आये।

दलालका काम परवर्ती कालके सौदागरी हाउसके वनियोंके काम जैसा था। अंग्रेज़ लोग विदेशसे जो माल ले आते उसे इस देशमें खपाना और यहाँसे जो माल विदेशमें चालान करते उन्हें सस्ती दरमें संग्रह कर देनेका भार इन बड़े दलालके ऊपर था।

वड़े दलालके ज़रिये ही इस देशके तातियों तथा दूसरे-दूसरे [illegible] को वयाना दिया जाता। जिसमें वे रुपया मारकर भाग न जायँ [illegible] जिम्मेदारी वड़े दलालपर रहती।

अंग्रेज़ लोग विदेशसे जो सव माल मँगाते इस देशमें उन सवके [illegible] वहुत अधिक खरीददार नहीं थे। दलालको अनेक चेष्टा और प्रयत्न कर उन्हें खपाना पड़ता। दलाल ही ने क्रमशः इस देशके वड़े लोगोंके वीच विलायती माल खरीदनेका शौक़ पैदा किया।

इसके वाद धीरे-धीरे विलायती ऊनी गरम कपड़े, थोड़ा लोहा-लक्कड़, थोड़ा ताँवा, लेड (Lead) जस्ता और कुछ-कुछ मनिहारीके सामानोंकी भी अच्छी विक्री इस देशमें होने लगी।

देखनेमें आता है कि कलकत्तेके देशी वाशिन्दोंको तो ऐसा नशा चढ़ा कि नीलामसे मृत साहवोंके फर्नीचर वाक्स-पिटारी, छुरी-कैंची आदि खरीद कर घर ले आते। जनार्दनके भाई वाराणसी सेठने तो एक दिन आक्शन (Auction) से छः-सात चीनी चित्र खरीद लिये।

वड़े दलाल वेतनके रूपमें कुछ नहीं पाते। खरीद-विक्रीके मालके दाम-के ऊपर केवल कमीशन लेते। यह सुननेमें कम लगनेपर भी सारे सामान-पर हिसाव जोड़नेसे वे रुपये कुछ कम नहीं होते।

दलालको वीच-वीचमें सज-धजकर अंग्रेजोंकी ओरसे हुगलीके फौजदार-के पास दरवार करने जाना पड़ता। फौजदार तो उस कालके डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट थे न। मुगलोंके ढंगका चोगा पहनकर जनार्दन सेठ अंग्रेज़ोंकी तरफ़से वकालत करने हुगली जाते, यह भी पता चलता है।

व्यवसायके वढ़ते ही वड़े दलालके नीचे वहुतसे छोटे दलाल भी रखे गये। उनमें अधिकांश वंगाली हिन्दू ही थे। कई पश्चिमके हिन्दू भी थे। मुसलमानोंमेंसे दोका उल्लेख मिलता है। वे वंगाली मुसलमान थे या नहीं नामसे तो यह समझा नहीं जा सकता।

दिनपर-दिन कलकत्तेकी श्री-वृद्धि होने लगी। लोग भी वहुत वढ़

...ई-गाँव क्रमशः शहरमें परिणत हो चला।

...समय कलकत्तेका एक सर्वे किया गया। उससे पता चलता है कि ...में वा... ...न वन गये हैं। शहरके रूप-रंगका भी थोड़ा-सा आभास मिलता ...ा हु... ...टे तौरपर शहरको चार भागोंमें विभक्त किया गया है।

अंग्रे... उसी समयसे ही अलग एक साहवोंके मुहल्लेकी सृष्टि हो गई है। वह आजकलके चीना वाज़ारसे लेकर हेस्टिंग्स स्ट्रीट तक है। उस समय अवश्य ही हेस्टिंग्स स्ट्रीट नहीं था। उसकी जगह गंगासे निकलकर सीधे पूरवके साल्ट लेक तक एक वहुत वड़ी नहर चली गई थी उसी नहरसे होकर वड़ी-वड़ी नावोंपर आना-जाना होता। अव इस नहरका चिह्न तक नहीं रह गया है। केवल क्रीवरो, डिंगेभांगा आदि इस अंचलके नामोंमें उसके अस्तित्वका थोड़ा परिचय वचा रह गया है।

साहव पाड़ा (साहवोंका मुहल्ला) से लगा हुआ उत्तरमें वड़ा वाज़ार है। वड़ा वाज़ार और असली साहव पाड़ाके वीच आजकलके मुर्गीहाटा अंचलमें ज़मीनके एक लम्वे टुकड़ेपर एक ओर पुर्तगीज़ और दूसरी ओर आर्मिनियन लोग रहते। वड़ा वाज़ार उसी समयसे ही लोगोंसे भरा हुआ है। वहाँ वड़े-वड़े व्यापारी निवास करते। और हरेक तरहकी दुकानें वहाँ थीं तथा छोटे, वड़े, मझोले क़िस्मके गोदाम भी थे।

केवल देशी व्यापारी ही नहीं, यूरोपके अलावा अन्य सभी देश-विदेशके सेठ-साहूकार कलकत्तेमें आकर इसी वड़ा वाजारमें जमा होते। अरव, ईरानी, मुगल, हव्शी, चीनी, काफ़ी, मलाया निवासी—कितने ही प्रकारके लोग। इनके अलावा इस देशके विभिन्न प्रदेशके भी वहुत लोग थे। सवको लेकर वड़ा वाज़ार एकदम गुलज़ार था।

वड़ा वाज़ारको पार करते ही उत्तरमें सुतोनुटि था। उस समय वहाँ थोड़ा-थोड़ा करके भद्र श्रेणीके लोग भी अव वसने लगे थे।

दक्षिणमें गोविन्दपुर था, आजके वावूघाटसे कुली वाज़ार तक फैला हुआ। यह विलकुल भद्र वंगालियोंका मुहल्ला था। वहाँके लोगोंको

सुतोनुटिके आदिवासियोंके साथ सटकर रहनेमें उस समय [illegible]
आपत्ति थी। [illegible]

यह देखनेको मिलता है कि ब्राह्मण लोगोंने भी अच्छी संख्य[illegible] [illegible]
आकर वास करना शुरू कर दिया था, तब वे निम्न श्रेणीके ब्राह्म[illegible]न,
उस समय भिक्षा छोड़कर उनके जीविका निर्वाहका दूसरा कोई उपाय न[illegible]
था। अतः देशी जमींदारोंका अनुकरण कर विलायती जमींदार भी उन्हें
थोड़ी-थोड़ी लाखराज ज़मीन ब्रह्मोत्तरमें दान करते। बुद्धिमान् ब्राह्मणोंने
उस दानको म्लेच्छोंका दान कहकर ठुकराया नहीं।

साहब पाड़ाके प्रायः सभी मकान पक्के थे। बड़ा बाज़ारमें कच्चे-पक्के
दोनों ही मिले-जुले थे। सुतोनुटि और गोविन्दपुरके सभी मकान उस समय
मिट्टीके थे। वे या तो फूससे या गोल पाता (ताड़ या नारियलके जैसा एक
छोटा वृक्षका पत्ता) से छाये हुए थे।

सर्वेसे पता चलता है कि सुतोनुटिके १६९२ बीघे ज़मीनके १३४ बीघे-
का अधिकांश बाग़ था। और उसीमें कच्चे मकानोंकी बस्ती थी। बड़ा
बाज़ारके ४८८ बीघेके ४०१ बीघेमें तथा कलकत्ताके १७७० बीघेके १४८
बीघेमें लोगोंका निवासस्थान था। गोविन्दपुरका समस्त पूर्वी हिस्सा जो
इस समय क़िलेका मैदान है, उस समय जंगलसे भरा हुआ था। वहाँ हिरन
चरते तथा दिन दहाड़े बाघ निकलते। इसीलिए उस समयके १७७८ बीघेमें
केवल ५७ बीघेमें आवास स्थान देखनेको मिलता है।

बाक़ी ज़मीनमें या तो धानकी खेती थी अथवा फल-फूलका बाग़ था।
या तो सुनसान नीची ज़मीन थी या घोर जंगल था। खेतीवाली ज़मीनमें
सुतोनुटिमें १११ बीघे, बड़ा बाज़ारमें २६ बीघे, कलकत्तेमें १०९ बीघे
और गोविन्दपुरमें २६ बीघे ज़मीन ब्रह्मोत्तर थी। शहरकी जनसंख्या कुल
मिलाकर अनुमानतः पन्द्रहसे बीस हज़ारके बीच थी।

जमींदारका काम और बढ़ गया। प्रजाके साथ बन्दोबस्ती, प्रजाका
शासन, शान्ति-रक्षा, खज़ानेके रुपये वसूली, जंगल कटवाना, छोटे-मोटे

[illegible]कार्य [illegible]को भरवाना, बाज़ार लगवाना, ट्रेन-ब्रिज तैयार कराना—ये सभी में बा[illegible] [illegible]दारके सिरपर आ पड़ा। इसीलिए इस समय एक पूरी ज़मींदारी [illegible]ा हु[illegible] [illegible]ी स्थापना करनी पड़ी। देशीके अनुकरणपर उसका भी नाम अंग्रेज़[illegible]हरी।

उस समयकी कचहरी आजके लाल बाज़ारके पुलिस-हेड-क्वार्टर्सके ठीक ऊपर थी। जमींदारी सिरिश्ताके अंग—कोतवाल, चौकीदार, प्यादा, शिकदार, ढाक ढोल बजानेवाले—सभी आ जुटे। नामसे ही समझा जा सकता है कि ये सभी देशी लोग ही थे।

ज़मींदारके दफ़्तरके बँगला रजिस्टरको ठीक रखनेके लिए कई मुंशी नियुक्त हुए। वे प्रायः सभी दक्षिण-राढ़ी कायस्थ थे। अंग्रेज़ी रजिस्टर पुर्तगोज़ फिरंगी लिखते।

इसी समय कलकत्तेकी काउन्सिलने एक आर्डर निकाला कि ज़मीन-बन्दोबस्तीके साथ-साथ ज़मींदार सब प्रजाको एक-एक पट्टा देंगे। उसका फ़ार्म बिलकुल सीधा था। सीधा था इसीलिए केवल थोड़ा-सा परिवर्तन कर वह आज तक चला आ रहा है। इसमें प्रजाका नाम, ज़मीनका माप, मालगुज़ारीका परिणाम खूब साफ़-साफ़ लिखा रहता। ज़मीन लेनेके समय लोग अच्छी तरह समझ सकते कि वे कितनी ज़मीन पा रहे हैं और उसके लिए कितना देना होगा। किसी प्रकारके गोलमालकी सम्भावना नहीं थी। इस समय उसके साथ केवल ज़मीनकी चौहद्दी जोड़ दी जाती है। पट्टेका विवरण बँगला, अंग्रेज़ी दोनों भाषाओंमें लिखा रहता।

पुराने सभी पट्टोंकी कापी (copy) नष्ट हो गयी है। इसीलिए उस समयका कोई पट्टा मेरी नज़रमें नहीं आया। जिन प्राचीन पट्टोंकी नकल कलकत्ता कलेक्टरीके दफ़्तरमें सँभालकर रखी गयी है उनमें जो सबसे पुराना है उसकी अंग्रेज़ी तारीख २ जनवरी सन् १७५८ ई० और बँगला तारीख २१ पौष सन् ११६५ साल है। इस पट्टेमें कलकत्तेके ज़मींदार मैथ्यू कलेट साहब लक्ष्मीकान्त सेठको कलकत्ता बाज़ार अर्थात्

वड़ा वाज़ारमें साढ़े छः कट्ठा ज़मीन, सिक्का सात आना सात पाई ग[illegible]
मालगुज़ारीपर वन्दोवस्त करते हैं।

लक्ष्मीकान्त गोविन्दपुरके सेठ-वंशके थे। नये क़िलेके लि[illegible]
क्लाइवने गोविन्दपुर अंचलको चुन लिया तव यही परिवार वड़ा व[illegible]
उठकर चला आया। इसीसे वे वड़ा वाज़ारके सेठके नामसे प्रसिद्ध हैं।

एकके-वाद एक कई कामके आदमी ज़मींदार हुए जिससे शहरकी कुछ
अच्छी खासी उन्नति हुई।

वड़ा वाज़ारको छोड़कर तीन वाज़ार और बसे। उनमें श्याम वाज़ार
अभी भी है। यहाँ तक कि आज शहरका एक अंचल ही इसी नामसे
विख्यात है। लाल वाज़ार अवश्य ही अव और वाज़ार नहीं है, लेकिन
उस हिस्सेका यह वहुत पुराना नाम है।

दो-चार व्रिज (पुल) भी तैयार हुए। इनमें जोड़ासाँको नाम अभी
भी है। यद्यपि जोड़ा क्यों आजकल वहाँ एक भी साँको (पुल) देखनेको
नहीं मिलता, फिर भी उस समूचे मुहल्लेको अभी भी लोग जोड़ासाँको ही
कहते हैं। खास वाज़ार कहाँ था, इसका पता अव नहीं चलता।

पीनेके पानीके लिए वहुतसे पोखरे खोदे गये। जगह-जगह खाई खोद
ड्रेन भी वैठाये गये।

मज़ेकी वात यह है कि कम्पनी वहादुर शहरकी उन्नतिके लिए
अपनी जेवसे एक पैसा भी खर्च करनेको राज़ी नहीं हुए। सव खर्च टैक्स
लगाकर शहरके वाशिन्[illegible]ोंसे वसूल कर लिया गया।

पुराने देशी वाशिन्दोंने इसमें वहुत अधिक सहायता पहुँचाई थी। पता
चलता है कि सेठोंने सुतोनुटिके एक भागको साफ़-सुथरा रखनेके करारपर
वहाँके अपने सेठ वगानकी मालगुज़ारीको वहुत कम करा लिया था। चित
पुर रोडके उत्तरी हिस्सेके प्रायः पूरे रास्तेके दोनों ओर उन्होंने पथिकोंको
सुविधाके लिए वहुत-से पेड़ भी लगवाये थे।

साहवोंके लिए और विशेष रूपसे गोरी पल्टन और गोरे माँझी

...के लिए एक अस्पताल खोला गया। यह अस्पताल उनका कब्रिस्तान ...त् आजके सेण्ट जौन्स चर्चके पूर्व ओर लगा हुआ था। अस्पताल-...न्धमें अलेक्ज़ेण्डर हैमिल्टन नामके एक जहाज़ी कप्ताननें व्यंग ...हुए लिखा है कि लोग चिकित्साके लिए इस अस्पतालमें जाते थे ...अवश्य लेकिन बहुत थोड़े लोग ही वहाँसे लौट आकर कह पाते कि चिकित्सा किस प्रकारकी हुई। और एक व्यक्तिने मखौल उड़ाते हुए कहा है कि अस्पतालसे कब्रिस्तानकी दूरी बहुत ही कम है। एक छलाङ्गमें ही पार की जा सकती है।

: ६ :

सांसारिक विषयोंकी अच्छी तरह सँभाल कर लेनेके बाद अंग्रेज़ोंको आध्यात्मिक विषयोंकी ओर ध्यान देनेका अब थोड़ा-सा अवसर मिला।

इसके पहले वे फोर्टके ही एक सीलनवाली अँधेरी कोठरीमें बैठकर किसी प्रकारसे उपासनाका अभिनय कर अपने कर्तव्यको पूरा कर लेते। सब समय उन्हें पादरीका उपदेश सुननेको ही मिलता ऐसी बात नहीं थी। कम्पनीके पादरी नियुक्त कर नहीं भेजनेपर अंग्रेज़ोंके डाक्टर अथवा काउन्सिलका कोई गण्यमान्य मेम्बर सफेद कपड़ेको खोलकर सर्टके ऊपर एक काला कोट डटाकर सर्मन देने लग जाते। उसके लिए अवश्य ही कुछ ऊपरी दक्षिणा भी पाते।

लेकिन शहरकी श्री-वृद्धिके साथ-ही-साथ अंग्रेज़ोंमें बहुतोंके मनमें आया कि एक अच्छा गिर्जा हुए बिना अब बिलकुल अच्छा नहीं दीखता। यूरोपीयन लोग एक साथ बैठकर प्रार्थना करते हैं इसीलिए उनकी पूजा-अर्चना बहुत दूरतक सामाजिक कृत्य जैसी है। गिर्जाके नामपर चन्देका खाता खोलते ही धड़ाधड़ चन्दा वसूल होने लगा। कम्पनीकी ओरसे कलकत्तेकी काउन्सिलने गिर्जाके लिए एक टुकड़ा ज़मीन दान दिया। उसीपर कलकत्ते-में अंग्रेज़ोंका पहला चर्च बना। इसी जगहपर आजका राइटर्स बिल्डिंग्सका

पश्चिमी अंश है, जहाँ ठीक दो रास्तोंको मोड़पर सेक्रेटेरियेटका अर्जुशीर्ष ब्लाक खड़ा है।

सन् १७०९ ई०की ५वीं जूनको रविवार था। उस दिन लन्दन के विशपके आशीर्वचनका पाठकर वड़े समारोहके साथ यह नया गिर्जा [illegible] गया। गिर्जेका नाम हुआ सेण्ट ऐन्स चर्च। इशारेसे रानीके प्रति विना खर्चेके अच्छी-खासी श्रद्धाका भी प्रदर्शन हो गया।

कम्पनीके डायरेक्टर गिर्जामें लटकानेके लिए एक अच्छा-सा घण्टा भेजकर मन-ही-मन अत्यन्त तृप्तिका अनुभव करने लगे। तब कृपा करके उन्होंने चर्चके कामके लिए एक पादरी साहबको भी भेजा था। उनका नाम विलियम एण्डरसन था। रेवरेण्ड एण्डरसनको लेकिन अधिक दिन काम नहीं करना पड़ा। सन् १७११ ई० में वीमार होकर हवा बदलनेके लिए मद्रास जाते-जाते रास्तेमें ही वे जहाज़पर मर गये।

इस समय यह गिर्जा एकदम निश्चिह्न हो गया है। उसका एक टुकड़ा भी कहीं खड़ा नहीं है। वैसे ऐसा भी दिन था कि लोग दो वार इसे देखते। एक वार बिजली गिरनेसे इसकी चूड़ा कुछ नष्ट हो ही गई थी कि इसके वाद सन् १७३७ ई० के क्वारकी आँधीमें वह एकदम टूटकर गिर गई। सन् १७५६ ई० में नवाव सिराजुद्दौला कलकत्तेको जीतकर घर लौटनेके समय इसे एकदम धूलमें मिला करके चले गये।

कलकत्ता शहरका नाम और यश इतना बढ़ गया कि हुगलीके फौजदार बीच-बीचमें यहाँ आकर एक-दो दिन बिता जाते। अंग्रेज़ लोग आदर-सत्कारके साथ नाना उपहार देकर उन्हें सन्तुष्ट रखनेकी चेष्टा करते। इसी बीच फिर फ़ारस देशके राजदूत हुगली होकर दिल्ली जानेके रास्तेमें कलकत्तेमें कई दिन रहकर गये। अंग्रेज़ोंके व्यवहारसे वे इतना खुश होकर गये थे कि जानेके समय वादा कर गये कि वे अंग्रेज़ोंकी तरफ़से स्वयं दिल्लीके बादशाहसे दो बातें कह देंगे। दो दिनों बाद ब्रह्मा देशके पेगुके राजाका राजदूत भी आकर शहरमें घूम गया।

[illegible]काय[illegible] [illegible]हर देखकर सभी अवाक् हो गये। राजा नहीं है, बादशाह नहीं है, [illegible]में बा[illegible] [illegible]रतक नहीं है, यहाँतक कि शहरकी तिमुहानीपर कोई नामगिरामी [illegible]ा हु[illegible] [illegible]न्त अथवा पीर-पैग़म्वर भी नहीं है। फिर भी पता नहीं कैसे कई अंग्रेज़[illegible] [illegible]ारियोंके हाथमें पड़कर कई ऐसे नगण्य जंगली गाँवोंसे रातोंरात कहानी सुनाने लायक़ इतना बड़ा एक शहर आँखोंके सामने देखते-देखते उठ खड़ा हुआ, यह अच्छी तरह कोई समझ नहीं सका। वंगालके इतिहासमें यह एक नई वात थी। ऐसा इसके पहले कभी नहीं देखा गया। अजीब शहर कलकत्ता है!

सन् १७१० ई० में मुर्शीद कुली खाँ फिर वंगालके दीवान होकर लौट आये। आते ही वे समझ गये कि उनकी अनुपस्थितिमें अंग्रेज़ोंकी स्पर्धा वहुत वढ़ गई है। अभीसे उन्हें दवा नहीं रखनेपर अन्तमें उनलोगोंको लेकर अधिक तकलीफ़ उठानी पड़ेगी। इसपरसे इस देशके लोगोंने क्रमश: अपने स्थानको छोड़कर कलकत्तेमें जाकर अंग्रेज़ोंके आश्रयमें रहना शुरू कर दिया है, यह भी उन्हें कुछ शुभ लक्षण नहीं मालूम हुआ।

इसके कुछ ही वाद देखा गया कि भूषणाके उत्तर राढ़ी कायस्थ ज़मींदार सीताराम रायके मुग़लोंकी फ़ौजके निकट हार कर वन्दी हो जानेपर उनके परिवारके कोई-कोई कलकत्ता भागकर वहाँ ही रहनेका विचार करने लगे हैं। लेकिन अंग्रेज़ लोग इन लोगोंको अभय देकर अन्त तक कलकत्तेमें किसी तरह भी नहीं रख सके। मुर्शीद कुली खाँके वहुत अधिक तंग करनेपर हुगलीके फौज़दारके हाथों इन लोगोंको बाध्य होकर सौंप देना पड़ा।

अंग्रेज़ोंको नाना प्रकारकी असुविधाएँ थीं। शहरमें जितने ही लोग वढ़ने लगे ज़मींदारीका काम भी उतना ही अधिक वढ़ गया। उसके लिए रुपयेकी ज़रूरत थी लेकिन कम्पनी एक पैसा भी खर्च नहीं करेगी। निरुपाय होकर काउन्सिलको नाना प्रकारके टैक्स लगाने पड़े। यहाँ तक कि शादी करनेके लिए भी उन दिनों टैक्स देना पड़ता।

टैक्स लगाने देनेमें भी कम्पनीको आपत्ति थी। डायरेक्टरोंने लिखा,

टैक्स बढ़ाकर किसी ज़मींदारीको अन्त तक टिकाकर नहीं रखा जा स[illegible]
तुम लोग देशी लोगोंके साथ ऐसा सद्व्यवहार करो जिससे वे द[illegible]
मुग़लोंका देश छोड़कर तुम लोगोंके आश्रयमें आकर सुखसे रह सकें [illegible]
देखोगे, कि जो ख़ज़ानेका रुपया वसूल होगा वही तुम लोगोंकी ज़[illegible]
का काम चलानेके लिए काफ़ी होगा।

काउन्सिलने देखा, वैसा करनेके लिए और भी अधिक ज़मीन चाहिए। आस-पासके और कई ग्राम नहीं खरीद लेनेपर तो शहरमें और लोगोंको नहीं हटाया जा सकता। इसी उद्देश्यसे वे लोग ज़मींदारोंके साथ बात चलाने लगे। लेकिन कोई भी और अंग्रेज़ोंके पास ज़मीन बेचना नहीं चाहता। अंग्रेज़ोंको पता चल गया कि ऊपरसे मुर्शीद कुली खाँने ज़मींदारों-को इशारा कर दिया है कि कोई भी जिसमें अंग्रेज़ोंके पास जौ-भर ज़मीन भी न बेचे।

मुर्शीद कुली खाँ विचक्षण व्यक्ति थे। वे अच्छी तरह समझते अंग्रेज़ उनके देशमें व्यवसायके प्रसार करनेमें खूब सहायता कर रहे हैं। और उसी-में देशका मंगल है। लेकिन अंग्रेज़ोंके ऊपर उनकी कैसी विष-दृष्टि पड़ गई थी कि लाख प्रयत्न करके भी अंग्रेज़ लोग उसे दूर नहीं कर सके।

मुसलमानों और विशेष रूपसे फ़ारस देशवालोंपर मुर्शीद कुली खाँ का अच्छा-खासा पक्षपात था। ऐसा न हो कि वे अंग्रेज़ोंसे व्यवसायमें पीछे रह जायँ, लगता है इसी भयसे वे किसी भी तरह अंग्रेज़ोंको बढ़ने देना नहीं चाहते थे।

मुर्शीद कुली खाँ हालके एक पीढ़ीके मुसलमान थे। उनके आचरण-में यह पकड़ाई न दे जाय, इसीलिए वे हिन्दुओंको भी कुछ अच्छी दृष्टिसे नहीं देखते थे। इसमें वे कुछ उत्कट रूपसे ही उग्र थे।

मुर्शीद कुली खाँके हाथोंमें पड़ अंग्रेज़ोंका अन्तमें ऐसा हाल हुआ कि लगा जैसे पटनेकी कोठीको और नहीं रखा जा सकता। वहाँ प्रचुर सोरा पाया जाता। लेकिन उस सोराको ठीक नवाबकी आँखोंके आगेसे मुर्शिदाबाद

...लाना पड़ता। रोज ही प्राय: वह रोक लिया जाता। बहुत रुपया [illegible] कार्य ... में बा... ...से छुड़ाना पड़ता। कम्पनीके डायरेक्टरोंने और पार न पाकर स्पष्ट ...ा हु... ...कि पटनेकी कोठीको और रखनेकी ज़रूरत नहीं, उसे बन्द कर दो। अंग्रेज़... ...और एक बखेड़ा खड़ा हुआ था। बंगालमें जितना चाँदीका रुपया था, ...मुर्शीद कुली खाँने उसे दक्षिणमें औरंगज़ेबके पास भेजकर खतम कर दिया था, इस प्रान्तमें कौड़ी देकर ही काम पूरा करना पड़ता, यह पहले ही कह चुका हूँ। लेकिन बड़े कारबार तो कौड़ी देकर नहीं चलते। दक्षिणमें मद्रासके पास आर्कट नामक एक जगहमें अंग्रेज़ोंने बहुत पहले एक टकसाल बनवाई थी। अपने देश अथवा चीनसे चाँदीकी ईंट लाकर उसी चाँदीसे उस टकसालमें रुपया छाप कर निकालते। उस रुपयेका नाम आर्कट-रुपया था। रुपया अवश्य ही बादशाहके नाममें ही छपता।

औरंगज़ेब जितने दिन दक्षिणमें युद्ध कर रहे थे, उतने दिन बंगालमें भी अंग्रेज़ोंका आर्कट-रुपया खूब चालू था। इसका कारण यह था कि यहाँसे हाथ बदलते ही वह फिर दक्षिण लौट जाता। लेकिन औरंगज़ेबकी मृत्यु होते ही जैसे दक्षिणका युद्ध रुका अब और आर्कट रुपया इस देशमें नहीं चल पाता। हिन्दुस्तान (बंगालके बाहर उत्तरी भारत) में सिक्का चलता था। आर्कट-रुपयेको बदल कर सिक्का-रुपये लेने जानेपर बहुत बट्टा देना पड़ता, किसी भी तरहसे पूरा दाम नहीं मिलता। इससे अंग्रेज़ोंका बहुत नुकसान होने लगा। कम्पनीके डायरेक्टर गुस्सेसे लाल थे। उन्होंने सीधे यह समझ लिया कि यह निश्चित रूपसे उन्हींके कर्मचारियोंकी किसी प्रकारकी चालाकी है।

यह देखकर अंग्रेज़ लोग मुर्शीद कुली खाँसे अनुनय-विनय करने लगे कि कलकत्तेमें उन्हें एक टकसाल खोलनेका हुक्म दिया जाय। अनुरोध सुनकर मुर्शीद कुली खाँ बिलकुल जैसे आसमानसे गिरे। ये सब कहते क्या हैं। टोपीवाले तो खूब बे-अदब हैं ? यह बेढंगा व्यर्थका दावा है। जो प्रजा आज अपना टकसाल खोलना चाहती है वह तो कल नवाबी गद्दी

माँग बैठेगी। कहना बेकार है कि अंग्रेज़ोंकी प्रार्थना मंज़ूर नहीं हुई मुर्शीद कुली खाँने चिट्ठी पढ़ उन्हें तत्काल विदा कर दिया।

: १० :

दूतकी अपेक्षा दुर्ग अच्छा, सुननेमें तो बात अच्छी है। किन्तु कहना जितना सहज था, करना उतना सहज नहीं हुआ। अन्तमें अंग्रेज़ोंको भी दूत भेजना पड़ा। क्यों ऐसा हुआ, वही बात कह रहा हूँ।

नबाबके पास अनेक प्रकारसे अनुनय-विनय करने, नाना प्रकारके नज़र-उपहार भेंट करने तथा अच्छे-अच्छे वकीलोंको नियुक्तकर अर्ज़ी पेश करनेपर भी कुछ फल नहीं निकला। मुर्शीद कुली खाँको एक इञ्च भी नहीं डिगाया जा सका। तब निरुपाय होकर अंग्रेज़ोंने सोचा, भाग्य आजमानेके लिए एक बार स्वयं बादशाहके पास दरबारकर क्यों न देखा जाय कि उसका क्या फल होता है। उस समय अज़ीमुस्सानका पुत्र फ़र्रुखसियर दिल्लीका बादशाह था। अज़ीमुस्साननने ही उन्हें तीन ग्राम खरीदनेका पर्वाना दिया था, यह बात अंग्रेज़ भूले नहीं थे।

वही अर्मिनियन सौदागर खोजा सरहद, जिन्होंने अजीमुस्सानके पाससे अंग्रेज़ोंको ज़मीन खरीदनेकी अनुमति ला दी थी, वे इस सम्बन्धमें खूब उत्साह देने लगे। उन्होंने प्रस्ताव किया कि वे स्वयं अंग्रेज़ोंकी तरफ़से वक़ालत करनेके लिए दिल्ली जानेको तैयार हैं। किन्तु प्रेसिडेण्ट राबर्ट हेजेस इसके लिए राजी नहीं हुए। उन्हें लगा कि कम्पनीके खर्चेसे खोजा साहब अपना काम बना लेनेकी ताकमें हैं। बहुत तर्क-वितर्कके बाद स्थिर हुआ कि अंग्रेज़ोंके दौत्यके प्रधान पण्डा होंगे काउन्सिलके ही एक गण्यमान्य मेम्बर, जान सुरमैन। खोज़ा सरहद अवश्य साथमें रहेंगे। एडवर्ड स्टीफन्सन नामका एक अत्यन्त बुद्धिमान् छोकरा मुंशी उनका सेक्रेटरी हुआ।

[illegible]काये सन् १७१५ ई० के अप्रैल महीनेमें दिल्लीके बादशाह फ़र्रुखसियरको में वा[illegible] देनेके लिए उपहारकी सामग्रियोंसे नाव भरी गई। उन चीज़ोंका दाम [illegible]ा हु[illegible] तीन लाख रुपया होगा। बहुत रुपया खर्च हुआ जा रहा है, यह देख अंग्रेज़[illegible]ोंमें व्यापार कर कुछ रुपया वसूल कर लेनेके उद्देश्यसे नाना प्रकारकी चीज़ें भी साथमें ले ली गयीं। फूल काढ़े हुए ज़रीदार रेशमी कपड़े, मख-मल, ऊनी कपड़े आदि। इसके अलावा हरेक प्रकारके मनिहारीके सामान, नाना प्रकारके धातु निर्मित वर्तन, घड़ी, पिस्तौल, आईना, छुरी, कैंची, खिलौना, शीशा, चीनी मिट्टी, जस्ता तथा ताँबेके पात्र इत्यादि बहुत-बहुत तरहके सामान।

नक़द रुपया भी काफ़ी साथमें लेना पड़ा। उन दिनों तो दायें-बायें घूस दिये विना किसी भी कामका अच्छी तरह बन्दोवस्त नहीं हो पाता। प्यादासे लेकर मन्त्री तक सभीको पद-मर्यादाके अनुसार कम या वेशी दक्षिणा देनी होती। नहीं तो कौन किसकी बात सुने? लेकिन इस सीधी-सी बातको कम्पनीके डाइरेक्टर किसी भी तरह समझना नहीं चाहते। इसीको लेकर प्रत्येक पत्रमें वे कलकत्ताकी काउन्सिलके साथ खटपट करते। इसके ऊपर उन दिनों सरकारी काममें समय भी बहुत अधिक लगता। छत्तीस महीनेका साल होता। अतएव रुपया तो बहुत लगेगा ही।

अंग्रेज़ दूतोंके बीमार आदिकी हालतमें देखभालके लिए उनके साथ एक डाक्टर भी दिया गया। इस डाक्टरके सम्बन्धमें एक-दो बातें नहीं कहनेपर अन्याय होगा। डाक्टरी पास करते ही विलियम हैमिल्टन कम्पनी-के जहाज़पर डाक्टर होकर भारतवर्षकी ओर रवाना हुए। जहाज़के कप्तानके अत्यन्त रूखे व्यवहारसे क्षुब्ध होकर हैमिल्टनने जहाज़से उतरकर फिर उस ओर रुख नहीं किया। पकड़े जानेपर फिर उसी जहाज़पर लौट-कर जाना होगा इसी भयसे वे मद्राससे एकदम सीधे कलकत्ता भाग आये। कलकत्तेमें उस समय नाना रोग प्रबल हो रहे थे। और एक डाक्टरकी विशेष रूपसे आवश्यकता थी। तीन पौण्ड अर्थात् उन दिनोंके चौबीस रुपये

महीनेपर हैमिल्टन साहव कलकत्ताके दो नम्बरके डाक्टरके पदपर नियुक्त हुए।

कलकत्तेको छोड़कर सुरमैन साहव अपने दलवलको लेकर विभिन्न प्रदेशोंको पारकर अन्तमें तीन महीने वाद दिल्ली पहुँचे। लेकिन पहले प्रेसिडेण्टके परिचय-पत्रको दाखिल करनेके वाद वादशाहके साथ और भेंट ही नहीं होती। वड़े-वड़े अमीर-उमरावोंको पकड़नेपर भी कुछ नहीं हुआ। वे विना हिचक घूस लेते, सहज भावसे वहुमूल्य उपहार ग्रहण करते, लेकिन कामके जैसा कोई काम नहीं कर पाते। वादशाहको भी आज सिर दर्द, कल पेट दर्द, परसों शिकार, तरसों तीर्थयात्रा—एक-न-एक कुछ लगा ही रहता। लगा जैसे कार्योद्धार किये विना ही अग्रेज़ोंको लौटना पड़ेगा। इसी समय अचानक एक मौक़ा मिल गया।

वादशाह फ़र्रुख़सियरके साथ राजपूत राजा अजितसिंहकी लड़कीकी शादीकी वात वहुत दिनोंसे पक्की थी। इस समय कन्या पक्षवाले सलाहकार, लाव-लश्कर, वाजे-गाजेके साथ दिल्लीमें उपस्थित थे। उधर वादशाह वहुत अधिक वीमार हो गये थे। अच्छे-अच्छे हकीम-वैद्य तो निराश हो माथेपर हाथ घरे वैठ गये। विवाहकी पूरी तैयारियोंके वर्वाद हो जानेका उपक्रम था।

ऐसे समय सुना गया अंग्रेज़ोंके साथ एक साहव डाक्टर हैं। वैसे ही वुलाओ-वुलाओकी रट लग गई। हैमिल्टन साहवने वादशाहके शरीरमें अस्त्र लगाकर उन्हें अच्छा कर दिया। चंगे होकर वादशाहने हैमिल्टनको ख़िलअत दी। हीरे की अंगूठी और जवाहरातकी तलवार वख्शीश दी। उनके डाक्टरी यन्त्रादिको सोनेसे मढ़वा दिया।

मौक़ा देख सुरमैन साहवने कोर्निश की और वादशाहके निकट अग्रेज़ों-की अर्ज़ी पेश की। वादशाह उस समय ख़ुशीसे भरपूर थे। अत्यन्त प्रसन्न थे। अर्ज़ी पढ़नेके साथ ही वोले, तथास्तु! किन्तु कहनेसे क्या होता है? उस समय सभी विवाहोत्सवमें मत्त थे। इस समय क्या कोई सरकारी काम-

में मन लगा सकता है ? देखते-देखते और छः महीने वीत गये । सुरमैन [illegible]व कलकत्ते वार-वार चिट्ठी लिखते, रुपया भेजो, रुपया भेजो । कलकत्ते-[illegible]ाउन्सिलको तो खूब रंज मालूम होने लगा ।

[illegible] वादमें मालूम हुआ कि देरी होनेके एक प्रधान कारण मुर्शीद कुलीखाँ [illegible]थे । उन्होंने जैसे ही सुना कि साहसकर अंग्रेज़ोंने वादशाहके पास दूत भेजा है, वैसे ही वे भी जोर-शोरसे लग गये कि किसी भी तरह अंग्रेज़ इस मामलेमें सफल मनोरथ न हो सकें । दिल्ली दरवारके जितने भी प्रभावशाली अमीर-उमराव थे उन सभीको मुर्शीद कुलीखाँने पत्र लिखकर अनुरोध किया कि वे जिसमें इस मामलेमें विशेष रूपसे वाधा दें । पत्रके साथ अवश्य ही आवश्यक रूपसे दक्षिणाकी भी व्यवस्था थी, यह कहना वेकार ही है ।

किन्तु अन्तमें देखा गया कि वादशाहने अग्रेज़ोंकी सभी प्रार्थनाओंको मंजूर कर लिया है और फर्मान पर सही कर दिया है । सन् १७१७ ई० के जून महीनेमें वादशाही फर्मानको पाकेटमें भर सुरमैन साहवने साथियों-को लेकर दिल्ली छोड़ दी । फर्मानकी एक-एक कापी सूरत, मद्रास और मुर्शिदावाद चली गयी ।

वादशाह फ़र्रुखसियरने हैमिल्टनको दिल्लीमें रखनेकी यथाशक्ति चेष्टा की लेकिन डाक्टर साहव चतुराईसे टाल गये । और भी आवश्यक वहुत-सी दवाइयोंका संग्रह कर वे शीघ्र ही लौट आयेंगे, यह आश्वासन देकर हैमिल्टन साहवने उस समयके लिए जान छुड़ाई ।

कलकत्तेमें लौट हैमिल्टन साहव अधिक दिन नहीं वचे । सन् १७१७ई० के ४ दिसम्वरको उनकी मृत्यु हो गई । कलकत्तेके पुराने कब्रिस्तानमें उन्हें दफ़नाया गया था । लेकिन वह कब्र अव और देखनेको नहीं मिलती । सेण्ट जान्स चर्चकी नींवके नीचे अन्तर्धान हो गई है । केवल क़ब्रके ऊपरके पत्थरका वादमें उद्धार हुआ । वह इस समय जोव-चारनकके समाधि-मन्दिरकी कुर्सीमें जड़ा हुआ है ।

वादशाह फ़र्रुखसियरने पहले तो हैमिल्टनकी मृत्युकी खबरका विश्वास

नहीं किया। उन्होंने समझा कि फिर जिसमें दिल्ली लौटकर न आना पड़े शायद इसीलिए मिथ्या प्रचार किया गया है। लेकिन जब उनके अपने आदमी कलकत्ते आकर अपनी आँखों हैमिल्टनकी क़ब्र देख गये तब वे क्या करते? क़ब्रके पत्थरके ऊपर अंग्रेज़ीमें लिखे हुए शब्दोंके नीचे फ़ारसी इन्सक्रिप्शन लिखवा देनेकी उन्होंने व्यवस्था कर दी।

मरनेके पहले बिल करके हैमिल्टन उपहारमें दी हुई बादशाहकी वस्तुओंको सुरमैन साहबको दान कर गये थे। सुरमैन साहब इसके बाद और आठ वर्षों तक जीवित रहे। सन् १७२४ ई० में उनकी भी यहीं मृत्यु हुई। उनकी भी क़ब्र हो सकता है उसी एक ही क़ब्रिस्तानमें थी।

एडवर्ड स्टीफन्सनने बादमें बहुत उन्नति की थी। काउन्सिलके गण्यमान्य मेम्बर होकर वे एक बार एक दिनके लिए फोर्ट विलियमके एक्टिंग प्रेसिडेण्ट भी हुए थे।

खोजा सरहद अंग्रेज़ोंको रुपये-पैसेका हिसाब-किताब नहीं समझा सकनेके कारण चुंचड़ा भागकर डचोंके इलाक़ेमें बने रहे। कलकत्तेमें उनका एक मकान था। उसे बिक्री कर देनेपर अंग्रेज़ोंके सिर्फ़ ५५६४ रुपये वसूल हुए।

१९ अक्तूबर सन् १७१७ ई० को मुर्शीद कुली खाँने बादशाह फ़र्रुखसियरको एक लाख रुपया नज़राना देकर बंगालके सूबेदारी-पदका पर्वाना मँगा लिया। तभीसे नवाबका सरकारी नाम हुआ जाफरखाँ। लेकिन हम उन्हें मुर्शीद कुलीखाँ कहकर उल्लेख करेंगे। क्योंकि ऐसा देखता हूँ कि इतिहासमें बहुत जगह उन्हें जाफरखाँ कहा गया है और किसी-किसीने मीर जाफरके साथ उन्हें मिला-जुला भूल की है।

बादशाहके पाससे फ़र्मानका ले-लेना उतना कठिन नहीं हुआ जितना कठिन उसे काममें लगाना हुआ। आजकलके अदालतसे डिग्री पाने जैसा। डिग्रीदारको परेशानी तो डिग्री पानेके बाद ही होती है।

फ़र्रुखसियरके फ़र्मानमें स्पष्ट ही लिखा हुआ था कि अंग्रेज़ कम्पनी

पहलेकी तरह ही एक मुश्त तीन हज़ार रुपया ख़ज़ानेका देकर सर्वत्र व्यव-[illegible]साय चलाते ज़ाएँगे; इसमें कोई वाधा नहीं दे सकता। फ़र्मानमें कलकत्तेके [illegible]ासके अड़तीस ग्रामोंके ख़रीदनेकी भी अनुमति दी हुई है। उसमें [illegible] भी कहा गया है कि अंग्रेज़ोंका आर्कट-रुपया वंगालमें जैसे पहले चलता [illegible]थे, वैसे ही अव भो चलेगा। उसको वदलवानेमें किसी प्रकारका बट्टा नहीं देना होगा। ज़रूरत पड़नेपर अंग्रेज़ लोग अपना एक टकसाल भी बनवा सकते हैं।

लेकिन इतना सव करनेपर भी अंग्रेज़ोंके भाग्यमें सुख तो जुटा नहीं उल्टे जितनी कुछ शान्ति थी वह भी जाने जैसी हो गई। मुर्शीद कुलीख़ाँने अंग्रेज़ोंके घोड़ेसे कतराकर घास खानेवाली नीतिको अच्छी दृष्टिसे नहीं देखा। उस समय देशकी अवस्था ऐसी थी कि लोग वादशाहकी अपेक्षा नवावसे ही अधिक भय खाते। वंगालमें किसकी इतनी मज़ाल है जो नवाव मुर्शीद कुली ख़ाँकी वातको नहीं मानेगा? नवावका सख्त आदेश था कि अंग्रेज़ोंको जिसमें कोई ज़मींदार एक टुकड़ा भी ज़मीन विक्री न करें, वाद-शाही फ़र्मान हो या न हो।

कम्पनीके डायरेक्टरोंने भी कलकत्ताके अंग्रेज़ोंकी ज़मींदारी ख़रीदनेकी आतुरताका कारण अच्छी तरह नहीं समझा। इस वारेमें उनकी ओरसे कोई भी आग्रह नहीं था। वल्कि वे वारवार लिखने लगे कि हम लोग वनिया हैं, हम लोगोंका काम व्यापार करना है, ज़मींदारी चलाना नहीं। हमारे कर्मचारी इस वातको ध्यानमें रखें तो हम लोग खुश होंगे। हमलोगों ने जितनी भी ज़मीन पाई है वही हम लोगोंके लिए काफ़ी है। और अधिक वढ़ानेपर उस ज़मीनकी रक्षा करनेमें ही प्राणोंपर आ बनेगी। आदमी, सेना, अस्त्रशस्त्र वहुत कुछ रखना पड़ेगा। उसमें जिस प्रकारसे खर्च है, उसी प्रकारसे झंझट भी है।

कलकत्तेके अंग्रेज़ भी धूर्तता करनेमें कुछ कम नहीं थे। दोनों ओरसे संकट देखकर उन्होंने एक अच्छी चाल चली। अपनी आश्रित देशी प्रजा-

को पट्टा देकर कलकत्तेके आसपासके ग्रामोंमें बसा दिया। ये लोग ज़मीं-दारकी साविक प्रजामें जिससे भी पाना संभव हो सका उसका घर-द्वार सब खरीद लिया। जिन लोगोंका नहीं खरीद सके उन्हें ज़बर्दस्ती ठेलव हटा दिया और उनके घर आदि दखल कर लिये। ज़मींदारोंकी परेशानी तो अन्तिम शिखरपर चढ़ गई। वे सरकारा सिरिश्तेमें खज़ानेका रुपया भरते मरते। लेकिन प्रजाके पाससे एक पैसा भी मालगुजारी नहीं वसूल कर पाते।

कलकत्तेके आसपास अंग्रेज़ोंने जिन ग्रामोंको खरीदनेकी अनुमति पाई थी, उनमें चितपुर, सिमले, मिर्जापुर, आरपुली, कलिगा, चौरंगी और विर्जितला थे। इन सवोंको धीरे-धीरे चालाकीसे उन लोगोंने अपने कब्ज़ो-में कर लिया। और अन्य जो थे जैसे वेलगेछे, उल्टाडिंगी, कामारपाड़ा, कांकुड़गाछी, बाग़मारी, टांगरा, सुंड़ो, तिनजला, गोवरा, सेयालदा, एण्टाली, डिही, श्रीरामपुर, वैसे ही पड़े रहे। वहुत दिनों तक अंग्रेज़ोंने इन सवोंका दखल नहीं पाया। जव मीर जाफ़रने वंगालकी नवावीकी गद्दी पाई और चौवीस परगनाको अंग्रेज़ोंके हाथमें रख दिया उसी समय इन सवोंका वे भोग कर सके। गंगाके उस पार हावड़ा, शाल्के आदि जगहोंमें जो ग्राम अंग्रेज़ोंने पाये थे, वहाँ जानेमें उन लोगोंको और भी देरी हुई।

अंग्रेज़ोंके रंग-ढंग देख मुर्शीद कुलीखाँने भी एक चाल चली। अंग्रेजों-के जो पुराने तीन ग्रामों अर्थात् सुतोनुटि, कलकत्ता और गोविन्दपुरके लिए पाये जानेवाले सरकारी खज़ानेके रुपयेको नये सिरेसे निश्चित कर इन्होंने उसे प्रायः तीन गुना बढ़ा दिया और बारह वर्षका वक़ायाके बावत चौआ-लीस हज़ार रुपये तलब किये।

अंग्रेज़ लोग तो वहुत ही चक्करमें पड़ गये। अवश्य ही अन्ततक यह बढ़ाया हुआ टैक्स उन्हें नहीं देना पड़ा तो भी उसके लिए वहुत दिनोंतक अत्यधिक झंझटका भोग करना पड़ा। उसके लिए इधर-उधर घूसघास देते प्रायः उतने ही रुपये निकल गये। तव इससे यही हुआ कि ज़बर्दस्ती

ज़मींदारी बढ़ानेकी अपनी चेष्टाको उस समय अंग्रेज़ोंको एकदम ही दवा रखना पड़ा।

मुर्शीद कुलीखाँ एक वातकी ओरसे खूव ही सावधान थे। अंग्रेज़ोंका वाणिज्य-व्यापार जिसमें विलकुल वन्द न हो जाय इस सम्वन्धमें वे वहुत ही सतर्क थे। यद्यपि नाना प्रकारके छल-कपटसे मुर्शीद कुलीखाँ अंग्रेज़ोंसे जवतव एक अच्छी खासी रक़म वसूल लेते, रुपया नहीं देनेपर उनका माल रोक रखते, तवतकके लिए व्यवसाय वन्द कर देते, लेकिन यह सव वहुत ही थोड़े समयके लिए होता। शीघ्र ही कुछ रुपया लेकर निपटारा कर देते।

और दूसरी ओर जिसमें विदेशी व्यापारपर अंग्रेज़ लोग एकदम एकाधिपत्य न जमा लें, इसीलिए दूसरे-दूसरे विदेशी वनियोंके लिए वहुत-सी सुविधाएँ कर देते। ऐसे ही मौक़ेमें डचोंने अपना महसूल (Tariff) कम करा लिया। फ्रेन्च लोगोंने फिरसे आकर वंगालमें व्यापार करना शुरू किया। अस्टेण्ड कम्पनी नामकी एक जर्मन व्यापारी कम्पनी इसी समय वंगालमें आ जुटी। वैरकपुरसे तीन-चार मील उत्तर वाँकीवाज़ार उनका अड्डा वना। मुर्शीद कुलीखाँने इन सवोंको समान रूपसे स्वीकार किया।

अंग्रेज़ोंका व्यापार इन्हीं कई वर्षोंमें इतना उन्नति कर गया था कि वहुत नाजायज रुपया देनेपर भी उनको वहुत लाभ होता। अर्म साहवने अपने प्रसिद्ध इतिहास-ग्रन्थमें लिखा है कि फ़र्रुखसियरका फ़र्मान पानेके वादसे ही अंग्रेज़ोंके व्यापारकी अद्भुत उन्नति शुरू हुई।

इससे सभीका लाभ हुआ। कम्पनीका तो हुआ ही। कम्पनीके स्टाक होल्डर प्रत्येक वर्ष सैकड़े दस पौण्ड डिविडेण्ट पाकर अत्यन्त खुश हुए। यहाँके अंग्रेज़ कर्मचारियोंके भी भाग्य खुल गये। वे अपने बचायें हुए रुपयेसे कुछ अच्छा-सा व्यवसाय करने लगे। अंग्रेज़ोंके साथ उनके सम्पर्कमें आये देशी लोग भी कुछ वंचित न रहे। लाभका अंश पानेके समय वे भी छूटे नहीं।

अंग्रेजोंकी व्यावसायिक वुद्धि वरावरसे ही कुछ तीक्ष्ण रही है। इसीके

लिए तो नेपोलियन जवतव अंग्रेज़ जातिका मज़ाक़ उड़ाते। वे कहते, अंग्रेज़ दुकानदारोंकी जाति हैं। आमदनी समझ बजट वना खर्च स्थिर कर चलना अंग्रेज़ोंके स्वभावमें है। इकनामिक्स और फाइनान्सकी नीतिको वे अच्छी तरह समझते भी और कार्यक्षेत्रमें उसे ठीक मानकर चलते भी।

लेकिन इन्हीं दो विषयोंमें हमारे देशी मालिक विलकुल कोरे थे। क्या पठान, क्या मुग़ल, क्या राजपूत, क्या मराठा, क्या जाट, क्या सिक्ख किसीको भी यह ज्ञान नहीं था। फल यह होता था कि उन्हें वरावर अभाव ही वना रहता। वरावर ही मुफ़लिसों जैसी उनकी अवस्था वनी रहती, जिसे अंग्रेज़ीमें क्रानिक इन्साल्वेन्सी कहते हैं। लेकिन उस अभावका सब धक्का ग़रीव प्रजाको सहना पड़ता। उस झंझटके मिटाते-मिटाते वे बिलकुल ठंडे पड़ जाते।

वड़े-वड़े सेठ-महाजनोंने भी सिवा सूदपर रुपया देनेके देशकी सार्वजनीन उन्नति हो ऐसे किसी काममें हाथ लगाया हो, ऐसा तो कहीं देखनेको नहीं मिलता। पर एक बात है। उन दिनों लोगोंके कर्मक्षेत्रका विस्तार कम था। इसके अलावा वरावर ही मनमें भय वना रहता कि कव राजा-वादशाह लोग उनके रुपयेपर नज़र लगायें! उस समय केवल रुपयेके लिए ही नहीं, प्राण लेकर भी खींचातानी होती।

कोई भी सैनिक ठीक समयपर वेतन नहीं पाता। प्रायः सभीका कम-से-कम तीन वर्षका वेतन तो वाक़ी पड़ा रहता। अतएव वे सभी सैनिक और सामन्त जो युद्धसे अधिक लूट दराज़की ओर ही अधिक ध्यान देते तो इसमें आश्चर्य क्या था? सरकारी कर्मचारी भी नियमानुसार वेतन नहीं पाते। वे भी प्रजाकी गर्दन मरोड़ उसे पूरा कर लेनेकी चेष्टा करते।

अंग्रेज़ोंकी उन्नतिका एक और कारण था। वह पूराका पूरा चारित्रिक है। काममें दत्तचित्त लगे रहनेकी उनकी क्षमता अद्भुत है। बाधा-विपत्तिसे वहुत सहज ही वे घवराते नहीं वरन् उससे जैसे उनकी वुद्धि और अधिक खुलती है। अभी ही यह हो ऐसा कर कामको नष्ट करनेवाले अंग्रेज़के

बच्चे नहीं होते। 'शनैः पन्थाः शनैः पर्वतलंघनम्'—देखता हूँ कि इसी नीति-को पद-पदपर मानकर वे चले हैं, चाहे व्यवसाय-वाणिज्य हो, चाहे शहर की उन्नति करनी हो, अथवा युद्ध-विग्रह हो।

इसी समय अंग्रेज़ लोग व्यवसायके क्षेत्रमें एक नयी चाल चलनेके फेरमें थे लेकिन मुर्शीद कुलीखाँने उसे कारगर नहीं होने दिया। अंग्रेज लोग फ़र्रुखसियरके फ़र्मानका एक मज़ेदार अर्थ लगानेके चक्करमें थे। उन लोगोंने कहा कि इस फ़र्मानके द्वारा विना महसूल (tariff) दिये केवल विदेशी माल इस देशमें लाने-भेजनेका ही अधिकार उन्होंने नहीं पाया है बल्कि देशी माल भी इस देशमें विना महसूलके स्वतन्त्रतापूर्वक खरीदने-बेंचनेकी अनुमति पाई है। मुर्शीद कुलीखाँने उत्तरमें स्पष्ट रूपसे बतला दिया कि ये सब चालाकी नहीं चलेगी। कुशल चाहते हो तो रुक जाओ, नहीं तो सामने ही समुद्र पड़ा हुआ है।

बादमें इसी बातको लेकर ही एक बड़ा-सा युद्ध हो गया था। उस युद्धमें बंगालके और एक नवाब मीरकासिमको बंगालकी गद्दी छोड़ देनी पड़ी थी। वह सन् १७६४ ई० का बक्सरका युद्ध था। यह कहानी मुझे नहीं कहनी है वह सर्वथा दूसरी कहानी है।

: ११ :

इसी समय अंग्रेज़ोंका चर्च तैयार हो गया है देखकर, कलकत्तेके पोर्तुगीज़ और आर्मिनियन लोगोंने भी अपने पुराने चांचर टट्टीसे घिरे हुए लकड़ीके बने गिर्जाघरोंको गिराकर पक्का ईंट-चूनेका गिर्जा उठानेकी इच्छा की। इसके पहले ईस्ट इण्डिया कम्पनीने मुर्गीहाटामें पोर्तुगीज़ोंको और खेंगरापट्टीमें आर्मिनियनोंको गिर्जा बनानेके लिए एक-एक टुकड़ा ज़मीन दिया था। पोर्तुगीजोंने अपने पुराने गिर्जाघरको तोड़कर वहींपर सन् १७२० ई० में नया पक्का गिर्जाघर बनाया। उसका नाम हुआ चर्च ऑफ़ दि वर्जिन

मेरी ऑफ़ दि रोसारी। सन् १७२४ ई० में आर्मिनियनोंका चर्च सेण्ट नाज़ारेथ चर्च तैयार हुआ।

अंग्रेज़ोंका सेण्ट एन्स चर्च जब सिराजुद्दौलाके हाथों नष्ट हो गया तब बहुत दिनों तक उन्होंने पोर्तुगीज़ोंके इस चर्चपर अधिकार जमा अपने उपासनाके काममें लगाया था। इसके बाद लगता है उनके मनमें आया कि पोर्तुगीज़ोंके रोमन-कैथोलिक चर्चमें अंग्रेज़ोंके समान कट्टरपन्थी प्रोटेसटैण्टों की प्रार्थना निश्चय ही स्वर्ग तक इतनी दूर नहीं पहुँच पाती। पोर्तुगीज़ोंको उनका गिर्जा लौटाकर फिर फोर्ट विलियमके उसी नम, अन्धेरी कोठरीमें उन्होंने उपासना शुरू की।

इस देशके पोर्तुगीज़ोंकी सन्तान फिरंगीके नामसे प्रसिद्ध हुई थी। उनका अंग्रेज़ी नाम पहले ईस्ट इण्डियन था, बादमें यूरेशियन हुआ और उसके बाद एंग्लो-इण्डियन। इस देशकी स्त्रीके गर्भसे अंग्रेज़ोंके जो बच्चे हुए वे भी इसी दलके थे।

फिरंगी-समाजकी लड़कियोंमें एक अच्छा-सा भड़कीला सौन्दर्य था। वह अवश्य दो दिनोंका ही था। उनके मोहमें पड़कर बहुत-से अंग्रेज़ छोकरे विलायती मेमोंको छोड़कर उन्हींसे ब्याह कर लेते। उस समय कलकत्तेके अंग्रेज़ोंके समाजमें ब्याह करने लायक लड़की पाना अवश्य ही कठिन था। इसके क़रीब तीस-पैंतीस वर्षों बाद जब केवल वर जुटानेकी कोशिशमें ही दलकी दल विलायती लड़कियोंने इस देशमें आना शुरू किया, तब भी अंग्रेज़-छोकरोंका मन इन्हीं यूरेशियन छोकरियोंमें लगा रहता। उनकी कैसी खिची-खिची आँखें थीं, आधी-आधी बातें तथा कैसा एक नाज़ुक-नाज़ुक-सा भाव था। अच्छा सुन्दर मोहक चेहरा था। साँवले रंगपर सुन्दर दिखता।

किन्तु रिटायरकर घर लौटनेके समय इन सब स्त्रियोंको लेकर बड़ी मुश्किल होती। इस देशको छोड़कर वे विलायत जाना नहीं चाहतीं, यहीं रह जातीं। उनके पतियोंको भी इंगलैण्ड ले जानेमें थोड़ी हिचक होती।

कारण यह था कि वे जिस ऐक्सेण्टसे अंग्रेज़ी बोलतीं वह खास विलायती लोगोंको बहुत ही विचित्र लगता। इसीलिए अंग्रेज़ोंकी गोष्ठीमें इसका नाम ही हो गया था—चिं चिं इंग्लिश। यह चिं-चिं शब्द अवज्ञा सूचक बंगलाके छी-छी शब्दसे ही निकला है। ऐसा बहुतोंका अनुमान है। इन सब स्त्रियों-के लड़के-लड़कियाँ अन्तमें उसी यूरेशियन दलमें ही जा जुटते।

दल वृद्धि होनेपर ये लोग मुर्गीहाटासे बाहर निकल बहुबाज़ार, वेलिंगटन स्क्वायर तथा धर्मतलासे लेकर पार्क स्ट्रीट तक फैल गये। पहले इन लोगोंमेंसे जो शिक्षित थे, उन्हें अंग्रेज़ोंके सरकारी दफ़्तर और फ़ौजमें जगह मिलती। उसके बाद अभी कुछ दिन पहले तक रेल, टेलिग्राफ़, कस्टम्स, पुलिस, सर्जेण्टकी नौकरीपर इन्होंने एकाधिपत्य कर रखा था।

थोड़ा सफ़ेद चेहरा होनेपर ये अपनेको यूरोपियन जाहिर करनेकी कोशिश करते। यहाँ तक कि बहुतोंने पैतृक उपाधिका त्यागकर विशुद्ध अंग्रेज़ी उपाधि ग्रहण की है, ऐसे उदाहरण भी कम नहीं हैं।

मैं जिस समयकी बात कह रहा हूँ उस समय इन दोगले आधे यूरोपियनोंमें निम्न श्रेणी वाले, अंग्रेज़ोंके बाय-बावर्ची-आयाके रूपमें क्रीत दास-दासी होकर रहते। पुराने विलों (वसीयतों) को थोड़ा उलटने-पुलटने-पर यह देखा जा सकता है कि बहुतसे सज्जन अंग्रेज़ मरनेके पहले दयावश विल (वसीयत) करके उन्हें दास्यवृत्तिसे मुक्त कर गये हैं।

आर्मिनियनोंकी संख्या इस समय कलकत्तेमें बहुत ही कम है, प्रायः उँगलीपर गिने जाने योग्य। जो कई व्यापारको लेकर यहाँ हैं वे इस समय साहबोंके मुहल्लेमें ठीक अंग्रेज़ोंके समान ही चलते-फिरते हैं। वैसे एक ऐसा दिन भी था जब वे इस देशका पहनावा पहनकर, चाल-चलन, बोलचाल यहाँ तक कि नाम उपाधिमें भी मुगलोंका ढंग मानकर चलते थे।

बंगालियोंमें उन दिनों गोविन्द मित्तिरका खूब नाम था। वे बैरकपुरके पास अपने ग्राम चानकको छोड़कर कलकत्तेके पक्के बाशिंदा हुए। कुछ दिनों बाद कलकत्तेके ज़मीदारके नीचे ब्लैक ज़मींदारका पद भी उन्हें मिला।

उसी समयसे पलासी-युद्धके पहले तक लगातार गोविन्द मित्तिर उसी काम-पर वहाल रहे।

हालवेल साहव जव कम्पनीकी डाक्टरी छोड़कर काउन्सिलमें घुसे और कलकत्ताके ज़मींदार हुए तव गोविन्द मित्तिरको भगानेके लिए उनके पीछे ज़ोरोंमें लग गये। मित्तिरके पुत्रपर वे अत्यन्त क्रुद्ध थे। लेकिन काउन्सिलमें मालिक्का वल रहनेके कारण गोविन्द मित्तिरकी नौकरी नहीं गई। गोविन्द मित्तिरने हालवेलके मुँहपर ही काउन्सिलको स्पष्ट रूपसे वतला दिया कि कम्पनी जो वेतन उन्हें देती है, उससे तो उनके पहनने-ओढ़नेका ही काम नहीं चलता, पेट भरनेकी तो वात ही दूर है। उनके जैसे नामी-गिरामी आदमीको अपनी इज़्ज़त वचा रखनेके लिए रुपयेकी आमदनीके लिए अन्य उपायका अवलम्वन करना ही पड़ता है। काउन्सिलके छोटे-वड़े सभी मालिक लोग उस समय अन्य अनेक उपायों द्वारा रुपया कमाते, वह सव मित्तिरका अच्छी तरहसे जाना हुआ था। अतएव उन्होंने और गोविन्द मित्तिरको उत्तेजित नहीं किया जिससे कहीं उन सभीकी वहुत-सी गुप्त वातोंका वाज़ारमें ढिंढोरा न पीट जाय।

ब्लैक ज़मींदार होकर रहते समय गोविन्द मित्तिरने नाना उपायोंसे वहुत रुपया जमा कर लिया था। अपने नामसे अथवा वेनामी रोज़गार द्वारा अच्छे-अच्छे वाज़ारोंका ठेका लेकर, सस्ते भावमें अपने आश्रितोंके वीच ज़मीन वन्दोवस्त कर वसूलीके रुपयेमें गड़वड़ी करके गोविन्द मित्तिर विलकुल रातोंरात वड़े आदमी वन गये।

उनका इतना रोव-दाव था कि 'गोविन्द रामेर छड़ि' (गोविन्द रामकी छड़ी) वंगालमें कहावत जैसा होकर रह गया है। उन दिनों देशी लोगोंके लिए प्रतिष्ठित होनेके दो उपाय थे। एक ऊपरवालोंका मन रखकर चलना, और दूसरा नीचेवालोंपर अत्याचार करना। सरकारी काममें देशी लोगों-की यह नीति मुसलमानी अमल तथा वृटिश शासनमें क़रीव एक जैसी ही रही है। थोड़ी-सी क्षमता हाथमें आते ही निरीह देशवासियोंके सिरपर छड़ी

घुमाना आज ही नहीं है। यह देशी ढंग बहुत दिनोंसे ही चला आ रहा है। लगता है, अभी भी बहुत दिनों तक चलता रहेगा।

भद्र लोगोंमें लगता है जैसे गोविन्दराम मित्तिर ही पहले-पहल गोविन्दपुरसे हटकर सुतोनुटिमें रहने लगे। कुमोरटुलिमें उनका मकान था। इसीसे इनके वंशके लोग कुमोरटुलिके मित्तिरके नामसे परिचित हैं। बादमें गोविन्द मित्तिरके वंशके बहुत लोगोंने अंग्रेज़ोंकी सरकारी नौकरीमें आ नाम कमाया था। इनके वंशके कुछ लोग गृह-कलहसे क्षुब्ध होकर कलकत्ता छोड़कर काशीमें जाकर रहने लगे। वहाँ वे चौखम्भाके मित्तिरके नामसे प्रसिद्ध हैं।

किन्तु गोविन्द मित्तिरके नाती राधाचरण मित्तिर एक बार फाँसोपर चढ़ते-चढ़ते रह गये। खोजा सुलेमान नामके एक यहूदीके पाससे कम्पनीके खरीदका काग़ज़ बिक्री-कवाला अपने नामसे जाली कर लिया था। अदालतमें इसके साबित हो जानेपर उस समयके क़ानूनके अनुसार राधाचरणको प्राणदण्डका आदेश मिला। यह २७ फरवरी सन् १७६५ ई०की बात है।

उस समयके कलकत्तेके बहुत-से गण्यमान्य व्यक्तियोंने इस दण्डके विरुद्ध गवर्नर स्पेन्सरके पास एक अपील की। स्वयं नवाब नाज़िम मीर जाफ़रके पुत्र नजमुद्दौलाने गवर्नरके पास अनुरोध भेजा कि जिसमें राधाचरणको रिहाई दी जाय। सब देख-सुनकर गवर्नर और उनकी काउन्सिलने राधाचरणकी फाँसीको मौकूफ़ किया था।

लगता है जैसे गोविन्द मित्तिरने सन् १७३० ई० के आसपास कुमोरटुलीमें गंगाके किनारे एक बहुत बड़े मन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी। उनका वह नौ शिखरोंवाला नवरत्न मन्दिर हम लोगोंके आक्टरलोनी मानुमेण्टसे भी ऊँचा था। बहुत दूरसे वह लोगोंकी दृष्टिको आकर्षित करता। यही अंग्रेज़ोंके निकट उस समयके कलकत्तेका दि ब्लैक पैगोडा था। सन् १७३७ ई०की आँधीमें सेण्ट एन्स चर्चके शिखरके समान इस मन्दिरके भी बहुत-से शिखर टूटकर गिर गये थे। सन् १८४० के भूकम्पमें सारा-का-सारा चूर

हो गया। इसके वाद किसीने भी इस मन्दिरका संस्कार नहीं कराया। इसका थोड़ा-सा ध्वंसावशेष अभी भी किसी तरहसे खड़ा है।

पोर्तुगीज़ोंका भी गिर्जा रह गया है। पर उसे पूरी तरहसे नये रूपमें ढालकर सजाया गया है। आर्मिनियनोंका गिर्जा भी है। उसका आधार ठीक रहनेपर भी ऊपरवाला हिस्सा वहुत-कुछ वदल गया है। यही इस समय कलकत्तेका सबसे पुराना ईसाई धर्म मन्दिर है।

: १२ :

व्यापारमें उन्नति होनेसे ही लोगोंके हाथमें रुपया आता है। हाथमें अधिक रुपया आते ही लोगोंका मिजाज गर्म हो उठता है। फलस्वरूप मामले-मुक़दमे वढ़ जाते हैं। इस क्षेत्रमें भी वही हुआ।

पहले-पहल अंग्रेज़ोंके आपसके वाद-विवादको काउन्सिलके प्रेसिडेण्ट और दो-तीन मेम्वर मिलकर वैठ जाते और उसे तय कर मिटा देते। प्रारम्भमें यह व्यवस्था मोटे तौरपर ठीक नहीं रही। लेकिन अन्तमें इस कामके लिए लोग पाना कठिन हो गया। उस समय सभी अपने-अपने धन्धे-में व्यस्त थे। कैसे दो पैसेकी जगह चार पैसेकी आमदनी की जा सकती है इसीकी ताकमें सभी घूमते। उस समय बिना पैसेके दूसरेके मामलेंका क़िस्सा सुननेकी क़िसकी इच्छा होती? इसीलिए कामके समय वुलाने जाने-पर सुननेको मिलता कि वारासतमें शिकार खेलने गया है तो कोई चूँचड़ा-चन्दननगरमें मौज करने गया है अथवा कोई गंगामें वोटपर चढ़कर हवा खाता हुआ घूम रहा है।

हालत देख, कम्पनीके डायरेक्टरोंने कलकत्तेमें न्याय-विचारकी सुव्य-वस्थाकी ओर ध्यान दिया। उन्होंने इंगलैंडके राजा जार्ज दि फर्स्टको पकड़ कर एक चार्टर निकलवा लिया। सन् १७२६ ई० में एक साथ ही एकदम चार-चार अदालतें वैठ गईं।

पहली मेयर्स कोर्ट थी। एक मेयर और नौ आल्डरमैनको लेकर यह सभा थी। इनका काम था कलकत्तेके यूरोपीयन बाशिन्दोंके बीच जो दीवानी मामले होते उन्हींका विचार करना।

इसके ऊपर एक अपील-कोर्ट थी। इसमें स्वयं प्रेसिडेण्ट और उनकी काउन्सिल थी। इसके अलावा प्रेसिडेण्ट और काउन्सिलकी अंग्रेजोंके जितने भी फौजदारी मामले थे, उनका विचार करनेका भार मिला। एक राज-द्रोहको छोड़कर अन्य सभी अपराधोंके लिए वे ही दण्ड देते। केवल राज-द्रोहीको पकड़-बाँधकर जहाज़पर चढ़ाकर न्यायके लिए इंगलैंड भेजा जाता।

छोटे-मोटे दीवानी मामलोंको शीघ्र निबटानेके लिए और एक कोर्ट बैठाई गई। उसका नाम कोर्ट आफ रिकुयेस्ट्स था, आजकलकी भाषामें छोटी अदालत। यद्यपि चौबीस कमिश्नर मिलकर इन सब मामलोंको सुनते तो भी वे मामले बीस रुपयेसे अधिक मूल्यके नहीं होते।

मेयर्स कोर्टका एक और बड़ा काम था। वह था मृत व्यक्तियोंकी छोड़ी हुई सम्पत्तिके वितरणकी व्यवस्था करना। विलका प्रोबेट देना, विल नहीं रहनेपर लेटर्स आफ एडमिनिस्ट्रेशनकी व्यवस्था करना, मृत व्यक्तिके स्टेटका हिसाब तलब करना—ये सभी मेयर्स कोर्टके जिम्मे थे। इसके ऊपर पागल, नाबालिग, दिवालिया आदि जितने अक्षम व्यक्ति थे, उनका गार्जि-यन ठीक कर देने तथा उनकी सम्पत्तिकी हिफाजत करनेका भार भी मेयर्स कोर्टके ही ऊपर पड़ा।

मेयर्स कोर्टमें देशी लोगोंकी गवाही लेनेकी ज़रूरत पड़नेपर किस तरह उनसे हलफ़ कराना होगा, इसे लेकर बहुत दिनों तक बहसा-बहसी चली थी। अन्तमें डायरेक्टरोंने इसकी एक मीमांसा कर दी। उन्होंने कहा, देशी लोगोंको क्रिश्चियानी ढंगसे शपथ खिलानेका क्या कुछ भी अर्थ होता है? उस प्रकारके हलफ़का मूल्य ही क्या है? इस तरहसे करनेके लिए बाध्य करनेपर उनके मनमें भय हो सकता है कि हम लोग शायद उसकी जाति

लेनेकी चेष्टामें हैं। अतएव ताँबा-तुलसी-गंगाजल लेकर वे जिस तरह शपथ करते हैं, उन्हें वही करने दो।

कलकत्तेमें देशी लोगोंके दीवानी और फ़ौजदारी दोनों प्रकारके मामलों-के विचारका भार ज़मींदारोंपर था, यह हम पहले ही कह चुके हैं।

उनके दीवानी मामलेका विचार जिसमें देशी आईनके अनुसार ही हो, इसके लिए देशी बाशिन्दोंने एक दरख्वास्त दी। देशी आदमियोंकी मध्यस्थतामें ही उनके मामलेका फैसला होना चाहिए। डायरेक्टरोंने अपनी सम्मति जताई। तब फौज़दारी मामलोंमें बाध्य होकर देशी लोगोंको ज़मींदारोंकी कचहरीमें दौड़ना पड़ता। उससे किसी प्रकार छुटकारा नहीं मिलता।

अंग्रेज़-ज़मींदार जो देशी लोगोंके फौजदारी मामलोंका विचार करते और उसके लिए सज़ा भी देते—यह हुगलीके फौज़दारको बिलकुल ही पसन्द नहीं था। सच्ची बात तो यह है कि वह तो उन्हींका जुरिस्‌डिक्शन था। उन्होंने देखा, कि अंग्रेज़ लोग उसे हथिया लेनेके फेरमें हैं। इसी-लिए, फ़ौजदारी मामलोंके विचार करनेके उद्देश्यसे हुगलीके फ़ौजदार बार-बार कलकत्ते आने-जाने लगे। लेकिन किसी तरह भी अंग्रेज़ोंने दखल नहीं छोड़ी। उनका कहना था कि अपने इलाक़ेमें वे ही एकमेवाद्वितीयम् हैं। और किसीका वहाँ स्थान नहीं। अन्तमें साल-साल एक मुश्त कुछ रुपया पानेका बन्दोबस्त कर फ़ौजदार साहब चुप हो गये।

वैसे कम्पनीके डायरेक्टरोंने एक अच्छी युक्ति निकाली। उन्होंने विशेष रूपसे कह दिया था कि अंग्रेज़-ज़मींदार जिसमें किसी देशी प्रजा और विशेष रूपसे मुसलमान प्रजाको प्राणदण्ड न दें। वैसा करनेपर, उसे लेकर मुगलों-से विवाद उठ खड़ा होगा। जिसमें किसी भी तरह ऐसा मौक़ा न आये। अंग्रेज़ लोग भी जब तक शक्तिशाली नहीं हुए अर्थात् जितने दिन पलासी-का युद्ध नहीं हुआ उतने दिन इस उपदेशको अक्षर-अक्षर मानकर चले। इसीलिए बहुत दिनों तक यह देखनेको मिलता है कि चोर-बदमाशों, खूनी-

डकैतोंके कभी हाथ-पैर नाक-कान काटकर और कभी केवल दाग़ देकर गंगा-पारकर मुग़लोंके इलाक़ेमें छोड़ दिया जाता।

कोर्ट तो हुआ। लेकिन उसे कहाँ ले जाकर वैठाया जाय यही एक वड़ी चिन्ताकी बात हुई। कम्पनीके मकानोंमें लोग भरे पड़े थे। किरायेपर लेने लायक़ एक भी मकान ख़ाली नहीं था।

था, वैसे वहुत दिनोंसे एक मकान पड़ा हुआ। लेकिन वह एकदम पुराना, जर्जर, जीर्ण-शीर्ण था। एक समय यह एक अच्छा मकान था। फ़ारसके राजदूतके कलकत्ता आनेपर जिस मकानमें उन्हें रखा गया था, यह वही मकान था। काउन्सिलने इस मकानको साढ़े छः हज़ार रुपयेमें ख़रीद लिया। इसके वाद उसको अच्छी तरह मरम्मत कराकर सन् १७२९ ई० में उन्होंने वहीं मेयर्स कोर्टको वैठा दिया। इसके लिए सब रुपया कलकत्तेके वाशिन्दोंसे फिर टैक्स वैठाकर वसूल करना पड़ा। कम्पनीने एक पैसा भी नहीं दिया। लेकिन यहाँसे जुर्मानेके जो रुपये वसूल होते वह सब अंग्रेज़-राजाकी अनुमतिके अनुसार कम्पनी बहादुर अपने ही तहवीलमें जमा कर लेती।

इस समयका सेण्ट ऐण्ड्रूज चर्च—दूसरा नाम स्काच कार्क तथा देशी नाम लाल गिर्जा—जो राइटर्स विल्डिंग्सके पूर्वी हिस्सेसे लगा हुआ है ठीक वहीं पुराना एमवैसेडर्स हाउस था। वहीं मेयर्स कोर्ट था। कामकी सुविधा-के लिए इसी सयम रास्तेके उस पार दक्षिणकी ओर थोड़ा जानेपर एक जेल भी वनाया गया।

सन् १७५६ ई० में कलकत्तेपर अधिकारकर राजधानी लौटनेके पहले वहुत मकानोंके साथ इसको भी सिराजुदौलाने ख़तम कर दिया था। उस समय काउन्सिलने इस जगहको बेच देना चाहा और कलकत्तेके चैरिटी-स्कूलने अपने फण्डसे इसे ख़रीद लिया। वादमें, फिर उसी स्थानपर नये सिरेसे एक दो-तल्ला मकान उठा। उस मकानके निचले तलेमें कोर्ट और ऊपरी तलेमें कलकत्तेका चैरिटी-स्कूल था।

दरिद्र यूरोपीयन लड़के-लड़कियोंको बिना फीसके कुछ लिखना-पढ़ना सिखानेके लिए चन्दा करके बहुत पहले ही से यह स्कूल खोला गया था। यह चैरिटी स्कूल ही बादमें फ्री स्कूल हुआ। बादमें सदर स्ट्रीटके पूरबकी ओर एक रास्तेपर स्कूल उठकर चला गया। उसीसे वहाँके रास्तेका नाम, फ्री स्कूल स्ट्रीट हो गया। और मेयर्स कोर्टके नामसे ही ओल्ड कोर्ट हाउस स्ट्रीट नाम पड़ा।

यहाँसे चैरिटी-स्कूलके हट जानेपर उस जगह मेयर्स कोर्टके दोतल्लेपर कलकत्तेका टाउन हाल बना। आजका टाउनहाल उस समय भी नहीं बना था। वह इसके बहुत बाद सन् १८१३ ई०में लाटरीके रुपयेसे तैयार हुआ।

सन् ईसवीकी अट्ठारहवीं शताब्दीके अन्तिम दिनोंसे सन् ईसवीकी उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भके पैंतीस वर्षों तक कलकत्तेमें लाटरीकी खूब धूम थी। जभी कोई नया रास्ता बनाने अथवा सरकारी अर्ध-सरकारी मकान बनानेकी ज़रूरत पड़ती तभी एक बड़ी-सी लाटरीका आयोजन होता। उससे बहुत रुपये आते। प्राइज़ देकर जो रुपये बचते उससे ही शहरके बहुतसे बड़े रास्ते, बहुत-सी पब्लिक बिल्डिंग्स तैयार हुई थीं। साथ-साथ बहुतसे पोखरे खुदवाये गये तथा पार्क तैयार कराये गये।

पलासीके युद्धके बाद सन् १७५८ ई० में जब जमींदारका पद उठा दिया गया तब उसके साथ ही जमींदारी कचहरी भी उठ गई। देशी, विलायती सबके मामले तब मेयर्स कोर्टके अधीन हो गये। लेकिन देखता हूँ कि इसके पहले ही किसी एक मौक़ेसे मेयर्स कोर्ट तो देशी मामलों और विशेष रूपसे उन मामलोंपर जिनमें एक पक्ष यूरोपीय और दूसरा पक्ष देशी होता, विचार करना शुरू कर दिया था।

वैसे देशी लोग अपने बीचके मामलोंको मेयरके पास दरख्वास्त देकर देशी मध्यस्थके द्वारा ही मिटा लेते। सन् ईसवीकी अट्ठारहवीं शताब्दीके अन्तिम दिनोंमें दो व्यक्ति ही मुख्य रूपसे इस मध्यस्थका कार्य करते। एक

तो प्रसिद्ध महाराजा नवकृष्णदेव बहादुर थे और दूसरे, दीवान काशीनाथ बाबू थे।

नवकृष्णदेवका परिचय नये सिरेसे नहीं देना होगा। काशीनाथ बाबू पश्चिमके थे। वंशानुक्रमसे बहुत दिनों बंगालमें रहते-रहते वे बंगाली हो गये थे। इनके पूर्वजोंमें घासीराम टंडन कलकत्तेमें आकर सुंदुरी लकड़ीके व्यवसायसे प्रतिष्ठित हुए थे। काशीनाथ बाबूके वंशवालोंने बादमें टंडन पदवी छोड़कर बर्मन उपाधि ग्रहण कर ली। इस समय इसी पदवीसे वे परिचित हैं।

सन् १७७४ ई० में जब दूसरे एक चार्टरके बलपर कलकत्तेमें सुप्रीम कोर्टकी स्थापना हुई तब मेयर्स कोर्टका अन्त हुआ। सुप्रीम कोर्टके जजोंने मेयर्स कोर्टके मकानमें ही बहुत दिनों तक अपना सेशन चलाया। इसी मकानमें बैठकर सन् १७७५ ई० के जून महीनेकी कड़ी-सड़ी-सी गर्मीमें सात दिन मामला चलनेके बाद महाराज नन्दकुमार रायको फाँसीकी सजा मिली थी।

सन् १७८२ ई० में सुप्रीम कोर्ट यहाँसे उठकर इस समय जहाँ हाई-कोर्ट है, वहींपर एक मकानमें बैठने लगा। अवश्य ही उस समय हाईकोर्ट-का मकान नहीं बना था। हाईकोर्टकी सृष्टि सन् १८६५ ई० में हुई और उसका मकान सन् १८७२ ई० में बना।

अंग्रेज़ लोग अदालतकी स्थापनाको अपने शासनका अच्छा फल कह अपनी खूब ही बढ़ाई करते हैं। बहुत-से अंग्रेज़ लेखक इसे लेकर गर्व करते हुए खूब बढ़ा-चढ़ाकर मोटे-मोटे ग्रन्थ लिखकर अपने मनमें खूब तृप्तिका अनुभव कर गये हैं।

यह बात सच है कि अंग्रेज़ी शासनमें भारतवर्षमें सर्वत्र एक ही तरह-की अदालत, एक ही प्रकारके आईन-क़ानून और प्रायः सभी अदालतोंमें एक ही प्रकारकी कार्यप्रणाली होनेसे बहुत सुविधा हो गयी थी। इससे

भारतवर्षके चित्र-विचित्र लोगोंको कुछ दूर तक एक सूत्रमें गूँथा जा सका, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

किन्तु विलायती पुराने सड़े कुत्सित ढंगके एक जटिल प्रोसिज्योरको इस देशके सिरपर लाद देनेके फलस्वरूप, अदालतमें जाकर अन्त तक कुछ सुविधा होती हो ऐसा तो नहीं लगता। इसीलिए तो यह प्रवाद चल पड़ा कि जो जीतता हैं वह हारता है और जो हारता है, वह मरता है। फ़ौजदारी कोर्टमें मुद्दई होकर जानेके दो दिन बाद ही हैरान होकर वह मद्दालेहकी कोटिमें जा पड़ता है, इसके उदाहरण भी तो कुछ कम नहीं हैं।

क़ानूनके नामपर पुराने सुप्रीमकोर्टके चीफ़ जस्टिस सर इलाइजा इम्पेके अत्याचारोंका ब्योरा इतिहासके बड़े-बड़े ग्रन्थोंमें छपा हुआ है। अंग्रेज़ लोग उन सब बातोंको जितना भी दबा देनेकी कोशिश क्यों न करे, वह अब किसीसे अज्ञात नहीं है। और कितने ही बड़े-बड़े खान्दानी घरके लोग अदालतमें दीर्घ कालतक चलनेवाले मामलोंकी रसद जुटाते-जुटाते सब कुछ स्वाहा कर उजड़ गये। इसके उदाहरण पुरानी ला-रिपोर्टोंके पन्ने-पन्ने-में भरे पड़े हैं।

एक ही दृष्टान्त काफ़ी होगा। बड़ा बाजारके प्रसिद्ध मल्लिक वंशके नयनचाँद मल्लिकके पुत्र बापसे भी अधिक प्रसिद्ध निमाई मल्लिक, जब सन् १८०७ ई० के २४ अक्टूबरको मरे तब देखा गया कि ज़मीन-जायदाद, घर-द्वार, बर्तन-भाँड़ाके अलावा नक़द एक करोड़ रुपया छोड़ गये हैं। उनके उस विल (वसीयत) की शर्तोंका ठीक क्या अर्थ होगा इसे स्थिर करनेमें लगातार इकतालीस वर्षका समय लगा था। वह नक़द एक करोड़ रुपया किसके पेटमें गया इसे खोलकर नहीं कहनेपर भी किसीको समझना बाक़ी नहीं रहा।

इसीलिए तो इस देशमें एक आदमी दूसरेको शाप देते हुए कहता है कि तुम्हारे घरमें मामला-मुक़द्दमा आरम्भ हो। किसीको अत्यधिक परेशान

करना चाहनेपर बात-बातमें एक नम्बर दो नम्बर ठोक देनेकी वात भी कहावत जैसी ही हो गई है।

ऐसा रंग-ढंग देखकर कुछ समय पहलेसे ही आजकलके अंग्रेज व्यापारी भी अब अपना मामला लेकर अदालतमें उपस्थित नहीं होते, वंगाल चैम्बर्स ऑफ् कामर्सकी मध्यस्थतामें ही तय करा लेते हैं।

पर एक बात स्वीकार करनी पड़ती है कि अंग्रेज़ी अदालतोंमें मुसल-मानी अदालतोंके समान मुँह देखकर न्याय नहीं होता, क़ानून देखकर ही होता। लेकिन वह न्याय बहुत धीरे-धीरे वहुत समयके वाद वहुत पैसा खर्च करके ही सम्पन्न होता। क़ाज़ीके न्यायमें हाथों-हाथ सर काटा जाता अवश्य, लेकिन उसमें इस प्रकार तिल-तिल जलाकर मारा नहीं जाता।

: १३ :

३० जून सन् १७२७ ई० को मुर्शीद कुली खाँको बराबरके लिए बंगालकी नवाबी-गद्दीको छोड़कर जाना पड़ा।

मुर्शीद कुली खाँकी मृत्युके कुछ पहलेसे ही उनके दामाद शुजाउद्दीन खाँने सब इन्तज़ाम कर रखा था। श्वसुर महाशयके दिवंगत होनेके दो-चार दिन पहले ही उनकी अन्तिम अवस्था जानकर शुजाउद्दीन उड़ीसाकी डिप्टी गवर्नरीका भार अपने छोटे पुत्र तक़ी खाँके हाथमें दे वंगालकी ओर रवाना हुए। मेदिनीपुरके निकट आते ही उन्होंने सुना कि मुर्शीद कुली खाँ दिवंगत हो गये। साथ-ही-साथ दिल्लीके बादशाह मुहम्मदशाहके दरबारसे उनके नाम बंगालकी गवर्नरीका पर्वाना आ गया, उन्होंने प्रसन्न चित्तसे मुर्शिदाबाद-में प्रवेश किया।

शुजाउद्दीनकी स्त्री जीनतउन्निसा बेग़म परस्त्रीके ऊपर पतिकी परम आसक्ति देखकर बहुत पहलेसे ही अपने पुत्र सरफ़राजको साथमें लेकर मुर्शिदा-बादमें बापके घरमें वास करतीं। सरफराजको ही मुर्शीद कुली खाँ अपना

उत्तराधिकारी स्थिर कर गये थे। शुजाउद्दीनको मुर्शिदाबाद आते देख सरफराज द्विविधामें पड़ गये। अन्तमें नानी, माँ और दूसरे-दूसरे हितैषियोंकी सलाह लेकर बापको ही बंगालकी गद्दी छोड़ दी।

शुजाउद्दीन शान्तिप्रिय थे। ऐसा होना ही था। विलास-व्यसन, काम-प्रवृत्तिमें वे इतने मत्त थे कि और किसी विषयमें लगे रहनेकी शक्ति आती ही कहाँसे? लेकिन बंगालकी गद्दी पाकर पहले-पहल राज-काजमें उन्होंने खूब मन लगाया था। न्यायोचित रूपसे कुछ दिनों उन्होंने शासन भी किया था। इसके बाद राज-काजका समस्त भार धीरे-धीरे अलीवर्दी खाँके बड़े भाई हाजी अहमद राय, राय रायान आलमचन्द और जगत सेठ फतेचन्द-इन तीन आदमियोंके ऊपर आ पड़ा। निश्चिन्त होकर शुजाउद्दीनने अपने-आपको आमोद-प्रमोदमें पूरी तरहसे बह जाने दिया। मुर्शीद कुलीके कठोर शासनमें देशमें बहुत सुश्रृंखलता थी। इसीलिए शासन चलानेमें शुजाउद्दीनको अधिक कष्ट नहीं उठाना पड़ा।

अंग्रेज़ोंके ऊपर कड़ी नज़र रखनेपर भी शुजाउद्दीन खाँने उन्हें अधिक कष्ट नहीं दिया। वस्तुतः शुजाउद्दीनके शासन कालमें अंग्रेज़ लोग खूब आनन्दसे ही थे। पर बीच-बीचमें रुपयेका जोगाड़ करना पड़ता और वह वक़ायेमें नहीं। वह तो चिरकालसे मुग़लोंकी रीति थी, उनका यह नित्य-नैमित्तिक व्यापार था। इतने दिनोंमें अंग्रेज़ोंको वह सह गया था।

इसी समय अंग्रेज़ोंने डचोंसे मिलकर जर्मन अस्टेण्ड कम्पनीको बंगालसे बिलकुल हटा देनेका विचार किया। बिलकुल उच्छेद नहीं कर सकनेपर भी जर्मन कम्पनीको उन दोनोंने मिलकर बहुत दूरतक शक्तिहीन कर दिया था।

३० सितम्बर, सन् १७३७ ई० को कलकत्तेके ऊपरसे एक प्रचण्ड आँधी बह गई। बातोंका दाँव-पेंच नहीं सचमुचमें आँधी आई थी। आँधीके साथ मूसलाधार वृष्टि और वज्रपात हुआ था। गंगाके जलने क़रीब चालीस फीट ऊँचे उठकर समस्त शहरको बहा दिया। सारी रात वह ताण्डव लीला चलती रही।

सवेरे थोड़ा ठण्डा पड़ते देखा गया, एक रातमें ही समस्त शहरको जाने कौन दैत्यकी तरह उलट-पुलट गया था। देशी मुहल्लेके मिट्टीके मकान एक भी साबूत खड़े नहीं रहे। साहबोंके मुहल्लेके भी दस-बारह पक्के मकान ढह गये थे। जो खड़े थे, उनमें किसीका दरवाज़ा नहीं रह गया था तो किसीकी खिड़की नहीं रह गई थी; किसीकी चौथाई तो किसी-का आधा गिरकर लटक आया था।

शहरके गेट, ब्रिज, दीवार सभी चूर्ण-विचूर्ण हो गये थे। गाय, बछड़े, बकरी-भेड़, बतख-मुर्ग़ी सभी बह गये। चारों ओर पेड़-पौधे उखड़े पड़े हैं। उन्हींके बीच जगह-जगह जंगलके बाघ, हिरन, जंगली सूअर, जलके मगर-मछली, घड़ियाल मरे पड़े हैं। चारों ओर अनगिनत मरे हुए काग, गिद्ध और नाना प्रकारके रंग-बिरंगे पक्षी पड़े हैं।

एक बहुत ही विचित्र बातका पता चलता है। सच-झूठका नहीं जानता। पर वह केवल ज़बानी ही नहीं है छापेके अक्षरोंमें भी लिखा हुआ है।

एक जहाज़के तलमें माल लदा हुआ था। सवेरे उस मालको उठानेके लिए तलके भीतर एक आदमीको उतारा गया पर फिर वह आदमी ऊपर नहीं आया। एकके बाद ऐसे दो और आदमियोंको उतारा गया। वे भी ऊपर नहीं आये। तब सब लोगोंने मिलकर मशाल जलाकर तलके मुखसे भीतरके गढ़ेमें झाँककर देखा कि उसके नीचे एक बहुत बड़ा छः फीट लम्बा घड़ियाल अँध-मुँदी आँखोंसे ताक रहा है। किसी मौक़े बहता हुआ आकर वह तलमें घुसकर बैठा है। इसके बाद जब उस घड़ियालको मारा गया तब उसके पेटको चीरनेपर देखा गया कि तीन-तीन पूरेके-पूरे आदमियोंको वह निगलकर पेटमें भरे हुए है।

गंगाके ऊपर हरेक प्रकारके जहाज़, बोट, बजरा, छतवाली नौका, डोंगी सभी बँधे थे। खोजनेपर उनमें दो-चारको छोड़ और किसीके अस्तित्वका चिह्न नहीं मिला।

इस दैव दुर्घटनाके हाथसे चंगा होनेमें दो वर्षोंका समय लगा था। घटनाकी खवर पा कम्पनीके डायरेक्टरोंने देशी प्रजाकी दो वर्षोंकी माल-गुज़ारी माफ़ कर दी। अत्यन्त ग़रीव-दुखियोंको सरकारी तहवीलसे थोड़ी-थोड़ी सहायता देनेकी भी व्यवस्था की गई।

शहरमें जितने गोला गंज थे, उनके जलमें वह जानेसे दो दिनों बाद कलकत्तेमें दुर्भिक्ष पड़ा। यही देखकर कलकत्तेकी काउन्सिलने विदेशोंमें चावल भेजना वन्द कर उस चावलको कलकत्तेमें ले आये। शहरमें चावल लानेमें जो चुंगी देनी होती वह भी तव तकके लिए मौकूफ़ कर दी गयी।

थोड़ा-थोड़ा चावल प्रजाके वीच विना मूल्यके वितरण भी किया गया। कितने स्वार्थी लोग इस तरहकी मुसीवतके समयको देखकर अधिक लाभकी आशामें चावल जमा कर रहे थे। लेकिन ज़मींदारके चटपट शहरमें चावल ला देने और चावलपरसे चुंगी उठा देनेके कारण उनकी वह आशा शीघ्र ही निराशामें परिणत हो गयी।

इस तरहका भैरव काण्ड शहरमें इसके पहले या वाद कभी हुआ था, न तो सुना ही जाता है और न पढ़नेको ही मिलता है।

सव देखनेपर न वहुत अच्छा और न वहुत खराव साधारण रूपसे राजत्व कर १३ मार्च सन् १७३९ ई० को वंगालके नवाव शुजाउद्दीन खाँ शुजाउद्दौलाने देहत्याग किया।

: १४ :

अव देशकी स्थितिपर एक वार नज़र डाल ली जाय।

सन् १७०७ ई० में वादशाह औरंगजेबकी मृत्युके प्रायः साथ-ही-साथ विशाल मुग़ल साम्राज्य विलकुल टूटकर विखर जाने जैसा हो गया। मृत देहके सड़-गल जानेपर जैसे उसके अंग-प्रत्यंग थोड़ा-थोड़ा करके कट-कटके गिरने लगते हैं, उसी प्रकारसे वहुत थोड़े समयमें ही एकछत्र मुग़ल शासन-का वन्धन चारों ओरसे खुल-खुलकर गिरने लगा।

बादशाह औरंगज़ेबके शासन-कालके अन्तिम पाँच-सात वर्षोंसे ही बुद्धिमान् लोगोंने समझ लिया था कि टूटनेकी क्रिया आरम्भ हो गयी है। बादशाहने स्वयं भी अन्तमें समझा था लेकिन वे कुछ कर नहीं गये। अकबर बादशाहने जिसे गढ़ा था, पचास वर्षों तक राज्य कर वे उसे तोड़-फोड़ ही गये।

सब प्रजाके ऊपर सम दृष्टि नहीं रहनेपर एक बड़ा राज्य तो क़ायम नहीं किया जा सकता। समस्त प्रजा सुखी नहीं होनेपर राजाको सुख नहीं मिलता। राज्यकी प्रजाके एक बृहत् समुदायको काफ़िर कह घृणासे दूर ठेल रखनेसे उस राज्यका कभी कल्याण नहीं हो सकता। वह राज्य आज-न-कल टूटेगा ही टूटेगा। यह सम-दृष्टि औरंगज़ेबको बिलकुल ही नहीं थी और हुआ भी ठीक वही।

अन्तमें ऐसा हुआ कि नौ महीने, छः महीनेके लिए एक-एक आदमी सम्राट् हुए। कोई उन्हें नहीं मानता, कोई उन्हें नहीं पूछता, कोई उनकी बात नहीं सुनता। इसके बाद एक दिन सिरका मुकुट गिर पड़ता, धूलमें देह लोट पड़ती। उनमें कोई निहायत बालक होता, कोई अपरिपक्व बुद्धिका युवक अथवा अक्षम वृद्ध। किसीको बन्दी बनाकर क़ैदमें रखा जाता, किसीको अन्धा बना दिया जाता, और किसीको ज़हर खिलाकर मार डाला जाता।

चारों ओर अन्याय, अत्याचार, अराजकता थी। डकैती, ख़ून-ख़राबी, मार-पीट, लूट-पाट, षड़यन्त्र, गुप्तहत्या ये सभी नित्यप्रतिकी घटनाएँ थीं। जितने निम्न श्रेणीके लोग अपने-आपको छिपाये हुए थे, वे सभी शरीर झाड़कर ऊपर उठ खड़े हो अपने काममें जुट गये।

वाणिज्य-व्यवसाय बिल्कुल मन्दा था, क़रीब समाप्त होने जैसा हो गया था। बादशाही चलती सड़कपर भयसे कोई माल नहीं ले जाता। बिना घूस दिये एक क़दम आगे बढ़ाना मुश्किल था। ठीक समयके मुताबिक कोई सर-कारी काम करा लेना एक असम्भव-सी बात थी। साहित्य, शिल्प, ज्ञान

चर्चा, शिक्षा-दीक्षा चाहे वह फ़ारसी मुसलमानी रीतिसे हो अथवा संस्कृत-सनातन हिन्दू पद्धतिसे, सभी नीचेकी ओर गिरते-गिरते क्रमशः लुप्त हो चले।

थोड़ा कुछ जो बाक़ी था, सन् १७३९ ई० में फ़ारस देशसे आकर नादिरशाहने उतनेकी भी अन्तिम क्रिया कर दी और अपने देशको लौट गया।

भारतवर्ष महाश्मशान जैसा हो गया। यहाँ मत्स्य न्यायके अनुसार शक्तिमानोंके हाथोंमें दुर्बलोंकी बहुत दुर्गति थी, राजाके द्वारा प्रजाका निर्मम दमन होता था और दुष्टके द्वारा साधु-पुरुषोंका अत्यधिक अपमान होता। जो रक्षक थे, वही भक्षक हो गये। चारों ओर घोर अन्धकार था। मौक़ा देखकर विभिन्न प्रदेशके सूबेदार या नवाब और आजकलकी भाषामें गवर्नर जिससे जहाँ हो सका अपना सिर ऊँचा किया। अपने इलाक़ेमें वे जैसे एकछत्र सम्राट् हों। दिल्लीश्वरके पास कोई कुछ कृपा कर राजकर भेजता और दे रहा हूँ—दूँगा करते, बहुत देते भी नहीं। और ऊपरसे तो दिल्लीके बादशाहका नाम लेते मूर्च्छा आती लेकिन मन-ही-मन सभी जानते कि वे तो इस समय कठपुतली हैं।

पहले बादशाह विभिन्न प्रदेशके गवर्नर नियुक्त करते और ज़रूरत पड़नेपर उन्हें बर्खास्त कर दूसरेको उस स्थानपर गवर्नर नियुक्त कर भेजते। किन्तु नये नवाब लोग अपने-अपने वंशसे अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर जाने लगे। वैसे वे सभी उत्तराधिकारी नियमको क़ायम रखनेके लिए नज़राना देकर दिल्लीके बादशाहके पाससे एक-एक नवाबीका पर्वाना अवश्य मँगा लेते।

बादशाह इस सम्बन्धमें कुछ नहीं कहते। रुपया पाते ही शान्त आज्ञाकारी बालककी नाईं पर्वाना भेज देते। धीरे-धीरे दिल्लीके बादशाह जितना ही निर्बल होने लगे नवाब लोग उतनी ही अधिक मज़बूतीसे अपनी गद्दीपर जमने लगे। लेकिन वह भी तब तकके लिए ही जब तक कि और कोई जबर्दस्ती उस गद्दीको छीन नहीं लेता।

उस समय बलम् बलम् बाहुबलम् था। इसीलिए उस समय बहुतसे विदेशी मुसलमान, हिन्दुस्तानी मुसलमान नहीं, केवल जबर्दस्तीसे एक-एक नवाबी वंशकी स्थापना कर गये। बहुतसे विदेशी मुसलमान अच्छा मौक़ा पाकर भाग्य आज़मानेके लिए भारतवर्षमें आ गये थे।

बंगालमें मुर्शीद कुलीखाँ भी इसी प्रकारका एक नवाब-वंश क़ायम करनेकी कोशिशमें थे। लेकिन उनके बाद जो नवाब हुए थे उन्हें ठीक उनके वंशका आदमी नहीं कहा जा सकता। वैसे शुजाउद्दीनखाँ उनकी लड़कीके पति थे। एकदम पराये नहीं ही थे। ठीक एक खून न होनेपर भी निकट-सम्बन्धी तो थे? और जब मुर्शीद कुलीखांको अपना कोई लड़का नहीं था, तब उनके दामाद शुजाउद्दीनको उनका लड़का कहनेमें आपत्ति क्या है? कमसे-कम पुत्र स्थानीय तो वे थे ही?

शुजाउद्दीन खाँकी मृत्युके बाद इस बार मुर्शीद कुली खाँके नाती सरफ़राज़ खाँ बंगालके नवाब हुए।

समयको देखते हुए सरफ़राज़ बहुत बुरे थे, ऐसी बात नहीं। किन्तु राजकाजमें मन लगानेकी अपेक्षा अन्तःपुरमें स्त्रियोंको लेकर रास-रंगमें मत्त रहनेमें ही इस नवाबको अधिक आनन्द आता था। उनके जनानखानेमें पन्द्रह सौ कामिनियाँ थीं। और दुर्बल लोग सर्वदासे ही जो करते आये हैं, वे भी वही करते। आमोद-प्रमोदके अवसरपर कई गँजेड़ी, अफ़ीमची, बातूनी, पीर-फ़कीर, साधु-सन्यासीको लेकर इस प्रत्याशामें बैठे रहते कि कब वे इन्द्रजालका तमाशा दिखायेंगे। राज्य चलानेमें जैसे कठिन कामके उपयुक्त एक भी सद्गुण सरफ़राज़में था, ऐसी बात उनके अभिन्न मित्रोंमेंसे भी कभी किसीने नहीं कही है।

जगत सेठ फतेचन्द इस समयके एक नामी व्यक्ति थे। रुपयेके घड़ियाल थे। सबकी चुटिया उनके हाथमें थी। किसी-किसीका कहना है कि सरफ़राज़खाँने इन्हीं जगत सेठके घरकी एक स्त्रीका अपमान किया। फिर किसी-किसीका कहना है कि रुपये-पैसेके लेन-देनको लेकर नवाबके साथ

सेठका अत्यधिक मनोमालिन्य हुआ। ठीक कारण चाहे जो भी हो, इसीके फलस्वरूप फतेचन्दकी नज़र अलीवर्दीखाँपर पड़ी। इसके अलावा यार-दोस्तोंके समझानेसे हाजी अहमदके ऊपर सरफराज़की विषदृष्टि हुई। हाजी अहमद साहव छिपे रूपसे उनके भाई अलीवर्दी खाँको उकसाने लगे।

धीरे-धीरे दूसरे सामन्त जो सरफराज़के दुर्व्यवहारसे रुष्ट हो गये थे, उन्होंने भी आँख खोलते हो देखा कि उनके सामने अलीवर्दी खाँ मौजूद हैं, और वे एक उपयुक्त व्यक्ति हैं।

अलीवर्दी खाँके बाप अरब और माँ तुर्क थीं। ये हिन्दुस्तानी मुसलमान नहीं थे। इस परिवारके पृष्ठपोषक औरंगजेवके ही एक पुत्र आजमशाह थे। वे दिल्लीका वादशाह होनेके लिए अपने बड़े भाई शाह आलम वहादुर शाहके साथ लड़ने जाकर युद्ध क्षेत्रमें ही निहत हुए। अलीवर्दी खाँके परिवारकी अवस्था उस समय अत्यन्त शोचनीय हो गई।

शुजाउद्दीनके साथ मातृकुलकी ओरसे अलीवर्दीका दूरका कोई सम्बन्ध था। शुजाउद्दीन खाँ उस समय उड़ीसाके डिप्टी गवर्नर थे। दिल्लीमें कोई नौकरी नहीं जुटा पानेके कारण अलवर्दी कटकमें शुजाउद्दीनके दरबारमें आकर हाज़िर हुए। इसके पहले एक बार मुर्शीद कुली खाँसे नौकरीकी प्रार्थना उन्होंने की थी लेकिन उन्होंने काम नहीं दिया।

वुद्धि, वल और तेज हथियारसे अलीवर्दीने शुजाउद्दीनके वहुतसे काम सँभाल दिये। शुजाउद्दीनके दरबारमें थोड़ी प्रतिष्ठा होते ही अलीवर्दीने अपने बड़े भाई, हाज़ी अहमदको दिल्लीसे बुला भेजा। अहमद-साहब उस समय मक्कासे हज करके लौटे थे। भाईके बुलानेपर वे सपरिवार कटकमें आ उपस्थित हुए। वहाँ एक नौकरी पा गये। साथ ही अपने तीन लड़कोंके लिए भी एक-एक काम जुटा लिया।

दोनों भाई मिलकर राज-काजमें शुजाउद्दीनकी खूब सहायता करने लगे। धीरे-धीरे ऐसा हुआ कि विना इनके शुजाउद्दीनका और काम ही नहीं चलता, सभी विषयोंमें इनकी सलाहसे वे काम करते। ऐसा करके

वे ठगे नहीं गये। बल्कि इन्हीं दोनों भाइयोंके कौशलसे बिना रक्तपातके वे निर्विरोध बंगालका नवाबी-पदपर अधिकार कर सके।

बंगालकी नवाबी पानेके कुछ दिनों बाद ही शुजाउद्दीन विहारकी सूबेदारीका भी पद पा गये। उनकी इच्छा थी कि अपने पुत्र सरफराज़ खाँको विहारका डिप्टी गवर्नर बनाकर पटना भेजें। लेकिन उनकी स्त्री जीनतउन्निसा बेगम अपने आमोदप्रिय पुत्रको आँखसे ओझल करनेके लिए किसी भी तरह राज़ी नहीं हुई।

अलीवर्दीखाँको बुलाकर बेग़म साहबाने पर्देकी ओटसे पटना जानेका अनुरोध किया। अलीवर्दीखाँको कोई भी आपत्ति नहीं थी। वे विहारके डिप्टी गवर्नर होकर प्रफुल्लित मनसे पटना चले गये। हाज़ी अहमद शुजाउद्दीनको परामर्श देनेके लिए उनके प्रधान मन्त्री होकर मुर्शिदावादमें ही रह गये।

अलीवर्दी खाँके मनमें बहुत बड़ी महत्त्वाकांक्षा थी। बंगालकी नवाबी पाये बिना जैसे वह आकांक्षा मिटनेको नहीं। सरफराज़ खाँने नवाब होकर जब सब सामन्त सरदारोंको अप्रसन्न कर रखा था, तब अलीवर्दीने एक दिन अपनी अच्छाईका नकाब खोल डाला। नमकहरामी कर स्वामीके पुत्र सरफराज़के विरुद्ध अन्तमें शस्त्र पकड़ा।

९ अप्रैल, सन् १७४० ई० को मुर्शिदावादसे थोड़ी दूर गिरियारके मैदानमें अलीवर्दी खाँके साथ युद्ध करते सरफराज़ने युद्धक्षेत्रमें ही प्राण गँवाया। सरफराज़ खाँने केवल एक वर्ष अट्ठाईस दिन नवाबी की।

काम अत्यन्त गर्हित होनेपर भी सरफराज़ खाँके बदले अलीवर्दी खाँको बंगालका नवाब पाकर देशका मंगल हुआ। पालिटिक्समें इतना अच्छे-बुरेका विचार बुद्धिमान् लोग नहीं करते। स्वार्थसिद्धिके लिए किसी भी उपायका अवलम्बन कर कृतकार्य होनेपर उसी उपायको ही सदुपाय कह-कर स्वीकार कर लेते हैं। यही तो सनातन नियम है।

अलीवर्दी खाँ साहसी योद्धा थे। राजकार्यमें भी वे खूब दक्ष थे।

कुल मिलाकर वे अच्छे ही थे। उनका घरेलू जीवन भी बहुत संयत था। नवाबी क़िस्मका बिलकुल ही नहीं था। केवल मात्र खानेका शौक़ था। वह भी कभी बे-अन्दाज नहीं। इसीलिए भोजन बनाना भी अच्छी तरह सीखे हुए थे।

अर्म साहबने लिखा है कि अलीवर्दी ख़ाँने अन्त तक एक ही स्त्रीके पति रह ज़िन्दगी बिताई थी। उस कालके राजा-बादशाह नवाब-अमीर महाजनके लिए यह कुछ कम बात नहीं थी। बल्कि यह एक विचित्र-सी बात है।

प्रजापालनकी ओर अलीवर्दीका ख़ूब ध्यान था। नवाब होकर उन्होंने बंगालमें शान्ति रक्षा करनेकी बहुत चेष्टा की थी। किन्तु सम्पूर्ण रूपसे कृतकार्य नहीं हो पाये। इस रास्तेमें प्रधान बाधा मराठा-दस्यु थे।

: १८ :

शिवाजी जब लड़-भिड़कर धीरे-धीरे एक राज्यका निर्माण कर रहे थे तब हिन्दुस्तानके सभी हिन्दुओंकी अत्यन्त उत्सुकतासे उनकी ओर आँखें लगी हुई थीं। उनके मनमें हुआ कि इतने दिनपर जैसे उनके उद्धारकर्त्ता अवतरित हुए। उस समय हिन्दुस्तानमें माइनर कम्युनिटीके राजपुरुषोंके अत्याचार, उत्पीड़नसे मेजर कम्युनिटीका प्रजावर्ग एकदम जर्जर हो गया था।

लेकिन हिन्दुस्तानमें सदासे जो होता आ रहा है, इस क्षेत्रमें भी वही हुआ। बड़ी संस्था इस देशमें बहुत दिनों तक टिकती नहीं है। संस्थापककी मृत्युके साथ-ही-साथ वह बिखर पड़ती है। जैसे ही वे हट जाते हैं, वैसे ही कुछ नीच स्वार्थ-बुद्धिवाले लोग सिर ऊँचा करते हैं। आपसमें ही दलबन्दी कर तुच्छ विषयको लेकर मान-अभिमानसे वैमनस्य पैदा कर देते हैं। कोई भी एक मनका नहीं होता। सभी अपनेको प्रधान समझते हैं। फलस्वरूप सब मिट्टी हो जाता है।

मराठोंके भी बड़े-बड़े सर्दारोंने अपने-अपने इलाक़े बाँट लिये। उनमें आपसमें प्रबल ईर्षा थी। उस समय नागपुरकी मराठा चौकीके सर्दार रघुजी भोंसला थे। उनका प्रधान मन्त्री कूट बुद्धिवाला एक ब्राह्मण था। उसका नाम भास्कर राम था। संक्षेपमें लोग उन्हें भास्कर पण्डित कहकर ही पुकारते।

राजा-मन्त्री दोनोंकी ही इच्छा थी कि डकैतीसे बंगाल प्रान्तको क़ब्जेमें कर नागपुरके साथ मिला दिया जाय। उस समय बंगाल प्रान्त कहनेका मतलब उसके साथ बिहार और उड़ीसा भी समझा जाता था।

मृत नबाब सरफ़राज़ ख़ाँके भाई-बन्धु अलीवर्दीसे बदला लेनेका मौक़ा ढूँढ़ रहे थे। इस बार मौक़ा पाकर उन्होंने रघुजीको बंगालमें आनेका निमन्त्रण भेजा।

इसके पहले मराठोंने दिल्लीके बादशाहके पाससे देशके राज-करका चौथ अर्थात् चार भागमें एक भाग पानेका अपना हक़ स्वीकार करा लिया था। रघुजीने अब अलीवर्दीसे बंगालका चौथ माँगा। अलीवर्दीके उसे नहीं देनेपर सन् १७४२ ई० में तेईस सर्दारों और बीस हज़ार बर्गियोंको लेकर बंगाल प्रान्तके विरुद्ध अभियान शुरू कर दिया।

छोटे-छोटे टट्टू-घोड़ोंपर चढ़कर नागपुरके पहाड़ी अंचलसे बाहर निकल पंचकोट होकर बंगालके दक्षिण-पश्चिम कोनेके जंगली रास्तेसे होकर मराठा बर्गी बंगाल और उड़ीसामें रेल-पेलकर चले आते। उनके हाथ और पीठपर हल्के हथियार रहते और मुखमें सिर्फ़ एक ही बोली होती—रुपया ले आओ, रुपया ले आओ।

उसी समय रुपया दे-देनेपर कुछ रक्षा होती। नहीं दे सकनेपर साथ-ही-साथ किसीको प्राण गँवाने पड़ते किसीके हाथ-पाँव, नाक-कान काटे जाते और किसीको बराबरके लिए अन्धा होना पड़ता।

बच्चे, बूढ़े, धनी-ग़रीब, पण्डित-मूर्ख, स्त्री-पुरुष, जनेऊधारी ब्राह्मण अथवा जनेऊ-विहीन शूद्र, कीर्त्तनकारी वैष्णव अथवा वामाचारी शाक्त,

हिन्दू अथवा मुसलमान किसीको भी इन मराठा डाकुओंके हाथसे छुटकारा नहीं मिलता।

झुंडके-झुंड लोग देश छोड़कर अन्यत्र भागने लगे। चारों ओर हाहाकार मच गया। खेतमें धान नहीं, घरमें चावल नहीं, घरोंमें शामको सन्ध्या आरती नहीं होती। किसीके प्राणोंमें सुख नहीं, मनमें शान्ति नहीं। बराबर भय बना रहता कि कब वर्गी आकर हमला बोल दें। सिरपर काली छूतवाली हाँड़ी बाँधकर जलमें डूबे रहनेपर भी बचाव नहीं था। रस्सीमें टोप बाँधकर फेंकते और घसीटकर सूखी ज़मीनपर ला पटकते। एक सुन्दर स्त्रीके पानेपर दस-बारह वर्गी मिलकर उसपर बलात्कार करते।

गंगाराम भट्टाचार्यके महाराष्ट्र पुराण ग्रन्थमें (सन् १७५१ ई०में लिखना समाप्त हुआ) बर्गियोंके इस निन्दनीय अत्याचारकी कहानी स्पष्ट रूपसे पन्ने-पन्नेमें लिखी हुई है। यह ग्रंथ अब छप चुका है। थोड़ा कष्ट करनेपर सभी पढ़कर देख सकते हैं।

भट्टाचार्य महाशय क्या कहते हैं, सुनिए। घटना उनकी अपनी आँखों देखी हुई है। वे लिखते हैं :—

छोट बड़ ग्रामे जत लोक छिल।
बरगिर भये सब पलाहल॥
चाइर दिके लोक पालाये ठाई-ठाई॥
छतिस बर्णेर लोक पालाये तार अन्त नाई।
एइ मते सब लोक पालाइया जाइते।
आचम्बिते बरिगि घेरिला आइसा साथे॥
माठे घेरिया बरगी देय तबे साड़ा।
सोना रुपा लुटे नेए आर सब छाड़ा।
कारु हात काटे कारु नाक कान।
एक चोटे कारु बधए परान॥
भाल-भाल स्त्री लोक जत धइरा लइया जाये।

आंगुष्ठे दड़ि बाँधि देय तार गलाये ।
एक जन छाड़े तारे आर जना धरे ।
रमणेर भरे त्राहि शब्द करे ।।
एक मत बरगि कत पाप कर्म बइरा ।
सेइ सब स्त्री लोक जत देय सब छाइड़ा ।।
तबे माठे लुटिया बरगी ग्रामे साधाये ।
बड़-बड़ घरे आइसा आगुनि लागाये ।।
बांगाला चौआरि जत विष्णु मण्डब ।
छोट बड़ घर आदि पौड़ाइल सब ।
एइ मते जत सब ग्राम पौड़ाइया ।
चतुर्दिगे बरगि बेड़ाये लुटिया ।।
काहुके बाँधे बरगि दिया पिठमोड़ा ।
चित कइरा मारे लाथि पाये जुता चड़ा ।।
रुपि देह-देह बोले बारे-बारे ।
रुपिना पाइया तबे नाके जल भरे ।।
काहुके धरिया बरगि पखइरे डुबाये ।
काफ़र हइआ तबे कारु प्राण जाये ।।
एइ मते बरगि कत विपरीत करे ।
टाका कड़ि ना पाइले तारे प्राणे मारे ।।
ज ार टाका कड़ि आछे सेइ देय बरगिरे ।
जार टाका कड़ि नाइ सेइ प्राणे मरे ।।

वर्गियोंका दमन भी एक मुश्किल काम था । जहाँ तक सम्भव होता वे आमने-सामने नह ीं लड़ते । और इतनी उनकी क्षिप्रगति थी कि आज अगर वे कटकमें दिखाई पड़ें तो कल वे मेदिनीपुरमें दीख पड़ेंगे । और परसों हुगली अथवा वर्द्धमानमें । इसके बाद कटोयामें । और अन्तमें राजधानी मुर्शिदाबादके ही आसपास ।

क़रीब सत्तर वर्षके बूढ़े नवाब अलीवर्दीख़ाँ बर्गियोंके पीछे चरखीके जैसा घूमते बराबर ही उनके साथ लड़ते गये। डेढ़ वर्षों तक युद्ध करनेके बाद उन्होंने समझा कि इनको बुद्धि देनेवाले भास्कर पण्डितको खतम किये विना और कुछ भी नहीं किया जा सकता।

भास्कर पण्डित उस समय कटोयाके नीचे दाइंहाटीमें कुछ दिनोंसे जमकर बैठे हुए थे। डेढ़ वर्ष पहले ठीक यहीं बैठकर उन्होंने ख़ूब समारोहके साथ दुर्गापूजा आरम्भ की थी। नवद्वीपके पण्डित समाजको उपढौकन और विदाई देकर ख़ुश कर दिया था। लेकिन उस समय वे उस पूजाको पूरा नहीं कर सके। विजयादशमीके पहले ही सेना लेकर अलीवर्दीख़ाँ उनके ऊपर टूट पड़े। प्रतिमा-विसर्जन किये विना ही पूजा छोड़कर भास्करको भागना पड़ा।

इस समय उसी दाइंहाटीमें राजा जानकी राम दिखायी दिये। भास्कर पण्डितको उन्होंने बतलाया कि अलीवर्दीख़ाँ मराठोंके साथ सन्धि करनेके इच्छुक हैं। सन्धिकी शर्तोंको वातचीत द्वारा ठीक कर लेनेके लिए उन्होंने पण्डितको राजधानीके पास मनकरा नामक स्थानमें मिलनेके लिए अनुरोध किया है।

पहले भास्कर पण्डित जानेको राज़ी नहीं हुए। सोचा, इसमें निश्चित रूपसे धोखा है। लेकिन जब मुस्तफाख़ाँने क़ुरान छूकर और जानकीरामने गंगाजल-ताँबा-तुलसी लेकर सभीके सामने शपथ खाई तब वे द्विधा छोड़ अलीवर्दीख़ाँके साथ भेंट करनेके लिए राज़ी हो गये।

कुछ दिन बाद तेईसमें-से अपने वाईस सर्दारों तथा तीन हज़ार बर्गियों-को लेकर भास्कर पण्डित राजधानीके पास मनकरामें आ उपस्थित हुए।

नवाबके साथ सन्धि-प्रस्तावकी आलोचना करनेके लिए एक बहुत बड़ा तम्बू खड़ा किया गया था। वाहरसे देखनेपर कुछ भी समझा नहीं जा सकता था, लेकिन उसके भीतर जगह-बेजगह शरीर ढके हुए नवाबके सैनिक छिपे हुए थे। भास्कर पण्डितके तम्बूके पास आते ही मुस्तफाख़ाँ और

जानकीरामने बाहर आकर मीठे शब्दोंसे उनकी अभ्यर्थना की और उन्हें तम्बूके भीतर ले गये। भास्करको कुछ भी पता नहीं चला। कुछ देरके बाद मुस्तफा और जानकीराम कामका बहाना बना कहीं बाहर चले गये।

भास्करराम धीरे-धीरे नवावकी ओर आगे बढ़े। अचानक तम्बूके चारों ओरकी कनात गिर गई। अलीवर्दीखाँ तीन-तीन बार प्रश्न कर तव कहीं ठीक समझ सके कि जो व्यक्ति उनके सामने खड़ा है वह सचमुच ही भास्कर पण्डित है। वैसे ही क्या एक इशारे-बाजी हुई। पलमें मीर काजीमखाँ बाघके समान भास्कर पण्डितकी ओर झपटे और तलवारकी एक चोटमें पण्डितजीके दो टुकड़े कर डाले। इसके बाद भास्कर पण्डितके साथ जो सब मराठा सामन्त आये थे, वे प्रायः सभी अलीवर्दीख़ांके सैनिकोंके हाथ काट डाले गये। मुस्तफाख़ांने बाहरसे वर्गियोंके साथ प्राणपणसे युद्ध करते उन्हें मार-काटकर मटियामेट कर दिया। दो दिनोंके अन्दर ही सारे बंगाल प्रान्तमें और एक भी वर्गी नहीं रहा।

किन्तु यहीं बर्गियोंका उपद्रव खतम नहीं हुआ। सन् १७४२ ई० से लेकर सन् १७५१ ई० तक एक ही तरहसे लगातार दस-दस वर्ष तक हंगामा होते रहनेके बाद तब जाकर कहीं शान्ति हुई। अलीवर्दीख़ांने अन्तमें चौथमें अर्थात् बंगालके राजकरका एक चौथाई हिस्साके हिसाबमें, उड़ीसा प्रदेश मराठोंके हाथमें छोड़ दिया। देनेके पहले केवल मेदिनीपुर ज़िलेको उड़ीसासे निकालकर बंगाल प्रान्तके साथ जोड़ दिया। दोनों प्रदेशोंके बीच सुवर्णरेखा नदी रह गई।

किन्तु बंगाल प्रान्तका राढ़-अंचल उस समय बिलकुल ही सुफला शस्य श्यामला नहीं था। वर्गियोंके उपद्रवके फलस्वरूप बंगाल प्रान्त बहुत दिनों तक दुरवस्थासे सिर उठाकर सीधे खड़ा नहीं हो सका।

इसके कुछ बाद अंग्रेज़ोंने उस दुर्दशाकी मात्राको बहुत बढ़ा डाला। उन्होंने मुसलमानी शासनकी दीवारको ढहा दिया अवश्य, लेकिन बहुत दिनों तक [साहस कर उसके बदले अपनी कोई गवर्नमेण्टकी स्थापना नहीं

कर सके। इसलिए अराजकता बढ़ ही चली थी। मराठा दस्यु हमलोगोंकी कैसी दशा कर गये थे, स्वदेशाभिमानके कारण उसे हमलोग जान-बूझकर ही छिपा देते हैं। सब दोष अंग्रेज़ोंके मत्थे मढ़कर मन-ही-मन हमलोग बहुत .खुश होते हैं।

अंग्रेज़ोंके सम्बन्धमें अलीवर्दीख़ाँ बहुत दूर तक अपने पूर्ववर्ती मुर्शीद कुलीख़ाँकी पालिसी ही अपनाये हुए थे। वे इन लोगोंपर कड़ी दृष्टि रखते, लेकिन एकदम इनका उच्छेद कर देना भी उन्हें पसन्द नहीं था।

मुर्शीद कुलीख़ाँके समान अलीवर्दीख़ाँ भी सब जातिके यूरोपियन वणिकों-को हाथमें रखते, जिससे उनमें प्रत्येकके मनमें भय बना रहता कि नवाब किसको ओर अधिक ढल जायेंगे। आँखोंके सामने ही उन लोगोंने देखा सन् १७५५ ई० में अलीवर्दीख़ाँने एक डेनिश कम्पनीको श्रीरामपुरमें व्यवसाय आरम्भ करने दिया।

सभी यूरोपियन कम्पनियाँ इसीलिए नवावको .खुश रखनेकी चेष्टा करतीं। अलीवर्दीख़ाँ पशुपक्षीको प्यार करते। इसलिए यूरोपियनोंमें कोई उन्हें सुन्दर अरबी घोड़ा उपहार देता तो कोई काबुली बिल्ली ला देता, अथवा कोई अफ्रीकासे नये प्रकारके एक जोड़े हिरन लाकर राजधानी भेजता।

बाहरसे ज़बर्दस्तीका भाव दिखानेपर भी अलीवर्दीके मनमें यूरोपियनों-के सम्बन्धमें भय बैठ गया था, इसका पूरा-पूरा पता चल जाता है। दक्षिणमें पालिटिक्समें प्रवेश कर उन्होंने कौन-सा काण्ड नहीं किया? इसे देख भय और बढ़ गया था। वे खुले आम सबको उपदेश देते कि टोपी-वालोंका दल ठीक मधुमक्खियोंकी तरह है। धीरे-धीरे दबाव डालनेपर उनके पाससे कुछ मधुका संग्रह अवश्य हो जाता है किन्तु खबरदार, कोई उनके छत्तेमें हाथ डालने न जाय, वैसा करनेपर वे काट खायेंगे।

बर्गियोंके उपद्रवके समय उन्हींकी दुहाई देकर उन्होंने फ्रान्सीसियों और डचोंके पाससे एक बड़ी रक़म वसूल कर ली, अंग्रेज़ोंसे भी तीन लाख

रुपये माँग दिये। अंग्रेज़ोंके रुपया देनेमें कुछ आना-कानी करनेपर उन्होंने कहला भेजा रुपये नहीं दोगे। तुम लोगोंको आश्रय देकर कौन रक्षा कर रहा है? उसका क्या कोई मूल्य नहीं? अंग्रेज़ फिर कुछ जवाब नहीं दे सके, चटपट रुपये निकाल दिये।

मराठे जब हुगलीमें जमकर शिवपुरके थाना-दुर्गकी ओर नज़र डाल रहे थे, तब भयभीत होकर अंग्रेज़ोंने अपने क़िलेको और थोड़ा मज़बूत कर लेनेके लिए नवाबके पास एक अर्जी भेजी। उत्तरमें अलीवर्दी ख़ाँने कहा, तुम लोग बनिया हो, तुम लोगोंको क़िला, दुर्ग, गढ़, इमारत इतने सबकी क्या ज़रूरत है? मैं तो अभी मरा नहीं हूँ। मुसीबतोंमें तुम लोगोंकी रक्षा करनेके लिए मैं तो हूँ ही। अंग्रेज़ फिर चुप हो गये।

किन्तु जब बर्द्धमानके राजा तिलकचन्द अपने इलाक़ेमें अंग्रेज़ोंको व्यवसाय करने देनेमें बाधा डालनेकी चेष्टा कर रहे थे, तब अलीवर्दी ख़ाँके उनको एक कड़ी चिट्ठी लिखनेसे अंग्रेज़ लोग उस बारके लिए बच गये।

घटना इस प्रकार थी। रामजीवन कविराज नामका एक व्यक्ति कलकत्ता शहरके पास बेहाला ग्राममें बर्द्धमानके राजाके मकानमें रहकर उनके वहाँके कामकाजकी देखरेख करता। कविराज महाशयको रातोंरात धनवान होनेका लोभ हुआ। जानवुड नामक एक अंग्रेज सौदागरके साथ मिलकर उन्होंने एक व्यवसाय प्रारम्भ किया। लेकिन दुर्भाग्यके कारण व्यवसायके फेल होनेसे कविराज बहुत रुपयेके क़र्ज़दार हो गये। अंग्रेज़का बच्चा उनके नाम मेयर्स कोर्टमें नालिश कर डिग्री पा गया। इसके बाद उस डिग्रीको जारी कर रुपया वसूल करनेके उद्देश्यसे राजाके मकानमें ही कविराजके ऊपर कई कुर्कीके प्यादे बैठा दिये।

यह ख़बर पाते ही बर्द्धमानके राजाने ग़ुस्सेसे अपने इलाक़ेमें अंग्रेज़ोंकी जितनी आढ़तें थीं, सबपर एक-एक चौकी कर वसूल करनेके लिए बैठा दी। आढ़तके कर्मचारियोंको पकड़ फाटकमें बन्द करा दिया। अंग्रेज़ लोग अब और न माल निकाल ही सकते थे और न चालान ही कर पाते थे।

इसी बातको लेकर अंग्रेज़ोंके नवाबके पास नालिश करनेपर अलीवर्दी खाँने वर्द्धमानके राजाके पास लिख भेजा कि यह तुमने बहुत बड़ा अन्याय किया है। मुझे बताये बिना तुम्हारा ऐसा करना बिलकुल ही ठीक नहीं हुआ। अंग्रेज़ोंने जो कुछ किया है वह क़ानूनके मुताबिक़ ही किया है। लोग विदेशी हैं। व्यवसाय चालू रखनेके लिए ये लोग हम लोगोंके आश्रित होकर बैठे हैं। ऐसा करनेपर तो ये व्यवसाय समेटकर अपने देशमें लौट जायेंगे। उसमें तुम्हारा भी मंगल नहीं है और देशको भी नुक़सान है। इसलिए हमारे इस परवानेको पाते ही तुम चौकी उठा लेना। अंग्रेज़ोंके गुमाश्तोंको छोड़ देना।

जर्मन अस्टेण्ड कम्पनीको तो अलीवर्दी खाँने स्वयं ही उच्छेद कर दिया। उन लोगोंने नवाबका अपमान करनेका दुस्साहस किया था।

अंग्रेज़ोंकी उन्नतिके सम्बन्धमें स्वयं अलीवर्दी खाँने ही उन्हें लिखा था कि पहले तो तुम लोगोंके केवल चार-पाँच मालके जहाज़ दीखते थे। उस जगहपर इस समय तो गंगाके ऊपर तुम लोगोंके चालीस-पचास जहाज़ दीख रहे हैं।

सब जहाज़ कम्पनीके ही थे, ऐसा नहीं था। कम्पनीके कर्मचारियोंमें अनेकोंके उस समय अलग-अलग व्यवसाय थे। उनमेंसे प्रत्येकका एक माल ढोनेवाला भाड़ेका जहाज़ रहता। और बहुतोंके साझेमें खरीदे हुए जहाज़ भी थे।

मराठोंके द्वारा प्रत्यक्ष रूपसे अंग्रेज़ोंकी कोई हानि नहीं हुई। दो-एक बार केवल बर्गियोंके हाथ उनका माल रुका। तो भी बर्गियोंके झंझटके मारे पश्चिम बंगालके सभी कारबार बन्द होनेसे अंग्रेज़ोंका व्यवसाय भी बहुत-कुछ ढीला पड़ गया था। ताँती भाग गये थे। एक भी कारीगर नहीं रहा। माल कौन जुटाता? खेतमें काम करनेवाले नहीं थे, लोगोंको खिलाता कौन? दादनीमें जितना अग्रिम रुपया दिया हुआ था, वह सब बरबाद हो

गया। सौभाग्यसे पूर्वी बंगालके कारण बंगालमें अंग्रेज़ोंका व्यापार एकदम बन्द नहीं हुआ।

सुन्दरवनके भीतरसे होकर एक बार बर्गी लोग पूर्वी बंगालको भी ले पड़नेके फेरमें थे। लेकिन सफल नहीं हो सके। वैसे पूर्वी अंचलमें पूर्ण शान्ति विराजमान थी ऐसी बात नहीं। बर्गियोंका उपद्रव अवश्य ही नहीं था। लेकिन वहाँ पोर्तुगीज़ जलदस्युओं और चटगाँई (चटगाँवके) मगोंका उत्पीड़न कम नहीं था।

: १६ :

बर्गियोंने हुगलीपर अधिकार कर लिया। वहींसे बैठे-बैठे देख रहे हैं कि और थोड़ा दक्षिणकी ओर अग्रसर हुआ जाय या नहीं। अगर कलकत्ते-की ओर वे दृष्टि डालते तो उन्हें कोई रोक-सकता या नहीं इसमें सन्देह है।

लेकिन अब अधिक नहीं। अंग्रेज़ोंने समझा कि शीघ्र ही एक उचित व्यवस्था नहीं करनेपर नहीं चलेगा। कलकत्तेमें जितने इंजिनियर, सर्वेयर थे, उन सबोंको बुलाकर काउन्सिलने कहा, तुम लोग शहरकी रक्षाके लिए एक-एक प्लान बनाओ। बहुतसे प्लान तैयार हुए, किन्तु कोई भी काउन्सिलको पसन्द नहीं आया। सीधी-सी बात यह थी कि खर्चका परि-माण देख वे भयसे पीछे हट गये।

कलकत्तेकी फौज़के उस समयके अध्यक्ष कैप्टेन विलियम होल्कम्बने परामर्श दिया कि कम-से-कम शहरके चारों ओर कई तोपोंकी फौज़ी चौकियाँ क़ायम की जाँय। उससे यह होगा कि एकदम हाथपर हाथ धरे मरना नहीं होगा। काउन्सिलने विचार कर देखा कि कुछ नहीं होनेसे तो यह अच्छा होगा। शहरको चारों ओरसे घेरकर तीस फीट चौड़ी दीवार उठानेके प्लैनसे इसमें खर्च बहुत कम है। काउन्सिल राज़ी हो गयी।

शहरकी एकदम उत्तरी सीमापर चार तोपोंकी चौकी क़ायम हुई।

उसी तरफ़से शत्रुके आनेकी सम्भावना अधिक थी। वहींपर पेरिन साहबका बाग़ था। उसीके बीच पोखरेके बीच बने हुए मकानके समान एक आठ कोना मकान था। उस कालके साहब-बीबी चाँदनी रातमें यहीं आकर हाथमें-हाथ डाले हवा खाते हुए घूमते।

पुराने राजपथ अर्थात् इस समयके चित्पुर रोडके बीचमें जोड़ा बागान था। वहाँ छः तोपोंकी चौकी बनी।

इसके बाद जोड़ासाँकोमें तीन तोपोंकी और लाल बाज़ारमें साहब मुहल्लाके प्रवेश-द्वारपर उस समयके जेलके पास और एक तीन तोपोंकी चौकी क़ायम हुई। सबके अन्तमें दक्षिणकी ओर गोविन्दपुर और कलकत्ते-के बीचोबीच कैप्टेन लायड साहबके मकानसे लगे ही और एक-चार तोपोंकी चौकी हुई।

देशी लोगोंने जब देखा कि काउन्सिल केवल प्लैन लेकर ही उधेड़-बुन कर रही है, देशी मुहल्लोंके लिए काम लायक़ कुछ भी नहीं कर रही है तब उन लोगोंने एक प्रस्ताव भेजा। उन लोगोंने कहा कि उत्तर बाग़ बाज़ारसे दक्षिण कुली बाजार (हेस्टिंग्स) तक सात मीलोंमें एक खाई काटी जाय। उससे सहज ही शत्रुपक्ष शहरमें घुस नहीं सकेगा। उनको बहुत दूर तक रोका जा सकता है।

हिसाब करके देखा गया कि इक्कीस हाथ चौड़ी सात मील लम्बी खाई खोदनेमें पचीस हजार रुपये लगेंगे। वह तो लगेगा ही। कामको ठीक तरह पूरा कर लेना भी तो कोई मामूली बात नहीं है। काउन्सिलको इतस्ततः करते देख देशी बाशिन्दोंने खबर भेजी कि देशी बाशिन्दा ख़ुद ही इस खर्चे-को चन्दा द्वारा इकट्ठा कर लेंगे। पर अभी जिसमें काउन्सिल अपनी तह-वीलसे अग्रिम रुपया दे।

सेठोंके घरके वैष्णवदास, रामकृष्ण, रासबिहारी और बड़े दलाल उमीचन्दके पाससे ज़मानत लिखवाकर कम्पनीके रुपयेमेंसे काउन्सिल रुपया कर्ज़ देनेके लिए राज़ी हुई। तीन महीने बाद उसे लौटा देनेका करार रहा।

अन्त तक सब रुपये खर्च नहीं हुए। तीन महीनेमें क़रीब आधी खाई खोद देनेके बाद काम बन्द कर दिया गया। बर्गियोंका झंझट तब तकके लिए थोड़ा नरम पड़ गया था। देखा गया कि अलीवर्दीखाँ उन्हें दबा देनेके लिए खूब ज़ोरशोरसे लग गये हैं। खाई प्रायः आजकलके एण्टाली मार्केट तक जाकर रुक गयी थी। इसीका अंग्रेज़ी नाम मराठाडिच है।

बादमें किसी समय लगता है डिचको एण्टाली मार्केटसे बेग बाग़ान तक खींचकर ले जाया गया था। दक्षिणमें कुली बाज़ारसे भी लगता है फिर कुछ दूर खाई काटी गयी थी। बहुतोंका कहना है कि टालीका नाला पुराने समयके मराठा-डिचका ही एक अंश है।

जो भी हो, देशी बाशिन्दोंके पाससे चन्दा वसूल कर कम्पनीका रुपया वसूल कर देनेमें सेठोंके प्राण निकल गये थे। कम्पनी भी छोड़नेवाली पात्र नहीं थी। तीन वर्षों तक लगातार तक़ाजा करनेपर रुपया वसूल हुआ। पता चलता है कि जितना काम हुआ था, उसके लिए ९९८०) रुपये लगे थे। इससे अधिक होनेपर रुपया चुकानेमें और कितना समय लगता यह कहा नहीं जा सकता।

मराठा-डिच सीधे गोल होकर शहरको घेरेगा, यही बात थी। कहीं ज़रा भी टेढ़ा-मेढ़ा नहीं होगा। लेकिन हाल्सी बाग़ानमें उस समय कलकत्ते-के दो प्रधान व्यक्तियोंका उद्यान-गृह था। एक गोविन्द मित्तिर और दूसरे उमीचन्द। उन लोगोंने ज़िद्द पकड़ ली कि उनके बाग़को घेरकर डिचको ले जाना होगा। वे बहुत दिनोंके शहरी लोग थे। कोई उन्हें मुफस्सिलका आदमी कहेगा यह उन्हें बर्दाश्त नहीं होगा। वही हुआ। काउन्सिल उनकी बात उठा नहीं सकी। दोनों बाग़ोंमेंसे अब एक भी नहीं है। उनके ही कुछ हिस्सेको लेकर इस समय वहाँ बंगीय साहित्य-परिषद्का मकान है।

मराठा-डिचके खोदे जानेसे शहरकी सीमा अपने आप ही ठीक हो गई। उसके पहले शहरकी चौहद्दी खूब स्पष्ट नहीं थी। कभी बढ़ती और

कभी घटती। कलकत्ता शहर यद्यपि उस समयकी तुलनामें इस समय आठ गुना बढ़ गया है, फिर भी सरकारी दफ़्तरमें कलकत्ता शहर कहनेसे मराठा-डिचके भीतरकी ही जगह समझी जाती है। उसके पश्चिमकी ओर शहर और पूर्वकी ओर मुफस्सिल।

कलकत्ता हाईकोर्टके आरिजिनल साइडमें यदि कभी किसीको मुक़द्दमा करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ हो तो वे निश्चय ही जानते हैं कि मराठा-डिचके उस पार हाईकोर्टका सम्मन नहीं पहुँचता, वारण्ट भी नहीं जा पाता। इस पारके भीतर ही उसकी पहुँच है।

सन् १७९४ ई०में एक बार प्रश्न उठा था कि कलकत्ता शहरकी ठीक चौहद्दी क्या है। उसी समय एक प्रोक्लेमेशन द्वारा सबको बता दिया गया था कि इस मराठा-डिचपरसे उत्तर-दक्षिण लाइन खींचनेपर उसके पश्चिम जो अंश पड़ता है, वही कलकत्ता शहर है।

बर्गियोंका हंगामा समाप्त होनेके बहुत बाद तक इसी डिचके भीतर ही शहरका कूड़ा-कर्कट फेंका जाता। धीरे-धीरे वह एक ऐसा घृणित गन्दा स्थान हो उठा कि ईसवी सन्‌की उन्नीसवीं शताब्दीके शुरूमें ही लार्ड वेले-स्लीके हुक्मसे उसे भर दिया गया था। खाईंके ऊपर मिट्टी फेंकनेसे एक बहुत लम्बा-चौड़ा रास्ता निकल आया। उसीका नाम इस समय अपर और लोअर सर्कुलर रोड है। आज भी भवानीपुरका कोई आदमी सर्कुलर रोड पार करके इस ओर आ घर लौटनेपर कहाँ गये थे ऐसा पूछनेपर कहता है कि कलकत्ता गया हुआ था।

: १७ :

अंग्रेज़ोंने देखा कि मराठा-डिच तो हुआ। लेकिन वह किसी कामका हुआ ऐसा उन्हें विश्वास नहीं हुआ। फिर उन्होंने पुराने प्लैनोंको लेकर उलटना-पुलटना शुरू कर दिया। क्या करना उचित अथवा अनुचित होगा,

वे किसी भी तरह स्थिर नहीं कर पाये। इसी प्रकार पाँच-पाँच वर्ष जल्पना-कल्पनामें ही निकल गये।

वर्गियोंका हंगामा उस समय भी मिटा नहीं था। उसी समय किसी पण्डितने राय दी साहब मुहल्लाको रेलिंगसे घेर देनेपर कैसा रहेगा। काउन्सिलने विचारकर देखा, बात तो गड़बड़ नहीं। देशी लोगोंके मरनेपर भी साहब लोग उससे बच भी सकते हैं।

उत्तर-दक्षिण और पूर्व तीन ओरसे घेरकर लकड़ीकी रेलिंग लगाई गई। रेलिंगके बीच-बीचमें आने-जानेके लिए एक-एक गेट रखा गया। उसके सामने थोड़ा गढ़ा खोदकर एक-एक पतली खाई खोदी गई और खाईके ऊपर पक्का ब्रिज बनाकर उसीके ऊपर दो तोपें रखी गईं।

देशी लोगोंको उस रेलिंगसे घेरे हुए साहब-मुहल्लेसे विदा कर दिया गया। काउन्सिलने कारण बतलाया कि वे बहुत गोलमाल करते हैं, चारों ओर बहुत ही गन्दा रखते हैं। हम लोगोंकी दिनचर्यामें थोड़ा गोलमाल तो है ही। पूजा करने बैठनेपर हम लोग ढाक-ढोल, घण्टा बजाते ही हैं। जोर-जोरसे बातें करनेकी भी हम लोगोंकी बराबरकी आदत है।

हम लोगोंका गर्म देश है। यहाँके लड़के-बच्चे बहुत पुराने समयसे ही नंगे फिरते हैं। घरमें हम लोगोंके लिए भी अपने पहननेका एक पुराना-सा लुंगी जैसा कपड़ा रहता है। देह खुली रहती है, बहुत हुआ तो ऊपरसे एक गमछा डाल लेते हैं। इसके अलावा जहाँ-तहाँ मैला-कुचैला कर देना भी तो हम लोगोंकी सनातन रीति है।

वैसे जो कारण दिखलाया गया वही असली कारण था, ऐसा नहीं लगता। देशी लोगोंको साथमें रहने देनेपर वे किस समय गुप्त रूपसे शत्रुपक्षको साहब मुहल्लेके भीतर घुसा देंगे, वास्तवमें अंग्रेज़ोंके मनमें यही भय था। सभी बातें क्या स्पष्ट कही जाती हैं? अथवा, कहना क्या उचित है?

पर फोर्ट विलियमके लिए कुछ नहीं हुआ। उस समय कैप्टेन कैरो-

लाइन फ्रेडरिक स्काट, जो वारेन हेस्टिंग्सके प्रथम श्वसुर थे, अंग्रेज़ी फ़ौजके नये सरदार थे। उन्होंने देखा, किसी प्रकारसे एक वार रेलिंगके व्यूहको भेदकर शत्रु पक्ष साहव-मुहल्लेमें घुस जाय तो क़िला फतह है अर्थात् सब खतम हो जायगा। फोर्टसे कुछ भी नहीं किया जा सकेगा। उसके सामने ही वहुतसे वड़े-वड़े मकान हैं। क़िलेसे गोला गोली छोड़नेपर उन्हीं मकानोंकी ही केवल हानि होगी, शत्रु पक्षको ज़रा सी खरोंच भी नहीं लगेगी।

उन्होंने राय दी कि फोर्टको न हो तो उत्तर वाग़-वाजारमें पेरिन साहवके वाग़में अथवा दक्षिण गोविन्दपुरमें आजकल फोर्ट जहाँ है वहींपर, ले जाया जाय। लेकिन काम तो कुछ नहीं हुआ। स्काट साहव स्वयं मद्रास घूमने जाकर वहीं ज्वराक्रान्त हो मर गये।

अंग्रेज़ोंके साथ वहुत पहले जोव चारनकके समय इस देशके लोगोंके साथ वही एक वार छोटा-मोटा युद्ध हो गया था। उसके वादसे और किसीने कभी उनके ऊपर चढ़ाईकर मारकाट नहीं की।

इसके सिवा उस समय रुपया कमानेका व्राज़ार गर्म था। उस समय कौन फोर्टकी ओर देखे ? इसीलिए क़िलेकी कोई मरम्मत भी नहीं कराई गई। उसमें झञ्झट तो कम नहीं है। नवावके पाससे हुक्म मँगाओ, प्लैन वनाओ, डायरेक्टरोंको समझाओ, रुपयेका प्रवन्ध करो—कितने प्रकारके झमेले हैं। कौन इन सब झमेलोंमें पड़े ?

वर्गियोंका उपद्रव शान्त हो गया है। अव और भय क्या है ? इसीलिए फोर्ट विलियम वाहरी दिखावा करनेवाले वावुओंके ठाट-वाटके समान केवल देखने भरको सुन्दर रहा। उसके वाहरसे तो चिकना-चुपड़ा और भीतर भूसा भरा हुआ।

: १८ :

वर्गियोंके उपद्रवके कारण देशी लोगोंका दलका-दल कलकत्ते आ पहुँचा। कोई-कोई उत्तरी वंगालमें और कोई-कोई पूर्वी वंगालमें भी भागे। उस

ओर जो लोग गये वे फिर नहीं लौटे। और लौटे ही क्यों? वहाँ खाने-पीनेका कोई कष्ट नहीं था। धरतीमें एक कुदाल मारनेसे ही धान रखनेकी जगह भर जाती। तरकारी, मछली, दूध, घी प्रचुर था। बंगालीको और चाहिए ही क्या? इसके अलावा उस समय वहाँ जिसकी लाठी उसकी भैंस वाली बात थी। देहसे शक्तिशाली होनेपर ज़मीन ले लेनेमें कितनी देर लगेगी? थोड़ी खोजकर देखनेपर सभी जान सकते हैं कि उत्तरी और पूर्वी बंगालके जितने बड़े-बड़े खान्दानी जमींन्दार-घर हैं, उनके पूर्व पुरुषोंमें अनेक दुर्दान्त डकैत थे।

जो कलकत्ते आये, उन्होंने देखा खाने-पीनेकी उतनी मौज नहीं होनेपर भी शान्त-चित्तसे यहाँ रहनेकी अनेक सुविधाएँ हैं। अंग्रेज लोग रुपये-पैसे छीन नहीं लेते। स्त्री, दासी भी नहीं छीनते। कर्जके दवावसे जवर्दस्ती क्रिश्चियन नहीं बना लेते। कर्जके रुपये नहीं चुकानेपर क़ैद अवश्य कर लेते हैं, लेकिन शरीरको कष्ट नहीं पहुँचाते। काम करा कर उचित दाम दे देते हैं। बेगारी नहीं करनी पड़ती।

काम भी क्या एक ही तरहका है? सरकारी, अर्ध-सरकारी, बे-सरकारी—हजारों तरहके काम करना चाहनेपर यहाँ बेकार नहीं बैठना पड़ता। इस कलकत्ता शहरमें रुपया कमानेके विभिन्न उपाय हैं।

बर्गियोंके उपद्रवके कारण जितने देशी लोग कलकत्ता आये अंग्रेजोंने उन्हें खूब आदरपूर्वक ग्रहण किया। आदरकी मात्रा लेकिन कुछ वढ़ी-चढ़ी जैसी थी, कुछ जैसे लोगोंको दिखानेके लिए हो। सलीमउल्ला साहबने अपने इतिहास-ग्रन्थ तारीख-ए-बँगलामें देशी लोगोंके प्रति अंग्रेजोंके इस सद्-व्यवहारकी वात विशेषरूपसे उल्लेख की है।

इतने आदर-सत्कारका थोड़ा भीतरी कारण था। कम्पनीके डायरेक्टर वारवार सावधान करते रहते, देशी लोगोंके ऊपर जिसमें विलकुल जुल्म न हो। उन लोगोंके साथ जिसमें हमेशा सज्जनताका व्यवहार किया जाय। उनके ऊपर किसी प्रकारका अन्याय-अत्याचार हो रहा है, यह सुननेपर

उसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। डायरेक्टरोंका यह उपदेश विशुद्ध स्नेह-के कारण था, ऐसा तो नहीं लगता। कम्पनीके भी ऊपरवाले थे। वह ब्रिटिश पार्लियामेण्ट थी। पार्लियामेण्टको यदि एक बार पता चल जाय कि कम्पनीके कर्मचारो देशी लोगोंके ऊपर जबर्दस्ती कर रहे हैं, तो उसके लिए डायरेक्टरोंको कैफियत देते-देते प्राण मुँहको आ जायेंगे। कम्पनोके चार्टरकी मियाद खतम होनेपर हो सकता है कि पार्लियामेण्ट और चार्टर न दे। यह भय कम्पनीको बराबर बना रहता।

उस समय जितने देशी लोग कलकत्ता आये, उन्हें अब और गोविन्द-पुरमें जगह नहीं मिली। साहब मुहल्ला भी बन्द हो गया। बड़ा बाजारमें तो तिल रखनेकी भी जगह नहीं थी। अतएव सुतोनुटिमें उन सब लोगोंको जाना पड़ा। वहाँके खास बाशिन्दोंको भोतरकी ओर अर्थात् शहरके पूर्वकी ओरके जंगलमें ठेलकर गंगाके किनारेकी जगहों—जैसे बाग बाजार, हाट-खोला, कुमोर टुली, जोड़ाबागान, तथा जोड़ासाँको अंचल—पर धीरे-धीरे उन लोगोंने अधिकार जमा लिया। अन्तमें लोगोंके और बढ़नेपर फिर वहाँ-से भी मूल-निवासियोंको और थोड़ी दूर ठेलकर उन सब स्थानोंको भी उन लोगोंने हाथ कर लिया। इससे अंग्रेज़ोंको ही सुविधा हुई। क़रीब-क़रोब मराठा-डिच तक सहज ही लोगोंकी बस्ती भर गयी।

देशी मुहल्लेमें तबतक भी देशी लोगोंने पक्के मकान नहीं बनाये थे। वे तब तक भी अच्छी तरह नहीं समझ सके कि अंग्रेज़ोंकी शक्ति कितनी है। वे क्या दो दिनोंके लिए इस देशमें आये हैं? असुविधा होनेपर क्या वे उसी समय चले जायेंगे? इसके अलावा पक्का मकान बनानेके लिए उस समय सरकारी हुक्म ले लेना पड़ता। और फिर पहलेके संस्कारवश लोगों-के मनमें यह भी भय था कि पक्का मकान बनानेपर रुपया है, ऐसा समझ-कर पता नहीं कौन कब कुदृष्टि डाल दे। इसके बाद चोर-डकैतोंका भय तो था ही। कलकत्तेके देशी लोग उस समय भी असलमें नवाबकी ही प्रजा थे। कलकत्तेके किसी देशी आदमीकी निःसन्तान मृत्यु होनेपर मुर्शीद कुली

खाँसे लेकर अलीवर्दी खाँ तक सब नवाब ही उस मृत व्यक्तिकी सम्पत्तिपर दावा कर अंग्रेजोंके पाससे उसे तलब करते।

लेकिन अंग्रेजोंको स्वयं इस विषयमें डर भय नहीं था। कम्पनीके छोटे-मोटे कर्मचारी भी पक्के मकानमें रहते। पालकीपर चढ़कर घूमते। हाथी-घोड़ापर चढ़ते। दूर कहीं जानेपर बजरा भाड़ा करते।

सवेरेके समय वे काम-काज करते। दोपहरमें सोते। शामके समय मज़ेमें हवा खाते हुए घूमते। रातमें शराब पीते-पीते जुआ खेलते। इसके बाद उस समय लाल बाजारकी मोड़पर—आजकलके मिशन-रोमें एक थियेटर भी हो गया था। वहाँ भी भीड़ करते।

साधारण देशी लोग पालकीपर नहीं चढ़ सकते। राजा-महाराजा लोग तो उस समय कलकत्ता आये नहीं थे। उन्हें पालकीपर चढ़नेके लिए सरकारी परवाना मँगाना पड़ता। तब बैलगाड़ी और ऊँट गाड़ी, घोड़ा, हाथी कलकत्तेके रास्ते-रास्तेपर बहुत देखनेको मिलते। घोड़ा गाड़ीका उस समय तक चलन नहीं था। प्रेसिडेण्ट साहबने यूरोपसे एक गाड़ी मँगवाई थी अवश्य, लेकिन कम्पनी उसका खर्च देनेको राज़ी नहीं हुई, इसलिए वे उसपर चढ़कर घूम नहीं सके।

सन् १७२७ ई० में मुर्शीद कुली खाँकी मृत्युसे सन् १७५६ ई०में सिराजुद्दौलाके कलकत्ता-आक्रमणके पहले तक शहर इतना बढ़ गया था और इतना सुन्दर उसका रूप-रंग हो गया था कि उसको पहचानना अब कठिन था। पुराने शहरको घेरकर अर्थात् चित्पुर रास्तेके पश्चिमी अंशमें बहुतसे छोटे-बड़े रास्ते हो गये थे। इस समय मराठा-डिच तक लोगोंकी बस्ती होनेसे उस ओर भी जंगलको काटकर नये-नये रास्ते बनने लगे।

साहब मुहल्ला उस समय भी डलहौजी स्क्वायरको चारों ओरसे घेरे हुए था। चौरंगी अंचल तब तक भी ठीक साहबोंका मुहल्ला नहीं हुआ था। वैसे यह भी देखनेको मिलता है कि कुछ-कुछ अंग्रेज़ उस ओर बागान

बाड़ी (उद्यान-गृह) बनाकर चले जा रहे हैं। बालीगंज, अलीपुर, टालीगंज तो हम लोगोंने अपने बचपनमें ही जंगलसे भरा देखा है।

बहुतोंने सरकारी रास्ता तथा ड्रेनको चुपकेसे दबाकर अपने-अपने मकानका कम्पाउण्ड कर लिया था। कलकत्तेकी काउन्सिलने ज़मींदारको हुक्म दिया कि पट्टेसे सब स्थानोंको मिलाकर देखो कि किस-किस जगह ज़मीन बेदखल हुई है। उन सब स्थानोंके कम्पाउण्ड दीवारको तोड़कर फिरसे रास्ता, ड्रेन, ब्रिज पहलेकी तरह ही ठीक-ठाक कर दो।

लोगोंके बढ़नेसे बाज़ार भी बहुत बढ़ गये। उत्तरकी ओर बाग बाज़ार, शोभा बाज़ार, हाट खोला बाज़ार, चार्ल्स बाज़ार और श्याम बाज़ार हो गये। बीचमें नतून बाज़ार, धोबा बाज़ार, बड़ा बाज़ार और लाल बाज़ार थे। पूरबकी ओर घासतला बाज़ार और जान बाज़ार (जान साहबका बाज़ार) तथा दक्षिणकी ओर बेग़म बाज़ार।

इसीसे समझा जा सकता है कि जन संख्या कितनी बढ़ गई थी। सन् १७५२ ई० में हालवेल साहबने जब कलकत्तेकी ज़मींदारीके सम्बन्धमें एक रिपोर्ट दाखिल की थी तो उसमें कहा था कि उस समय शहरमें चार लाख लोग थे। लेकिन हालवेल साहबने जहाँ जो-कुछ कहा है, वह प्रायः सब ही अत्युक्ति है।

बेभर्ली साहब जब सन् १८७२ ई० में सेन्सस आफिसर होकर हिसाब करने बैठे, तो हालवेलकी रिपोर्ट लेकर अच्छी तरह स्पष्ट रूपसे दिखला दिया कि हालवेल संख्याको चौगुनी बढ़ाकर कह गये हैं। अर्थात् उस समय शहरकी जनसंख्या किसी भी तरह एक लाखसे अधिक नहीं हो सकती।

जो पट्टे दिये गये थे, उससे मालूम होता है कि शहरकी मकान बनानेकी ज़मीन बढ़कर ९२५५ बीघे हो गयी है। कच्चे-पक्के सब मिला-कर मकानोंकी संख्या १४७१८ थी।

लेकिन लोगोंके बढ़नेसे शहरकी ज़मीनसे वसूल होनेवाले खजानेका

रुपया सचमुचमें चारगुना हो गया था। मुर्शीद कुली खाँकी अमलदारीमें चार हज़ार रुपये होते, अब वे सत्रह हज़ार हो गये। इसके अलावा अन्य टैक्सोंसे नब्बे हज़ार रुपयेकी आमदनी थी।

अंग्रेज़ वैश्य वर्गके हैं। कैसे रुपया वसूल करना चाहिए इसका कौशल उनका अच्छी तरह जाना हुआ है। दे-दिलाकर, सहते-सहते थोड़ा सब्र करना जान लेनेपर अन्त तक अधिक पाया जाता है। सब्रमें मेवा जो फलता है, इस नीतिको अंग्रेज लोग अच्छी तरह समझते थे। इसीलिए उन्होंने ही इस देशसे सबसे अधिक पाया है। नवाब, बादशाह, राजे-महाराजे ले-देकर एकदम साफ़ कर देते, इसलिए वे एक ही बार जितना-कुछ पाते। उन्हें अस्ति-नास्तिका विचार तो था नहीं, बस 'देहि-देहि पुनः पुनः' ही वे जानते।

कलकत्तेके लोग ख़ुशी मनसे ही थोड़ेसे टैक्स देते। क्योंकि वे उसे बिना कठिनाईके दे पाते। और फिर ज़रूरत होनेपर उससे रिहाई भी पाते। इसके अलावा टैक्सके बदले अंग्रेज़ोंने कलकत्ता शहरमें अनेक सुख-सुविधाएँ मौजूद कर दी थीं।

और एक बात थी। अंग्रेज़ोंको इस टैक्समें किसीसे लेने और किसीसे नहीं लेने जैसी बात नहीं थी, सबको एक जैसा टैक्स देना पड़ता। मुसलमानी मतसे काफिरके लिए दुगुना टैक्स था। अतएव कोई भी हिन्दू कभी भी उसे अच्छे मनसे देना नहीं चाहता। व्यापारमें भी हिन्दुओंके लिए डबल चुंगी थी। उससे बचनेके लिए बाध्य होकर बहुतसे हिन्दू असली नाम छिपाकर मुसलमानी नामसे व्यापार करते।

असली बात यह है कि सन् १७५२ ई० से ही शहरका चेहरा धीरे-धीरे वर्तमान कालके रूपको ग्रहण करना आरम्भ कर दिये हुए था। लेकिन शहरकी वास्तविक उन्नति ईसवी सन्‌की उन्नीसवीं शताब्दीसे हुई। हमारा वक्तव्य विषय यह नहीं है। पर वह जानने लायक़ एक विषय अवश्य है।

: १६ :

धीरे-धीरे कलकत्तेमें भी थोड़ा-थोड़ा करके एक देशी-समाज बनने लगा। उस समय तक वह समाज अच्छी तरह जमा नहीं था। कमल पत्तेपर जलकी तरह टलमला रहा था। इसीलिए उसका चेहरा स्पष्ट नहीं था। केवल इतना ही विना हिचकके कहा जा सकता है कि उस समाजकी नींव और चाहे जिसपर स्थित हो, लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह वर्णाश्रम धर्मपर बिल्कुल ही नहीं थी।

इसीलिए तो देखनेको मिलता है कि कुलीन ब्राह्मण मनोहर मुखुज्जे, रामानन्द बाण्डुज्जे, कीनू चाटुज्जे; श्रोत्रिय ब्राह्मण कन्दर्प, घोषाल; कष्ट-श्रोत्रिय कृष्णकान्त पाठक; पिरिलि ब्राह्मण पंचानन ठाकुर; कुलीन कायस्थ गोविन्दराम मित्तिर, उनके पुत्र रघुनाथ मित्तिर, दयाराम बोस, रामनाथ बोस, नीलमणि मित्तिर; मौलिक कायस्थ गोविन्दशरण दत्त, कृपाराम दत्त, रामचरण कर, रामचन्द्र दे (देव), राजाराम पालित; बाहात्तुरे कायस्थ कृष्णवल्लभ सोम, गोपाल भद्र—सभी एकत्र अच्छी तरहसे बसे हुए थे। खुशीसे साथ-साथ चल रहे थे।

और फिर उन्हीं लोगोंके साथ उसी तरह रहते हुए थे, ताँती जातिके वैष्णव चरण सेठ, रासविहारी सेठ, रामकृष्ण सेठ, पीताम्बर सेठ, शोभाराम बसाक, राधामोहन बसाक, हरिमोहन बसाक, चैतन्य बसाक; स्वर्ण वणिक् (सुनार) जातिके शुकदेव मल्लिक, नयनचंद मल्लिक, राधाकृष्ण मल्लिक, नकुड़ धर; सद्‌गोप जातिके आत्माराम सरकार, और उनके पुत्र बनमाली सरकार; धोबी जातिके रत्नेश्वर सरकार; तेली कालीचरण पाल, लक्ष्मी कुण्डु, कृपाराम पाल; कैवर्त गौरहरि हालदार।

इनके अलावा मदन कारफरमा, नन्दराम कडुरी, बलि कोठमा, राधानाम कोठमा, ब्रजवल्लभ कोठमा, लक्ष्मी कोठमा—ये सब नाम भी पाये जाते हैं। लेकिन इनकी उपाधियाँ इनके धन्धेसे जुड़ी हुई थीं, इसलिए इनकी

जातिका पता नहीं चलता। केवल नाम देखकर इनकी जाति बताना अत्यन्त कठिन है। पर इनमेंसे कोई भी कुलीन वंशका नहीं था, इसमें कोई सन्देह नहीं। कारफरमा, कडुरी ये दोनों उपाधियाँ अभी भी पाई जाती हैं। लेकिन पत्रमा किसकी उपाधि है, इसका पता अभी भी नहीं लगा पाया हूँ।

सभी एक ही तरहसे जीविकोपार्जन कर रहे हैं; उसी तरहसे पैसा पैदा कर बड़े आदमी हो रहे हैं। इनमें बहुतसे परवर्ती कालके कलकत्तेके बड़े-बड़े नामी परिवारके आदिपुरुष थे।

कलकत्तेमें उस समय क़रीब सभी जातिके लोग थे। केवल वैद्य कुल-के किसीका नाम कहीं नहीं मिलता। राढ़ देशमें शायद उनकी संख्या कम हो, इसलिए अथवा उस समय भी वे जाति-व्यवसाय छोड़नेके लिए तैयार न रहे हों, इसलिए कलकत्तेके समाजमें देखनेको नहीं मिलते।

इतनी तरहकी जातियाँ एक साथ थीं। इसीलिए पैसा होनेपर लोग जातिमें ऊँचे उठकर कायस्थ हो सकते हैं। इस प्रकारकी कहावत कलकत्ते-में चल गई है। केवल कलकत्ता शहरमें ही धीवर कायस्थ, बढ़ई-कायस्थ, चासा-कायस्थ आदि विचित्र प्रकारके कायस्थोंकी बात सुननेको मिलती है। केवल डरसे ही लगता है कि उस समय उन्होंने ब्राह्मणोंके यज्ञोपवीतको पकड़कर नहीं खींचा (अर्थात् अपनेको ब्राह्मण कहनेका साहस नहीं किया)।

इस समाजके लोगोंके पारिवारिक जीवनमें जितना ही अन्तर क्यों न हो, बाहर सबका चेहरा एक तरहका ही था। माथेपर बाबरी, गालोंपर जुल्फी, मुँहपर पुरुषोचित मूछें, सिरपर पगड़ी बाँधकर, शरीर पै जोब्बा लपेट कर, पैरोंमें चट्टी अथवा नागरा पहन कर सभी अपने-अपने कामपर जाते। कामपर जाकर भी एक ही नियमसे काम करके जीविका उपार्जन करते।

समाज असलमें बंगाली हिन्दू समाज था। कुछ पश्चिमके हिन्दू भी इस समाजमें थे। किन्तु तब तक मुसलमान इस समाजमें नहीं आये थे।

कलकत्तेमें कई एक मुंशी, कारीगर और भृत्य श्रेणीके मुसलमानोंको छोड़कर अन्य मुसलमान उस समय वे-घर-वारके घुमक्कड़ थे।

पश्चिमसे आनेवालोंमें उमीचन्द उस समय खूव वढ़-चढ़ रहे थे। उमीचन्द सिक्ख-सम्प्रदायके थे। लाहौरके मूल निवासी थे। वे कलकत्ते आकर पहले सेठोंके घर गुमाश्तागीरी कर काममें पक्के हुए। उसके वाद सेठोंको ही हटाकर वे स्वयं अंग्रेज़ोंके वड़े दलाल वन वैठे। वहुतसे कामोंमें वंगालियोंको पहले-पहल रास्ता दिखलाया। लेकिन अन्तमें देखते हैं कि अन्य प्रदेशके लोगोंने उन कामोंपर धीरे-धीरे एकाधिपत्य जमा लिया। ऐसा वहुत दिनोंसे ही कलकत्तेमें चला आ रहा है।

वैसे उमीचंदको भी अधिक दिनों वड़ा दलाल वनकर नहीं रहना पड़ा। जैसे ही उनकी थोड़ी प्रतिष्ठा हुई, वैसे ही उन्होंने काममें धूर्तता शुरू कर दी। मालका जो नमूना देते उसके साथ वादके दिये हुए मालमें बहुत फर्क रहता। बाज़ार भावसे दाम भी अधिक लेते। यह सब देखकर डायरेक्टरोंने सन् १७५३ ई० में हुक्म दिया कि दलालीका पद उठा दो, चाहे छोटा हो, चाहे वड़ा। उसके स्थानपर अंग्रेज़ोंने गुमास्ता रखा। गुमास्तेके हाथ मुफस्सलकी आढ़तमें रुपया भेजते। गुमाश्ता ही दादनी देने और वहाँसे माल खरीदकर कलकत्ते चालान करते।

इससे उमीचंदका विशेष-कुछ हुआ-हवाया नहीं। वे उस समय करोड़पति थे। व्यापार छोड़कर वे पालिटिक्समें उतर आये। वैसे हाथमें अधिक रक़म पानेका कोई मौक़ा मिलनेपर उसे वे कभी छोड़ते नहीं। जो वाघ एक वार मनुष्यके रक्तका स्वाद पाये हुए है, वह क्या आदमीको खाना छोड़ सकता है ? लेकिन पालिटिक्समें पड़नेके कारण उमीचन्दको किस प्रकारसे नाकों चने चबाना पड़ा था, वह थोड़ी देर ही में सुननेको मिलेगा।

अँग्रेज़ोंके इतने पास रहकर इस देशी-समाजके लोगोंने अंग्रेज़ी सीख पाई थी, ऐसा नहीं था। कारवार चलानेके लिए अंग्रेज़ी सीखनेकी आव-

श्यकता तब तक नहीं हुई थी। बल्कि डायरेक्टरोंके आदेशसे अंग्रेज़ लोग स्वयं ही कुछ-कुछ देशी भाषा सीखते।

केवल सीखनेके लिए, केवल ज्ञान प्राप्तिके लिए, कुछ शिक्षा पाना उस पक्षाका धर्म नहीं था। बँगला पाठशालाओंमें थोड़ा वर्णपरिचय और थोड़ा लिखना सिखाया जाता। उसके साथ ही थोड़ा शुभंकरीका हिसाब सिखाया जाता। यही काफ़ी था। किसी भी हस्तलिखित ग्रन्थको देखनेसे पुराने हाथ की लिखावट देखी जा सकती है, ह्रस्व, दीर्घ, षत्व-णत्व, का ज्ञान वंगाली लेखकको तब तक नहीं हुआ था। संस्कृत टोलमें शिक्षा दी जाती कुछ व्याकरण, थोड़ा काव्य, दो-चार पृष्ठ स्मृति और न्यायमें बालकी खाल निकालना तथा सूक्ष्मादपि सूक्ष्म कूट तत्त्व का विचार करना।

अन्य प्रकारकी शिक्षा देता ही कौन? उस समय न शिक्षक थे, न पाठ्य पुस्तकें। अंग्रेज़ लोग भी जो उस समय इस देशमें आते वे भी कुछ अधिक शिक्षित थे, ऐसा तो नहीं जान पड़ता। अतएव वे दूसरोंको क्या शिक्षा देते? केवल रुपया कमानेकी फ़िक्र—उस कौशलको उन्होंने देशी लोगोंको अच्छी तरह ही सिखा दिया था।

: २० :

देशी लोग कलकत्तेमें खूब आनन्दके साथ ही रह गये। वे बड़े मज़ेमें रुपया कमा रहे थे। उनके धर्म-कर्ममें भी कोई बाधा नहीं देता। होली, दुर्गोत्सव, चड़क-पूजा (बंगालमें होनेवाला एक शैव उत्सव), रथयात्रा, रास सभी अच्छी तरह मनाये जाते। उसमें कोई कुछ नहीं बोलता। उल्टे, यह देखनेको मिलता है कि उस समयके अंग्रेज़ भी उस आमोद-प्रमोद, उत्सवको खड़े होकर देख रहे हैं। कहीं सतीदाह हो रहा है, यह सुनकर देखनेके लिए दौड़ते।

ऋतु परिवर्तनके साथ उत्सव-आनन्दके लिए जो भिन्न-भिन्न प्रकारकी

पूजाकी सृष्टि हुई है, उन्हें अगर छोड़ दें तो यह देखनेको मिलता है कि बंगाली जाति वास्तवमें काली-उपासक है। काली-पूजा ही हम लोगोंकी असली पूजा है। सन् ईसवीकी अट्ठारहवीं शताब्दीमें कलकत्तेके विभिन्न स्थानोंमें काली मन्दिर बने।

लेकिन मन्दिर बिलकुल ही सादे हैं। उनमें कहीं सौन्दर्य नहीं। किसी प्रकारकी थोड़ी-सी भी कारीगरीका नाम-निशान नहीं है। कलकत्तेमें जो सब राजमिस्त्री अंग्रेज़ोंके कोठोंका निर्माण करते, लगता है उन्हींके द्वारा ये सब मन्दिर बनवाये गये थे। अंग्रेज़ोंसे उन्होंने केवल कई पुराने ग्रीक स्टाइलके अनुकरणपर मोटे-मोटे खेमे ही बनाना सीखा था, और कुछ नहीं।

पढ़नेको मिलता है कि ईसाकी अट्ठारहवीं शताब्दी भर इन सब काली मन्दिरोंमें अमावस्याकी घोर रात्रिमें अकसर ही नर-बलि होती।

काली पूजाका प्रभाव कलकत्तेमें इतना था कि यहाँके अंग्रेज़ बाशिन्दा भी उस समय कालीघाटमें पूजा भेजते। यहाँतक कि आजकल जैसे हम लोग मामला-मुक़दमा जीतनेपर अथवा किसी प्रकारकी सफलता मिलनेपर विभिन्न उपकरणों द्वारा कालीपूजा करते हैं, वैसे ही कम्पनी बहादुर भी राज्य जय करनेपर, शत्रुको विनष्ट करनेपर कालीघाट पूजा भेजते। फिरंगियोंने तो बहु बाज़ारमें एक काली मूर्तिकी प्रतिष्ठा ही की थी। अभी भी उनका नाम फिरंगी-काली है।

केवल कालीपूजा ही क्यों? कम्पनीने अपने खर्चेसे ब्राह्मण पुजारीको बुलाकर सरस्वती पूजा, गणेश पूजा, वर्षा न होनेपर वर्षाके लिए पूजा, आदि हरेक प्रकारकी पूजा कराते। तबतक भी मिशनरी इस देशमें नहीं आये थे। इसके विरुद्ध कौन प्रोपैगेण्डा करेगा और उस समयतक अंग्रेज़ोंके साथ देशी लोगोंका राजा-प्रजाका सम्बन्ध नहीं हुआ था। वे पूजा-अर्चा-उत्सवमें आनन्दसे पागल हो जाते। हिन्दुओंकी पूजामें विलायती बैण्ड पार्टी भेज देते और फिर मुसलमानोंके मुहर्रममें भी बैण्ड बजवाते।

कलकत्तेकी सामान्य जनता रामायणका गान, महाभारतकी कथा

सुनती। वैष्णव लोग हरिसंकीर्तन करते। लेकिन पैसेवाले नये धनी लोगों-का मन केवल इतनेसे ही नहीं भरता। पैसा कमानेकी फ़िक्रमें सारे दिन घूमते हुए वे बहुत ही थक जाते। धर्म-कथासे वह थकान दूर नहीं होती। इसलिए अवकाशके समय उनका विलास था श्रृंगार प्रधान कविगान सुनना। आदि रस (श्रृंगार रस) को छोड़कर अन्य किसी रसमें आनन्द पाने योग्य बुद्धि उनमें थी, ऐसा नहीं लगता।

उस समयतक कवियोंकी लड़ाईकी सृष्टि नहीं हुई थी। वह और बादमें चलकर हुई। दो पक्ष नहीं होनेपर क्या लड़ाई जमती है? उस समय कविगानके गगनमें गोंजला गुँइ ही 'एकश्चन्द्रः'। वे और उनके तीन चेले रघुनाथ दास, लालू नन्दलाल, रामजी दास ये मिलकर गान रचते और वही गान गाकर मजलिस जमाये रखते।

आदि रससे भरी हुई विद्यासुन्दरकी कहानीका भी कलकत्तेमें खूब समादर था। आत्माराम घोष नामके एक लिपिकर कलकत्तेमें ही बैठकर कालिका-मंगलके अन्तर्गत विद्यासुन्दरकी कहानी व्रजवल्लभ बाबू (कोठामा) के लिए नक़ल कर एक जोड़ा वस्त्र और दो आर्कट-रुपया पाते हैं। बंगला सन् ११५९ के २७ श्रावणको हस्तलिखित ग्रन्थका नक़ल करना समाप्त होता है, अर्थात् पलासी-युद्धके ठीक पाँच वर्ष पहले।

घोष महाशयका मकान सुतोनुटि ग्रामके चड़कडांगाके पश्चिममें था। बादमें कोई उन्हें गोप वंशका अथवा और किसी अन्य निकृष्ट जातिका न समझ बैठे, इसलिए वे स्पष्ट अक्षरोंमें लिख गये कि वे घोष होनेपर भी कुलीन कायस्थ वंशके ही घोष हैं।

कलकत्तेमें जिस देशी-समाजका भित्तिस्थापन हुआ, उसमें सभी अंग्रेज़ों-के अनुयायी थे, सभी अंग्रेज़ोंके पक्षमें थे यह बात शायद खोलकर नहीं कहनी पड़े। इनके अतिरिक्त एक दलके लोग भी धीरे-धीरे, मन-ही-मन अंग्रेज़ोंके पक्षपाती होते जा रहे थे। वे इस देशके हिन्दू ज़मींदार-वर्गके थे। मुर्शिद कुली खाँके हाथों पुराने ज़मींदार-घरानोंका उच्छेद हो गया

था, यह पहले ही कह चुका हूँ। जो नये ज़मींदार हुए, वे भी बड़े सुखसे थे, ऐसा नहीं था।

मुर्शीद कुली खाँने आय बढ़ानेके लिए निर्दिष्ट मालगुज़ारीके ऊपर और कई प्रकारके अतिरिक्त कर लगा दिये थे। उनका नाम आबवाब था। एक तो डायरेक्ट टेक्स देनेमें ही लोग बरावर नाराज़ होते हैं और उसके ऊपर इस प्रकारके जबर्दस्ती टैक्सका क्या कहना।

शुजाउद्दीन खाँ और अलीवर्दी खाँके समयमें ज़मींदारोंके ऊपर शारीरिक अत्याचार बहुत कुछ कम हो जानेपर भी उन्होंने इस आबवाबके हाथसे छुटकारा नहीं पाया। वल्कि संख्या और परिमाणमें वे बढ़ ही गये थे। हम लोगोंके देशमें किसी चीज़के एक बार प्रवेश कर जानेपर वह फिर सहज ही बाहर नहीं होना चाहती। इससे ग़रीब प्रजाकी दुर्गतिका भी अन्त नहीं रहता। ज़मींदार अपने आबवाब देना नहीं चाहते लेकिन प्रजाके पाससे उसे वसूल कर लेनेमें उन्हें ज़रा भी हिचक नहीं होती।

और भी एक घटना उसी समय घटी थी। अलीवर्दी खाँ विदेशी मुसलमान होनेके कारण हिन्दुस्तानी मुसलमानोंपर पूरी तरह विश्वास नहीं करते। और हिन्दुस्तानी मुसलमानोंने भी अलीवर्दी खाँके जबर्दस्ती इस बंगालकी गद्दीके छीन लेनेको अच्छी नज़रसे नहीं देखा।

इसीलिए अलीवर्दी खाँने बहुत-से हिन्दुओंको सरकारी काममें भर्ती कर लिया था। लेकिन वे सब कर्मचारी तन-मनसे अलीवर्दी खाँके ख़ूब अनुगत थे, ऐसा नहीं जान पड़ता। क्योंकि उस समय बंगालके उच्च श्रेणीके जितने भी हिन्दू थे, उनके मनमें नवाब, बादशाह और मुसलमान राजपुरुषोंके ऊपर एक बहुत बड़ी वितृष्णा हो गयी थी। फलस्वरूप उनकी भी दृष्टि अंग्रेज़ोंकी ओर ही रही।

इन सभी अनुगत और आश्रित लोगोंके साथ अंग्रेज़ लोग भी बड़े मज़ेमें कलकत्तेमें रहने लगे।

कलकत्तेकी नींव पड़नेकी कहानी यहींतक ही। उसके वाद युद्ध। युद्ध; युद्ध—केवल युद्ध !

: २१ :

वर्गियोंको एक प्रकारसे ठण्डा कर देनेपर भी अन्तिम उम्रमें राज्य करनेमें अलीवर्दी खाँके सामने एक और विघ्न उपस्थित हुआ था। उनके दौहित्र सिराजुद्दौला एक दुष्ट ग्रहकी तरह बराबर ही उनसे चिपटे रहे।

अलीवर्दी खाँके कोई लड़का नहीं था। तीन लड़कियाँ थीं। सबसे छोटी लड़की अमीना बेगम थी। उन्हींका पुत्र सिराजुद्दौला था। सिराजके जन्मके कुछ दिनों बाद ही अलीवर्दी खाँको विहारकी डिप्टी गवर्नरी मिली थी, इसलिए उनके मनमें दृढ़ धारणा हो गई थी कि शायद सिराज सचमुच ही उनका शुभ ग्रह है। इसीलिए लाड़से उन्होंने अपने ही नाम जैसा सिराजुद्दौलाका नामकरण किया था, मिर्ज़ा मुहम्मद अली। अलीवर्दी खाँ एक पदवी है।

नातीपर अलीवर्दी खाँ इतने अनुरक्त थे कि सिराजका कोई दोष उनकी आँखोंमें पड़नेपर भी वे उसे नहीं देखते। सिराजके समस्त प्रकारके कुकृत्य, अन्याय, अनाचारको क्षमा कर उन्हें प्रश्रय देते हुए उसके पतनके कारण बने। अत्यन्त छोटी उम्रमें ही सिराजुद्दौला सब कुकर्मोंमें पूरे-पूरे पक्के हो गये थे।

किसी भी प्रकारकी शिक्षा-दीक्षा सिराजकी नहीं हुई। उम्र बढ़नेके साथ-ही-साथ उनमें औद्धत्य, लम्पटता, साधारण बुद्धिका अभाव जैसे और बढ़ने लगे। जंगली स्वभाव जैसे और भी जंगली होने लगा। न तो युद्ध विद्या सीखी और न राज-काज चलाने योग्य बुद्धि ही हुई।

काव्य-कथाको छोड़कर और किसीमें तो सिराजुद्दौलाको किसी भी प्रकार शहीदका रूप नहीं दिया जा सकता। क्या हिन्दू, क्या मुसलमान,

क्या अंग्रेज़, क्या फ्रेंच, क्या डच कोई भी उनको अच्छी सर्टीफिकेट नहीं दे गया।

उनके हितैषी वन्धु क़ासिमवाज़ारके फ्रेंच कोठीके अध्यक्ष जाँ ल-साहव अपने संस्मरणमें सिराजुद्दौलाके एक नवावी खेलकी वातका उल्लेख कर गये हैं। वे कहते हैं—

वर्षाकालमें जव भागीरथी जलसे उफनकर दोनों किनारोंको आप्लावित करती रहती, तव सिराजुद्दौला अपने अनुचरों द्वारा यात्रियोंको इस पारसे उस पार ले जानेवाली खेवाकी नावोंको उलटवाकर मज़ा देखते। यात्री जव प्राणोंके भयसे चीत्कार करते और निरुपाय हो हाथ-पैर पटक-पटक एक-एक कर जलमें डूव मरते, तव उसे देख सिराजुद्दौलाको खूव आनन्द होता।

ल-साहव और भी लिखते हैं—

कोई सुन्दर हिन्दू स्त्री गंगा स्नान करने आई है यह देखते ही सिराजुद्दौलाके चर उसी वक़्त जाकर उन्हें खवर देते। उसके वाद वह स्त्री एकदम ग़ायव हो जाती। उसके घर-परिवारवाले कोई फिर उसका पता नहीं पाते।

अलीवर्दी खाँ मीठी तरहसे वीच-वीचमें नातीको उपदेश देनेके वहाने थोड़ा-वहुत डाँटते-फटकारते अवश्य, लेकिन उसका कोई फल नहीं होता। एक प्रकारके लोग होते हैं, जिन्हें धर्मकी वातें सुनाना एकदम वेकार है।

एक वार सिराजुद्दौलाने अलीवर्दी खाँके पास दरख्वास्त की कि दीवान मानिकचन्दका गाड़ी रखनेका वरामदा उनके मकानके सामने ही पड़ता है इससे उनका मकान थोड़ा भी खुला हुआ नहीं रहता। अतएव दीवानजीके उस गाड़ी रखनेके वरामदेको ढहा देनेका हुक्म दिया जाय।

सुनकर अलीवर्दीने कहा कि तुम्हारा मकान तो दीवानजीके मकानसे चौगुना वड़ा है। उससे दीवानजीके मकानकी हो रोशनी-हवा एमदम वन्द

हो जाती है। अतएव सोचकर देखो कि छोटी चीज़के लिए बड़ी चीज़का छोड़ना उचित होगा या नहीं ?

और एक दिन नाचनेवाली फैजूबाई सिराजके मकानमें रात बिताकर भोरके झुटपुटेमें अपने गढ़में लौट रही थी। ऐसे समय गाड़ीमें कौन है, नहीं जान सकनेके कारण शहरके कोतवालने बाईजी सहित गाड़ीको ले जाकर गारदमें बन्द कर दिया।

दूसरे दिन भोरमें क्रोधसे आग-बबूला होकर सिराजने जब कोतवालके विरुद्ध नाना साहबके पास नालिश की, तब अलीवर्दीने कहा कि बन्द गाड़ीमें फैजू है कि और कोई है, यह कोतवाल कैसे जान पायेंगे ? कोतवाल यदि कल फैजूबाईको छोड़ देते, तो मैं समझता कि वे चोर-डकैतोंको भी छोड़ देते हैं।

इस सबसे सिराजुद्दौलाको अक़्ल आई थी, ऐसा सोचना ग़लत होगा। पर एक बात है ! वह बिना कहे ठीक नहीं होगा। उस समय सम्पूर्ण भारतीय समाजका अधःपतन हो चुका था। यह अधःपतन इसके बहुत पहलेसे ही शुरू हो गया था। सिराजुद्दौला इसी समाजके प्रतीक थे। इसलिए सारा दोष सिराजुद्दौलाके सरपर लादना उचित नहीं। सिराजके हाथोंमें पड़कर फ़ैज़ूबाईकी अन्तमें क्या दशा हुई थी, वही बता रहा हूँ ! फैजूबाईको दो लाख रुपयेमें खरीदकर सिराज दिल्लीसे मुर्शिदाबाद ले आये थे।

थोड़े दिनोंके बाद सिराजने देखा कि उनपर फैजूका अब उतना मन नहीं है। वह गुप्त रूपसे उन्हींके एक निकट सम्बन्धीके साथ प्रेम करने जाकर पकड़ी गयी थी। अत्यन्त क्रुद्ध होकर सिराजुदौला फैजूको वेश्या कहकर गालियाँ देने लगे।

फैजूने सिराजके मुँहपर ही जवाब दिया, हुज़ूर, जहाँपनाह, आपकी माँको यह बात कहनेपर वे उसपर आपत्ति कर सकती हैं। लेकिन मेरा उसमें क्या अपमान हुआ ? मेरा व्यवसाय ही तो वेश्यावृत्ति है।

सुनकर सिराजुद्दौलाका क्रोध उनके सरपर सवार हो गया। उन्होंने एक ख़ाली कमरेमें फैजूको भरकर सभी दरवाज़े-ख़िड़कियोंको वन्द कर ईंट चुनवा दिये। फैजूबाईका जीते-जी-ही क़ब्रमें दफ़न हो गया।

गुलाम हुसेनने अपने ग्रन्थ सियर-उल-मुताख्खरीनमें कहा है कि सम्भ्रान्त लोग सिराजका नाम सुनते ही भयसे काँप उठते हैं। किसका सिर कव उनके हाथों काटा जायगा, इस भयसे उनको नींद नहीं आती।

एक दिन दिनदहाड़े राजपथपर ही हुसेन कुली खाँ नामके एक अमीर व्यक्तिका सिराजुद्दौलाने खून करा दिया। हुसेन कुली खाँके साथ उनकी बड़ी मौसी घसीटी वेगमका गुप्त-प्रणय था, लोग ऐसा सन्देह करते हैं। इस बारेमें घसीटी वेगम वहुत ही बदनाम थी। अपने सगे-संवन्धियोंके निकट सिराजने इसी वातकी दुहाई दी। ऐसा देखा जाता है कि जो दोप अपनेमें ही अधिक रहता है, वह दूसरोंके चरित्रमें देखनेपर लोग और उसे सहन नहीं कर पाते।

लेकिन असलमें कारण दूसरा था। सबके बीच हुसेन कुली खाँका सम्मान जिस प्रकारसे वढ़ चला था, उससे सिराजुद्दौलाके मनमें उनके सम्वन्धमें अत्यन्त ही भय पैदा हो गया था। और अधिक वढ़नेके पहले ही उन्हें इस जगत्‌से हटा देना ही सिराजुद्दौलाने वहुत पहलेसे स्थिर कर रखा था। इसलिए प्रकटमें सफ़ाई देते हुए उन्होंने कहा कि हुसेन कुली खाँ ही उनकी हत्या करनेके लिए घूम रहे थे।

सभी धनी प्रजा मन-ही-मन इस उम्मीदमें थी कि सिराजुद्दौलाके रंग-ढंग, मति-गति, चाल-चलन देखकर हो सकता है कि नवाव अलीवर्दी खाँ उन्हें अन्त तक वंगालकी गद्दी नहीं देंगे। लेकिन यह हुआ नहीं।

अलीवर्दी खाँकी बड़ी लड़की घसीटी वेगमको अपनी कोई सन्तान नहीं थी। सिराजके छोटे भाई अकरामुद्दौलाको उन्होंने गोद लिया था। उनकी इच्छा थी कि अकरामुद्दौला ही अलीवर्दी खाँके वाद वंगालके नवाव हों।

वैसा होनेपर वे पर्देके भीतरसे बंगालका राज्य अच्छी तरहसे चला सकेंगी। लेकिन दुर्भाग्यवश अकरामकी मृत्यु बचपनमें ही चेचकसे हो गई।

इसके पहले ही अलीवर्दी खाँके छोटे दामाद, सिराजुद्दौलाके बाप जैनुद्दीन अहमदकी मृत्यु हो चुकी थी। अकरामके शोकमें घसीटी बेगमके पति नवाजिश खाँका भी देहान्त हो गया। उसके महीने बाद ही अलीवर्दीके मँझले दामाद सैयद अहमदकी भी मृत्यु हो गयी। जीनेवालोंमें एक शौकत जंग ही रहे। ये अलीवर्दी खाँकी मझली लड़कीके पुत्र थे। बापकी मृत्यु होनेपर उनकी जगह ये पूर्णियाके नवाब हुए। सिराजुद्दौलाके नवाबी पानेका रास्ता बहुत दूर तक साफ़ हो गया।

सब कुछ जान-सुन कर भी मरनेके पहले ही नवाब अलीवर्दी खाँने स्नेहके वश सिराजुद्दौलाको ही अपना उत्तराधिकारी कह कर प्रचार कर दिया। जिसने सुना, वही काँप उठा।

१० अप्रैल, सन् १७५६ ई० को सुबह पाँच बजे कल्मा पढ़ते-पढ़ते अलीवर्दी खाँ महाबत जंगबहादुरने देहत्याग दिया। अस्सी वर्षके बूढ़े नवाबका शरीर पहलेसे ही जराग्रस्त हो चुका था। अब मृत्युने आकर उस देहपर अधिकार किया। खुशबागमें उनकी माँकी क़ब्रके पैरोंकी ओर उनकी क़ब्र हुई।

इस घटनाको लेकर करम अली अपने मुजफ़्फ़रनामा ग्रन्थमें लिखते हैं कि अलीवर्दी खाँकी मृत्युके साथ-ही-साथ बंगालकी भाग्यलक्ष्मीने बंगाल छोड़ दिया।

: २२ :

बिना बाधाके सिराजुद्दौला बंगालकी गद्दीपर आ बैठे।

नवाबी गद्दी पाते ही सिराजुद्दौलाकी आँखोंमें जो कुछ भी लज्जा थी, वह भी धुल-पुछ गई। अलीवर्दी खाँके समयके दक्ष कर्मचारियोंमें किसीको भगा कर, किसीको ऊँचे पदसे नीचे पदपर उतार कर अथवा किसीको

अन्यत्र हटा कर सिराजुद्दौलाने अपने चारों ओर जितने सब खुशामदी, उच्छृङ्खल वन्धुवान्धव थे, उन्हें जुटा लिया। अच्छे-अच्छे सम्भ्रान्त लोग मनके दु:खको मन ही में रखकर गुर्राने लगे।

सिराजुद्दौलाका पहला क्रोध जाकर पड़ा उसकी मौसी घसीटी वेगमके ऊपर। स्वामीकी मृत्युके बादसे धन-दौलत, लावलस्कर, माल-असवाव लेकर घसीटी वेगम मुर्शिदावादके दक्षिणमें मोतीझीलपर एक बहुत बड़े मकानमें राजसी ढंगसे रहतीं।

घसीटी वेगमके ऊपर सिराजुद्दौलाका मन कभी भी प्रसन्न नहीं था। इतने दिन केवल अलीवर्दी खाँके कारण वे कुछ कर नहीं सके थे। घसीटी वेगमने भीतर-ही-भीतर अकरामुद्दौलाको बंगालका नवाब करना चाहा था, यह सिराजुद्दौलाको मालूम था। मौसीने फिर इस समय छिपे तौरसे नवाव शौक़तजंगपर दृष्टि डाली है, उनको ही नवाब बनानेके फेरमें घूम रही है, यह बात सिराजसे छिपी नहीं रही।

वास्तवमें अलीवर्दी खाँकी मृत्युसे पहले ही सिराजुद्दौलाके विरोधी घसीटी वेगमको केन्द्र कर बढ़ रहे थे, यह सबको मालूम हो गया था। यहाँ तक कि सिराजुद्दौलाके मनमें दृढ़ धारणा हो गई थी कि अंग्रेज़ लोग भी सम्भवतः इसी दलमें हैं।

एक दिन अचानक मोतीझीलपर आक्रमणकर घसीटी वेगमके आदमियों-को भगाकर, सैन्य सामन्तोंको क़ैदकर सिराजुद्दौलाने उनकी सारी सम्पत्ति लूट ली। घसीटी वेगमके पतिका बहुत दिनोंका संचित अगाध रुपया-पैसा, धन-रत्न सब कुछ सिराजुद्दौलाके हाथमें आ गया। इसके लिए सिराजको युद्ध नहीं करना पड़ा, वेगमके आदमियोंको घूस देकर ही उन्होंने काम बना लिया था। वेगम साहवाके प्राण तो नहीं गये लेकिन वे अब मोतीझीलमें नहीं रह सकीं। सिराजके अन्त:पुरमें बन्दी होकर रहीं।

घसीटी वेगमके एक विश्वस्त प्रियपात्र दीवान थे। उनका नाम राजवल्लभ था। राजवल्लभ विक्रमपुरके बंगाली वैद्य (जाति) थे। वे

बहुत दिनोंसे ही ढाकामें सरकारी कामपर नियुक्त थे। पहले जहाज़ी-सेना विभागमें मुंशी थे और उसके बाद ढाकाके डिप्टी गवर्नरके पेशकार थे। घसीटी बेगमके पति जब ढाकामें डिप्टी गवर्नर थे, उस समय राजवल्लभ-की और भी उन्नति हुई। अन्तमें एक समय राजाकी उपाधि भी पा गये।

राजा राजवल्लभ पूर्वांचलके वैद्य-समाजके प्रधान थे। सुना जाता है कि उन्होंने ही पूर्व बंगके वैद्योंमें यज्ञोपवीत धारण करनेकी प्रथा चलाई थी। उनके पहले उधर कोई भी वैद्य जातिका व्यक्ति यज्ञोपवीत धारण नहीं करता। इसीलिए राढ़ देशके वैद्यजाति वाले सहज ही पूर्वबंगके वैद्य जाति वालोंके साथ विवाह सम्बन्ध नहीं करना चाहते थे। इस बातमें राजवल्लभकी चेष्टा पूरी तरह सफल नहीं हुई। अभी भी पूर्वी बंगालके अनेक स्थानोंमें वैद्य जाति वालोंने उपनयन-संस्कार ग्रहण नहीं किया है। राजवल्लभने अपनी विधवा पुत्रीका विवाह करनेकी भी बहुत चेष्टा की थी, विधवा-विवाहके पक्षमें नवद्वीपके बहुतसे पण्डितोंके पाससे प्रमाण भी संग्रह किये थे। लेकिन अन्त तक सामाजिक अपवादके भयसे किसी तरहसे यह काम नहीं कर सके।

सिराजुद्दौलाने जब हुसेन कुली ख़ाँकी हत्या कराई, उस समय उनकी जगहपर राजवल्लभ ही ढाकामें घसीटी बेगमके पति नवाजिश ख़ाँके दीवान हो गये। नवाजिश ख़ाँके वह आखिरी दिन थे। असलमें राजवल्लभ ही ढाकाके डिप्टी गवर्नर हुए। लेकिन सरकारी काममें पग-पगपर भाग्य पलटा खाता है। राजवल्लभके भी दुर्दिन आ गये।

नवाजिश ख़ाँकी मृत्युके बाद राजवल्लभ घसीटी बेगमके दीवान हुए। एक दिन ढाकासे किसी कामके लिए मुर्शिदाबाद आये थे, ऐसे समयमें सिराजुद्दौलाने उन्हें क़ैद करा लिया। अलीवर्दी ख़ाँके पास शिकायत थी कि राजवल्लभ बहुत सरकारी रुपया हज़म कर गये हैं। अलीवर्दी ख़ाँ उस समय मरणासन्न थे, भला-बुरा कुछ भी करनेकी शक्ति उनमें नहीं थी। केवल उनके कहनेपर सिराजके हाथों राजवल्लभका गला नहीं कटा।

हिसाव-किताब समझना पूरा नहीं होनेतक अलीवर्दी खाँने सिराजको रुकनेके लिए कहा।

राजवल्लभके पास काफ़ी रुपये-पैसे थे। इतने मालदार थे कि पूर्वी वंगालमें वहुत दिनों तक किसीके धनी होनेका दिखावा करनेपर लोग कहते कि लगता है जैसे राजा राजवल्लभके नाती हैं। इतना धन-दौलत पीछे हाथसे निकल न जाय इसी भयसे सिराजने उसे कुर्क करनेके लिए जल्दीसे ढाका आदमी भेज दिये।

लेकिन राजवल्लभ अत्यन्त ही चतुर आदमी थे। यह उन्होंने पहले ही ताड़ लिया था कि ऐसा ही होगा। उन्होंने अपने पुत्र कृष्णदासको छिपे तौर खवर भेज दी कि रुपया-पैसा, धन-दौलत जितना भी वटोर सको, उसे लेकर कलकत्ता अंग्रेजोंके इलाक़ेमें चटपट चले जाओ। कृष्णदास रातोंरात रुपया-पैसा सब नौकेपर लाद कर कलकत्ते रवाना हो गये। खवर फैला दी कि वे पुरीधाम तीर्थयात्रा करने जा रहे हैं। सिराजुद्दौलाने राजवल्लभकी एक कानी-कौड़ी भी नहीं पाई।

राजवल्लभने इसके पहले ही कासिम वाज़ारकी अंग्रेज़ी कोठीके सर्दार विलियम वाट्सको हाथमें कर रखा था। वाट्सने कलकत्ताके गवर्नर रोजर ड्रेकको गुप्तरूपसे अनुरोध कर खवर भेजी कि कृष्णदास उन लोगोंके हितैषी हैं और उन्हें जिसमें कलकत्तेमें आश्रय मिले। इस मामलेमें गवर्नर ड्रेकने कितना रुपया खाया था, उसका हिसाव नहीं, फिर भी वह कुछ कम नहीं था, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

तीर्थयात्राके रास्तेमें कलकत्तेमें उतर पड़नेका असली कारण भी कृष्णदासने दवा दिया। उनकी स्त्री उस समय गर्भवती थीं। कृष्णदासने सवको वतला दिया कि जितने दिन उनकी स्त्री सन्तान नहीं प्रसव करतीं, उतने दिन वे कलकत्तेमें ही रहेंगे। लेकिन कृष्णदास जो आये, तो फिर जानेका नामही नहीं लिया। वच्चा पैदा होनेके वाद भी वे कलकत्तेमें ही रहे। तीर्थयात्राकी वात एकदम भूल ही गये।

लेकिन अब सिराजुद्दौला बंगालके नवाब हो गये हैं। उन्होंने अंग्रेज़ों-को सहज ही नहीं छोड़ा।

बहुत दिनोंसे सिराजके गये-गुज़रे साथी उन्हें कलकत्तेकी अंग्रेज़ी-कोठी-को लूटनेका परामर्श दे रहे थे। नवाबको यह कहकर वे उत्तेजित कर रहे थे कि कलकत्ताके रास्ते-रास्तेमें लाखों-करोड़ों रुपये बिछे हुए हैं। केवल उठा लेने भरकी ही बात है।

कलकत्तेके अंग्रेज़ खूब अमीरी चालसे रहते। उनके बड़े-बड़े मकान आँखोंमें चकाचौंध पैदा कर देते। सजधज, पोशाक-पहनावा, खाना-पीना नौकर-चाकर सब लेकर एक बड़ा-सा रंग-ढंग बना रखा था। इससे सहज ही लोगोंके मनमें होता कि शायद अंग्रेज़ोंके पास खूब रुपया है। बाहर ही जिनका ऐसा ढंग है, भीतर पता नहीं उनके पास क्या है ?

उस समय मेदिनीपुरके फ़ौजदार राजाराम सिंह सिराजुद्दौलाके गुप्त-चरोंके सर्दार थे। उन्होंने खबर भेजी कि अंग्रेज़ नये सिरेसे क़िला बना रहे हैं।

सचमुचमें आत्मरक्षाके लिए कलकत्तेके उत्तरकी ओर बागबाज़ार अंचलमें क़िलेके समान एक इमारतको थोड़ा मरम्मत करना अंग्रेज़ोंने शुरू कर दिया था। नवाबके प्रति विरुद्ध आचरण करनेके उद्देश्यसे वे ऐसा नहीं कर रहे थे। उस समय उन्होंने सुना था कि उनके देशमें फ्रान्सीसियों-के साथ अंग्रेज़ोंका युद्ध होने-होनेके जैसा रंग-ढंग है। फ्रान्सीसी अचानक चन्दननगरसे कलकत्तेपर आक्रमण कर सकते हैं, यह भय खूब ही था।

सिराजुद्दौला उसी समय अपने मौसेरे भाई पूर्णियाके नवाब शौकतजंग-की गर्दन मरोड़नेके फेरमें थे। उस समय पूर्णियाकी ओर उन्हें जानेकी ज़रूरत थी। इसलिए तबतकके लिए और कुछ न कर सिराजुद्दौलाने अंग्रेज़ोंके पास चिट्ठी लिख भेजी, तुम लोग नये सिरेसे जो क़िलाबन्दी करनेकी कोशिश कर रहे हो, वह सब बन्द करो और राजवल्लभके पुत्र कृष्णदासको पत्र पढ़ते ही मुर्शिदाबाद वापिस भेज दो।

राजारामके भाई नारायणसिंह नामके एक हरकारेके हाथ कलकत्ते चिट्ठी भेज दी। नारायण सिंहको अच्छी तरहसे देखनेके लिए कह दिया कि सचमुचमें वहाँपर अंग्रेज़ोंने कितनी दूरतक क्या किया है।

नारायण सिंह फेरीवालेके छद्मवेशमें कलकत्तेमें घुसा। इरादा था, अंग्रेज़ क्या कर रहे हैं, छिपे रूपसे इसकी खबर लेना। नवाबकी चिट्ठीको उमीचन्दके हाथों काउन्सिलके पास भेजकर नारायण सिंह शहरमें इधर-उधर घूमकर देखने लगा कि कहाँ क्या हो रहा है। छद्मवेशमें उसे उस तरह घूमते देखकर अंग्रेज़ोंने यह समझ लिया कि नारायण सिंह किसीका गुप्त-चर है और किसी खराब मतलबसे कलकत्ते आया है। गवर्नर ड्रेकने प्यादोंको हुक्म दिया कि कान पकड़कर नारायण सिंहको कलकत्तेसे बाहर कर दो।

काउन्सिलके साथ बिना परामर्श किये अपनी ओरसे ही गवर्नर ड्रेकने नवाबको एक पत्र लिखा। इस चिट्ठीका कोई पता नहीं चलता। काउन्सिल-के दफ़्तरमें इस चिट्ठीकी कोई कापी नहीं रखी गई थी। इसलिए उसमें सचमुचमें क्या लिखा था, वह अब जाननेका कोई चारा नहीं। लेकिन ड्रेकने बादमें कहा था कि उनकी चिट्ठीमें ऐसी कोई भयानक बात नहीं थी। उसमें केवल लिखा गया था कि फ्रान्सीसियोंके भयसे ही वे लोग पुराने क़िलेके टूटे-फूटे अंशको थोड़ा-बहुत मरम्मत करा ले रहे हैं और कृष्णदासने उन लोगोंके शरणार्थी होकर कलकत्तेमें आश्रय लिया है, अपनी इच्छासे अगर वे नहीं जायँ तो किस प्रकारसे उन्हें फिर नवाबके पास वापिस भेजा जाय ?

नारायण सिंहको कलकत्ते रवाना करके सिराजुद्दौलाने पूर्णियाका रास्ता पकड़ा था। साथियोंके कहनेसे उनके मनमें हुआ कि शौक़त जंगकी स्पर्धा ख़ूब बढ़ी है। वास्तवमें शौक़त जंग मन-ही-मन सोचते कि बंगाल-की नवाबी गद्दी उन्हींको प्राप्य है। बेवकूफ़ीसे उन्होंने सिराजुद्दौलाको

नवाब ही नहीं स्वीकार किया। और पीछेसे घसीटी बेगम और उनके अनुचर उनको भड़काते।

पूर्णिया जाते-जाते जब सिराजुद्दौला राजमहल तक पहुँच गये, उसी समय अंग्रेज़ोंसे भगाये जाकर नारायण सिंह वहाँ आकर हाज़िर हुआ। नवाबके पैरोंपर पड़कर रोनेका बहाना बनाते हुए बोला, हुज़ूर जहाँपनाह, हम लोगोंकी मान-प्रतिष्ठा और नहीं रही। छोटे-मोटे कारबार करनेवाले कई लोग जिन्होंने अभी तक शौच करना नहीं सीखा, वे ही हुज़ूरके आदमीका अपमान कर भगा दें? इसकी एक उचित व्यवस्था नहीं होनेपर हम लोग किस बलपर खड़े हों?

और कहाँ जायँ? पूर्णियाका जाना तब तकके लिए स्थगित रहा। राजमहलसे सैन्य सामन्त लेकर नवाब राजधानीकी ओर लौटे। ठीक उसी समय ड्रेक साहबकी चिट्ठी भी आ पहुँची। चिट्ठीमें क्या लिखा हुआ था, यह तो नहीं मालूम, लेकिन उस चिट्ठीको पढ़कर नवाब बहादुर तो एकदम जलकर खाक हो गये।

तभी उन्हें ख्याल हो आया कि नवाबी गद्दी पानेके समय अंग्रेज़ोंने तो उन्हें किसी प्रकारका नज़राना नहीं भेजा। अभिनन्दन करते हुए कोई प्रशस्ति पत्र तक नहीं भेजा। इसके साथ यह भी याद आया कि नवाब होनेके कुछ समय पहले एक दिन जब नशेकी हालतमें यार-दोस्तोंको लेकर हो-हल्ला करते हुए अंग्रेज़ोंके कासिम-बाज़ारकी कोठीकी ओर घूमने गये थे, तब उन लोगोंने उनको उसमें घुसने नहीं दिया।

यह बात सिराजुद्दौलाको याद नहीं आई कि जब वे हुगलीके फ़ौजदार थे, तब अंग्रेज़ोंने किस प्रकारसे आदरपूर्वक कितनी उपहार-सामग्री भेजकर उन्हें सन्तुष्ट किया था। वह चार वर्ष पहलेकी बात थी। इतने दिनोंकी बात किसीको याद थोड़े रहती है?

सिराजुद्दौला पिंजरेमें बन्द बाघके समान गरजने लगे।

: २३ :

सचमें, सभी दोष अंग्रेज़ोंके थे।

नये नवावको गद्दी मिलनेपर उन्हें नज़राना नहीं भेजना, आजकलके लोगोंकी दृष्टिमें मामूली बात होनेपर भी उन दिनों वह एकदम अक्षम्य था। नज़र भेजना उस समय एक बहुत बड़ा एटिकेट था। इसे न माननेका अर्थ नवावका अपमान ही करना था। क़िले बढ़ाना, नये सिरेसे क़िलाबन्दी करनेकी चेष्टा करना, यहाँ तक कि पुराने क़िलेकी मरम्मत करना, नवावकी अनुमति लिये विना यह सब करते जाना भी बहुत बड़ा अन्याय था। सबसे गर्हित काम था नवावकी ही एक प्रजाको उनकी इच्छाके विरुद्ध आश्रय देना।

पर अन्यायके प्रतिकारके लिए जितनी शक्तिकी आवश्यकता है, उतनी शक्ति अगर न हो, तब थोड़ा कुछ गरम होकर अन्तमें दब जाना ही समझदारी है। सिराजुद्दौलाने समझ रखा था कि उनमें काफ़ी शक्ति है। अतः विलम्ब न कर वे अंग्रेज़ोंके पीछे पड़ गये।

नवावके राजधानीमें पहुँचनेके पहले ही उनके हुक्मसे राय दुर्लभने कासिमबाज़ारकी अंग्रेज़ी-कोठीको फ़ौज लेकर घेर लिया। सिराजुद्दौलाके मुर्शिदाबाद पहुँचते ही दुर्लभरामने कोठीके सरदार वाट्सको परामर्श दिया कि नवावसे मिलकर बारबार अनुनय-विनय कीजिए, उसका कुछ फल निकल सकता है। नवाव कुछ ठंडे भी पड़ सकते हैं।

यहाँ राय दुर्लभका थोड़ा परिचय दे दें। दुर्लभराम राजा जानकीरामके पुत्र थे। चुंचड़ाके कायस्थ सोम-वंशके थे। जानकीराम अलीवर्दी ख़ाँके अत्यन्त विश्वस्त, प्रिय कर्मचारी थे। सन् १७५२ ई०में मरनेके पहले तक वे विहारके डिप्टी गवर्नर थे। दुर्लभराम अलीवर्दीके शासनकालमें उनके मिलिटरी डिपार्टमेंटके दीवान थे। सिराजुद्दौलाके समय और प्रोमोशन नहीं पाया, बल्कि नीचेकी ओर ही उन्हें आना पड़ा था।

विलियम वाट्स दुर्लभरामके भुलावेमें आ अपने सहयोगी मैथ्यु कलेट-को लेकर नवाबके साथ बात-चीत कर मीमांसा कर लेनेके उद्देश्यसे सिराजुद्दौलाके दरबारमें आकर हाज़िर हुए। नवावने बिना कुछ कहे साथ-ही-साथ दोनोंको गिरफ़्तार करा लिया। इंगित पाकर दुर्लभरामने कासिम बाजार कोठीका जितना भी माल-असबाब, रुपया-पैसा, तोप-बन्दूकें थीं, उसे लाकर नवाबके बहुमूल्य वस्तुओंके भण्डारमें भर दिया। यह घटना सन् १७५६ ई० की २४ मई की थी।

सिराजुद्दौला अगर तबतकके लिए यहीं रुक जाते तो अंग्रेज़ोंको भी काफ़ी शिक्षा दे देते और अपने भी और कुछ दिनों तक सहज रूपसे बंगालकी नवाबी कर जाते। किन्तु वैसा होनेपर जो कहानी कह रहा हूँ, वह तो और नहीं कही जा सकती। देशके हिताकांक्षी, समझदार व्यक्तियों-के, यहाँ तक सुना जाता है कि सिराजुद्दौलाकी माँ तकके उन्हें बहुत-बहुत मना करनेपर भी सिराज इस सम्बन्धमें विमुख नहीं हुए।

गवर्नर ड्रेकको एक बार कलकत्तेसे मुर्शिदाबाद कान्फ्रेन्सके लिए बुला भेजनेपर सब मामला ठीक-ठाक हो जाता। लेकिन सिराजुद्दौलाने तय किया कि बेअदबीके लिए अंग्रेज़ोंको और थोड़ा दण्ड देनेकी ज़रूरत है।

एक तो वैसे ही सिराजुद्दौला अल्पबुद्धि, अस्थिर चित्तका बालक मात्र था, और उसे उसके मुसाहब लोग बराबर सब्ज बाग दिखला रहे थे कि कलकत्तेके घाट-बाट एकदम सोनेके मढ़े हुए हैं। वहाँ एक बार जाल फेंकनेपर जो वस्तु हाथ आयेगी, वह उत्तम वस्तु होगी।

तीस हज़ार फ़ौज लेकर बड़ी धूमधामके साथ नवाब सिराजुद्दौला कलकत्तेको जीतनेके लिए चले। साथमें मीरजाफर, राय दुर्लभ, मानिकचंद, मीर मदन आदि बड़े-बड़े सेनापति गये। सन् १७५६ ई० का ५ जून था।

नवाबने वाट्स और कलेट साहबको भी साथ लिया। मिसेस वाट्स फ्रांसीसी-कोठीके अध्यक्ष ल-साहबके जिम्मे मुर्शिदाबादमें ही रह गयीं।

बादमें स्वदेश लौटकर जानेपर वाट्सकी मृत्यु हुई, तब मिसेस वाट्स कलकत्ते चली आई थीं। विलियम जानसन नामके एक छोकरा पादरीके साथ विवाह कर कलकत्तेमें ही उन्होंने घर बसाया और फिर देश नहीं लौटीं। रेवरेण्ड मिस्टर जानसनके देश लौट जानेपर भी मिसेस जानसन इस देशमें ही रह गईं। कलकत्तेके सभी भद्रेतर लोग उन्हें स्नेहसे बेगम जानसन कहते। प्रायः सत्तासी वर्षकी वृद्धा होकर बेगम जानसन सन् १८१२ ई० में कलकत्तेमें ही मरीं। कलकत्तेके जितने बड़े-बड़े साहब थे, संन्ध्या-समय उनका अड्डा इन्हींके घर जमता। बेगम साहब खूब रस लेकर सिराजुद्दौलाके सम्बन्धमें बहुत-सी मनोरंजक कहानियाँ सुनातीं।

लोग मुँहसे चाहे जो रट लगावें, लेकिन वास्तवमें कलकत्तेमें कम्पनीके मालखानेमें उस समय न अधिक रुपये ही थे, न माल ही था। और उससे भी कम था आत्मरक्षाका साधन।

डलहौजी स्क्वायरमें वही पुराना क़िला—फोर्ट विलियम। बहुत दिनोंसे उसपर किसीने हाथ नहीं लगाया था। मरम्मत-सफ़ाई कुछ भी नहीं कराई गयी थी। कमज़ोर दीवारें एक धक्केमें ही गिर पड़तीं। बुर्जके ऊपर किस ज़मानेकी तोपें रखी हुई थीं। इतने बाहर पड़े रहनेसे उनमें जंग लग गया है। तोपखानेमें भी गोला बारूद नाम मात्रको है। फोर्ट विलियम लाल मूलीकी तरह केवल शोभाके लिए खड़ा है। व्यापारके माल-असबाब रखनेके लिए कुछ खराब नहीं है, लेकिन क़िलेकी दृष्टिसे एकदम बेकार है।

अंग्रेज़ी फ़ौजमें उस समय सब मिलाकर २७५ सैनिक थे। उनमें ७० बीमार थे और २५ मुफस्सलमें थे. अब १८० बाक़ी रह गये। उनमें भी ४० सैनिक यूरोपियन गोरा थे और बाक़ी मटमैले फिरंगी थे। यही हुई अंग्रेज़ोंकी फ़ौज। फ़ौजके ऊपर कैप्टेन जार्ज मिन्सिन नामक एक सेनापति थे। इस सेनापतिने जीवनमें कभी युद्ध नहीं किया था, युद्ध देखा भी नहीं था और युद्धका क-ख भी नहीं जानते थे।

विपन्न होकर अंग्रेज़ोंने चूँचड़ामें डचोंके पास सहायताकी माँग भेजी। नवावके भयसे डचोंने पत्र पढ़कर ना कर दिया। फ्रांसीसियोंके कहनेपर उन्होंने कहा कि हम लोगोंमें किसीको भी कलकत्ते जानेका उपाय नहीं। वल्कि एक काम करो, तुम लोग ही चन्दननगर क्यों न चले आओ ? यह भी कहीं होता है ? कलकत्तेसे सब कुछ समेटकर अंग्रेज़ लोग अन्यत्र जायें कैसे ? उन्होंने फिर कहला भेजा सिपाही पल्टनकी ज़रूरत नहीं, कृपा करके थोड़ा गोला-बारूद भेज देनेसे ही हम लोग कृतार्थ हो जायेंगे। अब भेज रहे हैं, तब भेज रहे हैं कर फ्रान्सीसियोंने दिन विता दिया। अन्ततक कुछ भी नहीं भेजा।

कलकत्तेके अंग्रेज़ोंने सुना कि कासिमबाज़ारकी कोठी लूट ली गई है। वाट्स, कलेट नवावके हाथमें वन्दी हैं। तो भी अंग्रेज़ोंने सोचा, लड़ाई-वड़ाई वह सब कुछ भी नहीं होगी। नवावको कुछ रुपये दे देनेसे ही वे ठण्ढे हो मुर्शिदावाद लौट जायेंगे। इसी आशासे उन लोगोंने खोजा वाजेद नामके हुगलीके एक आर्मिनियन सौदागरको रुपयेकी वातचीत चलानेके लिए नवावके पास दूत बनाकर भेजा।

लेकिन नवावको शान्त नहीं किया जा सका। मालूम हुआ कि वे कृष्णनगर पार कर गये हैं और कालनाका रास्ता पकड़ हुगलीके निकट आ पहुँचना ही चाहते हैं।

तव अंग्रेज़ और क्या करें ? युद्धके लिए प्रस्तुत होने लगे। प्रस्तुत और क्या ? इधर-उधरसे वुलाकर कुछ सैनिक इकट्ठे किये। उसमें कुछ अंग्रेज़ वालेण्टियर भी मिले। कुछ जहाज़ी गोरे भी जुटाये गये। कुछ फिरंगी और कुछ आर्मिनियन भी आ जुटे।

पहलेके १८० लोगोंको लेकर अब ५१५ आदमी हुए। इनमें अधिकांश व्यक्तियोंने ज़िन्दगी भर व्यापारका माल लेकर ही इधर-उधर कुछ किया था। ज़िन्दगीमें कभी वन्दूक़ नहीं पकड़ी, छोड़ना तो दूरकी वात थी। यूरोपियन खूब कम ही जुटे। कई भाड़ेके फ्रान्सीसी और डच।

कई तोपें बाग़-बाज़ारमें पेरिन साहबके बाग़की उत्तरी सीमापर चित्पुर ब्रिजसे लगी हुई बैठाई गईं। उसके पास पहलेसे ही एक दुर्ग जैसा था। उसीको कुछ दिनों पहले थोड़ा नये ढंगसे सजाया जा रहा था। उसीसे तो नवाब साहबको क्रोध था। पच्चीस सैनिकोंको लेकर एन्साइन एडवर्ड पिकार्ड उसके चार्जमें रहे।

क़िलेकी दीवारके ऊपर भारी-भारी तोपें उठाई नहीं जा सकीं। बोझसे दीवार टूट जाती। दक्षिणकी ओर तो दीवार थी ही नहीं। फोर्टके भीतर गोदामका अभाव होनेसे उस ओर पंक्तिबद्ध कई गोदाम बनाये गये थे। सबों ने समझा कि फोर्टसे और चाहे जो कुछ भी क्यों न किया जाय, लेकिन शत्रुको नहीं रोका जा सकता।

फिर वही पुरानी बात चली। फोर्टके सामनेके बड़े-बड़े मकानोंको तोड़ दिया जाय। उन्हें तोड़ कर वहाँ एक बड़ी-सी खाई खोदी जाय। लेकिन काम कुछ नहीं हुआ। काउन्सिलने कान ही नहीं दिया।

खोजा वाजेद के नवाबके पाससे कलकत्ता लौट आनेपर उनके दीवान शिव बाबूने प्रचार कर दिया कि अंग्रेज़ोंके आश्रयमें रहकर उस समय भी उमीचंद नवाबके साथ छिपे रूपसे पत्र-व्यवहार कर रहे हैं। यह सुनते ही उसी समय उमीचंदको प्यादासे पकड़वा मँगाकर गवर्नर ड्रेकने क़िलेके भीतर क़ैद कर रखा। और सब बुराइयोंकी जड़ राजवल्लभका लड़का वही कृष्णदास—उसे भी क़िलेके एक गारदमें ठूँस दिया गया।

सुननेमें आया कि आसपासके ज़मींदारोंके ऊपर नवाबने सख्त हुक्म जारी कर दिया है कि जिसमें कोई अंग्रेज़ोंको एक टुकड़ा भी खानेकी चीज़ न दे। कोई जिसमें नाव अथवा अन्य कोई सामग्री देकर अंग्रेज़ोंकी सहायता न करे।

नवाब आ रहे हैं, सुनकर अंग्रेज़ोंके जो लाव-लश्कर, नौकर-चाकर थे, वे सभी एक-एक कर कलकत्ता छोड़कर भाग रहे हैं। किसी भी तरह उन्हें नहीं रखा जा सका। देशी बाशिन्दा भी जानते कि 'यः पलायति स जीवति।'

वे भी कलकत्तेके घरद्वारको छोड़, जिससे जहाँ हो सका भाग गये। अपने बचे तभी तो बापका नाम रहेगा। केवल एक गोविन्द मित्तिर ही हिम्मत बाँधकर कलकत्तेमें रह गये। तबतक भी अंग्रेजोंने एकदम आशा नहीं छोड़ी। उस समय भी वे सोच रहे थे कि नवाब उन्हें केवल भय दिखानेके लिए ही आ रहे हैं। उन लोगोंको एकदम विनष्ट कर देनेकी उनकी इच्छा नहीं है।

सन् १७५६ ई० की १५ वीं जून। नवाब सिराजुद्दौला हुगलीके पास गंगा पारकर इस पार आये। तब तो सचमुच युद्ध होगा? संकट देखकर कलकत्तेकी काउन्सिलने पहलेसे ही मद्रास-काउन्सिलको पल्टन भेजनेके लिए लिखा था। इस समय नवाबको अगर एक-डेढ़ महीना किसी तरह रोक रखा जा सके, तो वहाँसे लोग आ जायेंगे, यही एक आशा थी। उस समय ही युद्ध करना पड़े तो किया ही जायगा।

यही सोचकर दो महीने लायक खाने-पीनेकी चीज संग्रहकर क़िलेके भीतर मौजूद रखी गई। मेमसाहबोंने अपना-अपना मकान छोड़ फोर्टमें आकर आश्रय लिया। उनकी देखादेखी बहुत-सी फिरंगी लड़कियाँ भी फोर्ट-में आ गईं। क़िलेसे अगर थोड़ा कुछ किया जा सकता, अब उसकी भी संभावना नहीं रही। औरतोंका हल्ला-गुल्ला, छोटे बच्चोंकी चें-भें यह एक बड़ा अद्भुत-सा हो उठा।

ब्लैक टाउन -अर्थात् देशी मुहल्लेकी रक्षा करने जाना बेवकूफ़ी है। वहाँ लोग अधिक भी नहीं हैं। मिलिटरी वालोंने वहाँ जाकर आग लगा दी। फूससे छाये हुए कच्चे मकान धाँ-धाँकर जल उठे और पलभरमें जल कर राख हो गये।

: २४ :

१६ जून! नवाबकी एक दल-सेना खाईके किनारे आ पहुँची। उसी ओरसे कलकत्तेमें घुसनेकी उनकी इच्छा थी। अन्य और कोई रास्ता जाना हुआ नहीं है। लेकिन हाथी-घोड़ा, बड़ी-बड़ी तोपोंके गोले तथा रसदकी

गाड़ीको चित्पुरकी खाईसे पार नहीं कराया जा सका । पेरिन साहबके बाग़के उत्तरकी पेरिन्स पाएण्टकी छावनीसे बाहर होकर एन्साइन पिकार्डने अच्छी लड़ाई की । नवाबके बहुतसे सैनिक घायल हुए । आसपासके जंगलमें घुसनेपर भी छुटकारा नहीं था । रातके समय अंग्रेज़ चौकी छोड़कर आते और उनके ऊपर गोली चलाते रहते । मीर जाफ़र यहाँ मालिक थे । वे पीछे हटने लगे । हटते-हटते एकदम दमदममें नवाबकी छावनीमें जाकर रुके । फर्स्ट राउण्डमें नवाबकी हार हुई । चित्पुरके युद्धमें अंग्रेज़ लोग जीत गये ।

नवाब किस तरहसे मराठा-डिच पारकर कलकत्तेमें घुसें, यही सोच रहे थे, ऐसे समय गुप्तरूपसे उमीचंदका जमादार जगन्नाथसिंह नवाबकी छावनीमें दीख पड़ा । मालिकके अपमानसे यह आदमी पहलेसे ही क्रोधसे भरा हुआ था । इस समय नवाबके आदमियोंको शहरमें घुसनेके दो रास्ते उसने बतला दिये ।

दमदमसे कलकत्तेमें घुसनेके स्थानपर, इस समयके प्रायः टालाके पास, एक छोटा-सा पुल था । उसके ऊपरसे लोग गाय-बैल, घोड़ा आदि चरा लानेके लिए आते-जाते । गोलमालमें वह पुल तोड़ नहीं दिया गया था । जगन्नाथ सिंहने पहले यही रास्ता दिखलाया । जगन्नाथ सिंहके दिखलाये हुए रास्तेसे थोड़ी-बहुत फौज लेकर नवाब शहरमें घुसे ।

दूसरे दिन सियालदहके पास मराठा-डिचके ऊपर नीचेकी ओर बने हुए पुलसे होकर बाक़ी सैनिक हाथी, घोड़ा, ऊँट, भारी-भारी तोपोंसे भरी गाड़ी लेकर बहु बाजारके रास्तेपर आ गये । इसके बाद धड़ल्लेसे बड़ाबाजारमें घुस वहाँ जो कुछ बचा था, उसे लूट-पाट कर अन्तमें सारे मुहल्लेमें उन लोगोंने आग लगा दी ।

इसी बीचमें नवाबने हाल्सी बगानमें उमीचन्दकी बागान बाड़ी (उद्यान-गृह) में जाकर अड्डा जमाया । वहीं उन्होंने रात बिताई ।

दूसरे दिन १८ वीं जून, शुक्रवार। मुसलमानी पंजिकामें शुभ दिन। उसी दिन ही लालदीघीका युद्ध शुरू हो गया। नवाबकी फौज़ने देशी मुहल्लेको दख़ल कर लिया है, देखकर अंग्रेज़ोंने समझा कि उत्तर-पूर्व दिशा-से ही वह साहब-मुहल्लेपर आक्रमण करेगी। साहब मुहल्लेमें घुसनेके सिरे-पर ही लाल बाज़ार है। इसीलिए अंग्रेज़ोंने फोर्ट विलियमको केन्द्र कर उसके ही पूरबकी ओर उत्तर-दक्षिणको घेर तोपोंकी दो चौकियाँ बैठाई थीं। एक लाल बाज़ारकी मोड़के मेयर्स-कोर्ट—आजकलका सेण्ट ऐण्ड्रूज चर्च—से लेकर दक्षिण ओरके नाले, अर्थात् आजकलके गवर्नमेण्ट हाउस तक और दूसरी चौकी ठीक फोर्टके सामने। सेण्ट एन्स चर्च, जो आजकल-के राइटर्स बिल्डिंग्सका पश्चिमी ब्लाक है, से लेकर फोर्टकी दक्षिणी सीमा तक, जो आजकलका कोयला घाट स्ट्रीट है। फिर और एक मोर्चा सेण्ट एन्स चर्चकी पूरब तरफ़से एक लाइन बनाकर गंगा पार तक ले जाया गया था। आजकलके पूरे फेयर्ली प्लेसको डलहौजी स्क्वायरके उत्तरी अंशके साथ मिला देनेसे जो होता है, वही।

सवेरे ही से पूरबकी ओरसे नवाबकी फौज़ने लाल बाज़ारपर धावा बोल दिया। अंग्रेज लोग तोपें लेकर मेयर्स कोर्टके सामने ही खड़े हैं। कैप्टेन डेविड क्लेटन इस मोर्चेके सर्दार थे। उनके नीचे हालवेल साहब थे। लाल बाज़ारकी लड़ाई खूब ज़ोरसे चली। नवाबके सैनिक लाल बाज़ार घुसनेके मोड़पर अंग्रेज़ोंके छोड़ दिये हुए मकानोंपर दखलकर उनके ही भीतर बैठे-बैठे आरामके साथ अंग्रेज़ोंकी फौजपर गोली चलाने लगे। बड़े-बड़े मकानोंकी ओटमें पड़नेसे अंग्रेज़ोंकी तोपोंके गोले शत्रुओंकी कोई हानि नहीं कर सके।

अंग्रेज़ोंकी तोपोंका मोर्चा बिलकुल खुला था। पटापट लोग मरने लगे। इस तरहसे और नहीं चलेगा। देखकर अंग्रेज़ मेयर्स कोर्टके भीतर घुस गये। सामान्य कई आदमी गोला चलानेके लिए तोपोंकी रक्षा करते हुए बाहर रहे। एक-एक आदमी गोली खाकर गिर पड़ते और एक-एक

आदमी मेयर्स कोर्टसे निकलकर उनका स्थान लेते। लेकिन और तो अब नहीं चलता। कैप्टेन क्लेटनने स्वयं चारो ओर घूमकर देखा कि हालत नाजुक है। उन्होंने हालवेलको बुलाकर कहा कि तुम फोर्टमें जाकर गवर्नर-को बतला आओ कि अब और मोर्चेकी रक्षा नहीं हो पायेगी।

हालवेल फोर्टमें जाकर आर्डर लेकर लौटनेपर देखते हैं कि सब समाप्त हो गया। अंग्रेज़ोंका मोर्चा तितर-बितर हो गया है। तोपोंका मुँह बन्दकर सभी फोर्टमें लौट जानेका उद्योग कर रहे हैं। जल्दबाज़ीमें तोपोंके मुँह अच्छी तरह बन्द नहीं किये गये। एक छोटी-सी तोप साथ लेकर अंग्रेज़ लोग मेयर्स कोर्टका मोर्चा छोड़कर चले आये।

नवाबके आदमियोंने अंग्रेज़ोंकी तोपोंपर अधिकार कर लिया। अंग्रेज़ों-की छोड़ी हुई अच्छी-अच्छी तोपोंके जुड़े मुँह खोलकर उन लोगोंने अंग्रेज़ोंके ही विरुद्ध काममें लगाया। लालदीघीके युद्धका प्रथम अध्याय यहीं समाप्त हुआ। सेकण्ड राउण्डमें अंग्रेज़ हारकर एक दम ढीले पड़ गये।

सन्ध्या होते ही फोर्टमें रोना-धोना शुरू हो गया। स्त्रियोंको और किसी तरह भी सँभाला नहीं जा रहा था। सामने ही गंगामें नौका बँधी हुई थी। स्त्रियों और छोटे-छोटे बच्चोंको उसीमें चढ़ा दिया गया। प्रधान सेनापति मिन्सिन भी ऐसे मौक़ेमें एक नावपर चढ़ बैठे। काउन्सिलके दो बड़े-बड़े मेम्बर विलियम फैंक्लैण्ड और चार्ल्स मैनिंघम स्त्रियोंको जहाज़पर चढ़ाने जाकर स्वयं भी साथ ही जिस जहाज़पर चढ़े, फिर नहीं उतरे। भीड़की रेलपेलमें उस रातमें सभी स्त्रियोंको नौकामें नहीं चढ़ाया जा सका। प्रेसिडेण्टकी स्त्री और अन्य कई स्त्रियाँ फोर्टमें ही रह गईं।

इसके बाद रातभर परामर्श होता रहा कि किया क्या जाय? सभी एकमत थे। इस हालतमें कलकत्ता छोड़कर हट जाना ही बुद्धिमानीका काम है। किसीने कहा इसी रातको हट जाया जाय। और किसीने कहा कि कम-से-कम कलका दिन देख लिया जाय। रातमें साढ़े चार बजे तक विचार-विमर्श करनेपर भी कोई फैसला नहीं हो सका। होता कैसे? भूखके मारे

सभीके पेट जल रहे थे। नाभी अँतड़ी तक हजम हो जाने जैसा हो गया। खानेकी चीजें काफ़ी हैं, लेकिन भोजन वना देनेवाला एक भी आदमी नहीं है। बेयरा, वावर्ची सभी भाग गये हैं। ठीक इसी समय जिस कमरेमें मन्त्रणा चल रही थी, उसी घरमें एक गोला आकर पड़ा। तर्क-वितर्क खतम होकर चारों ओर गोलमाल शुरू हो गया।

२९ जून! किसी तरहसे सवेरा हुआ। मुँह-हाथ धोते-न-धोते ही फोर्टके ऊपर गोले वरसने लगे। अंग्रेज़ सैनिक उस समय सामने ही दूसरे मोर्चेपर थे। मोर्चेके मुखपर सेण्ट एंस चर्चमें घुसकर मोर्चेकी रक्षा कर रहे हैं। एकने चुपकेसे गवर्नरके कानोंमें कह दिया कि गोला-गोली प्रायः समाप्त हो आये हैं। बात धीरे वोलनेपर भी स्पष्ट ही सुन पड़ी। उसे सुन जो स्त्रियाँ वच गई थीं, वे दहाड़ मारकर रो पड़ीं। उसे सुन पुरुष भी वहुत अधिक विचलित हो गये। उस समय वाक़ी स्त्रियोंको भी नावोंपर चढ़ा दिया गया। गंगाके किनारे ऐसा धक्कमधक्का आरम्भ हो गया कि फिरङ्गी स्त्री और शिशु मिलकर प्रायः दो सौ व्यक्ति उसी समय गंगामें डूब मरे।

दोपहर खाने-पीनेमें लग जानेके कारण युद्धका वेग कुछ कम हो गया। गोलमाल कुछ रुकनेपर देखा गया कि स्वयं गवर्नर रोजर ड्रेक मौक़ा पाकर सवको छोड़कर भाग गये हैं। घाटके पास दो-चार आदमी जो पहरा दे रहे थे, उनमें-से एकने गवर्नरको भागते देख उनके सिरको लक्ष्यकर गोली मारी थी, लेकिन दुर्भाग्यवश वह गोली गवर्नरकी कनपटीको छूती हुई निकल गई।

फोर्टसे वाक़ी सबोंने स्पष्ट देखा कि गंगाके ऊपर पंक्ति बाँधकर नावें दक्षिणकी ओर चली हैं।

: २५ :

गवर्नर भागे, सेनापति भागे, जितने वड़े-वड़े गण्यमान्य काउन्सिलर थे, सभी भाग गये। जिनको मौक़ा मिला वे सभी भाग चले।

जो वाक़ी रह गये अर्थात् मरने-मारनेके लिए जो कलकत्ता रह गये,

उन सभीने मिलकर हालवेल साहबको गवर्नर चुनकर उस दिनके लिए युद्ध चलाये रखना स्थिर किया। अगर मौक़ा लगे तो रातमें वे भागेंगे, यह बात निश्चित रही।

कम्पनीके कर्मचारियोंमें जान जेफनाया हालवेल उम्रमें सबसे बड़ा होने-पर भी कलकत्तेकी काउन्सिलमें उसका पद बहुत छोटा था। उनसे सीनियर एक काउन्सिलर उस समय भी कलकत्तेमें उपस्थित थे। पहले उन्होंने मृदुभावसे कुछ आपत्ति की। लेकिन हालवेल उनके अधीन काम करनेको राजी नहीं हुए।

हालवेल कामके आदमी थे। लेकिन किसीके भी साथ उनकी बनती नहीं थी। कोई उन्हें खास पसन्द नहीं करता था। लेकिन उस समय और सोच-विचारका समय नहीं था। उपयुक्त आदमीका भी उस समय बहुत अभाव था। हालवेल एक साथ ही कलकत्ताके गवर्नर और कमाण्डर-इन-चीफ बन बैठे।

इक्कीस वर्षकी उम्रमें लन्दनके गाइस अस्पतालसे डाक्टरी सीखकर निकलनेपर हालवेल कम्पनीकी पटना और ढाका कोठी दोनोंमें रहकर सन् १७३२ ई०में कलकत्ताके प्रधान सर्जन हो गये। लेकिन डाक्टरीमें दवा बेचकर आमदनी ही कितनी होती? महीनेमें पचास रुपये होते कि नहीं इसमें भी सन्देह था। उससे कम्पनीकी सिविल सर्विसमें बहुत अधिक पैसा था। वेतन कम होनेपर भी रुपया कमानेके दूसरे बहुतसे रास्ते थे।

सन् १७५२ ई०में हालवेल कलकत्ताके जमींदार अथवा मजिस्ट्रेट हुए। और उसी समयसे वे उसी एक ही पदपर बहाल रहे। लिखे-पढ़े आदमी होनेपर भी हालवेलकी कल्पनाकी दौड़ अत्यन्त अधिक थी। कुछ लिखने बैठते ही सच-झूठका बोध उनके मनमें बहुत अधिक नहीं रहता।

थर्ड राउण्डकी लड़ाई हालवेलने जमने नहीं दी। लोग इतने कम हो गये हैं कि हालवेलने सहज ही समझा कि चर्चवाले मोर्चेको सँभालनेकी कोशिश बेकार है। उससे केवल आदमियोंकी नुकसानी होगी। अंग्रेज

खड़े-खड़े ही मरेंगे। इससे फोर्टकी आड़से जहाँ तक चले उतना ही युद्ध चलाना अच्छा है। उसमें जब तक साँस तब तक आस रहेगी।

हालवेलने आर्डर दिया, बाहर जितने सैनिक हैं, उन सबोंको लाकर फोर्टमें घुसाओ। जो कुछ करना होगा यहींसे किया जायगा। किन्तु सभीने समझा कि करनेको विशेष-कुछ भी नहीं है। लड़ाई खत्म होनेमें और अधिक देरी नहीं है। अंग्रेज़ चूहेदानीमें पड़े हुए चूहेके समान फोर्टमें बैठे-बैठे सोचने लगे कि कैसे वहाँसे छुटकारा पाकर भागा जाय।

सब व्यवस्था करते-करते सन्ध्या हो गई। फोर्टके भीतर घुप अन्धकारमें बैठे अंग्रेज़ोंने देखा, क़िलेके बाहर रोशनी-ही-रोशनी है। आसपासके मकानोंमें नवाबके सैनिकोंने आग लगा दी है—यह उसीकी रोशनी है। अंग्रेज़ोंकी वह रात कैसे कटी, उसका वर्णन करना कठिन है। रात और गम्भीर होनेपर और तिरपन पल्टनके सिपाही अन्धकारमें देह ढँककर खिसक गये। उसका अधिक भाग भाड़ा किये हुए डचोंका था। बाक़ी सैनिक नशेमें चूर होकर मनको कुछ सान्त्वना देनेकी चेष्टा करने लगे।

फिर सवेरा हुआ। कालका नियम कोई सुख-दुःख नहीं मानता। १९ जून बीता, २० जूनका शुक्रवार आया। फोर्टमें बैठे-बैठे ही दीख पड़ा कि नवाबके सैनिक फोर्टकी ओर बहुत अधिक बढ़ आये हैं। और यह भी दीख पड़ा कि नवाबके पक्षमें फिरंगी और फ्रांसीसी गोलन्दाज़ गोला छोड़ रहे हैं अवश्य, लेकिन वे गोले फोर्टकी दीवारमें आकर नहीं लगते। अंग्रेज़ोंकी दुर्दशा देखकर उनका निशाना क्या थोड़ा तिरछा हो जाता था ?

जो हो, नवाबके सैनिकोंने आगे आकर क्रमशः फोर्टको तीन ओरसे घेर लिया। यहीं उसीके बीच थोड़ी-बहुत लड़ाई हुई। फोर्ट विलियमके बुर्जके ऊपरसे लगातार गोली चलाकर अंग्रेज़ोंने बहुतसे शत्रुओंको मारा और बहुतोंको जख्मी किया। उनके भी उन थोड़ेसे सैनिकोंमें पच्चीस मारे गये और सत्तर जख्मी हुए। गोलन्दाजोंमें सिर्फ़ चौदह ही बचे। इस

प्रकारसे दोपहरके बारह बजे। वह खानेका समय था। युद्धका वेग थोड़ा धीमा हो आया।

उसी समय हालवेल साहबको अचानक याद आ गया कि उमीचन्द तो फोर्टमें ही क़ैद हैं। साहबने स्वयं जाकर अत्यन्त अनुनयके साथ उमीचन्दसे अनुरोध किया जिससे वे सिराजुद्दौलाके प्रियपात्र सेनाध्यक्ष राजा मानिकचन्दको एक चिट्ठी लिखकर बतला दें कि अंग्रेज और युद्ध करना नहीं चाहते। जिससे नवाब भी दया कर युद्ध बन्द कर दें। अंग्रेज़ और युद्ध करना चाहते भी तो कैसे? जो गोली-गोला था, वह सब तो बिलकुल समाप्त हो गया।

उमीचन्द क्या सहज ही राज़ी होते? वे क्रोधसे गुमसुम बैठे हैं। उसके बाद जब सुना कि उनके परम शत्रु ड्रेक साहब भाग गये हैं, तब क्रोध थोड़ा कम होनेपर वे कुछ ठण्डे हुए। हालवेल-साहबके बहुत अनुनय-विनय करनेपर अन्तमें उमीचन्द पत्र लिखनेके लिए राज़ी हो गये। हालवेलने उमीचन्दकी चिट्ठी मानिकचन्दके पास भेज दी।

इस बार और अधिक बाधा न पाकर नवाबके सैनिक फोर्ट विलियम-की दीवारको फाँदकर क़िलेके भीतर कूदनेका प्रयत्न करने लगे। दो बजे किसीने आकर हालवेल साहबको ख़बर दी कि नवाबके पक्षके एक विशिष्ट जैसा सेनानी सामनेके बड़े रास्तेसे इशारा कर अंग्रेज़ोंको युद्ध करनेके लिए मना कर रहा है।

हालवेलने सोचा कि लगता है उमीचन्दकी चिट्ठीका फल फला है। अंग्रेज़ोंके शान्तिके उजले झण्डेको उन्होंने उड़ा दिया। हालवेलने-मन-ही मन ठीक कर रखा था कि थोड़ी-सी देर लगाकर शामतक काट देनेपर अन्धकारमें सबको जहाज़पर चढ़ाकर प्रस्थान करेंगे। लोग ख़ूब कम ही हैं, एक जहाज ही काफ़ी होगा। लेकिन उस समय भी वे नहीं जान सके प्रिन्स जार्ज जहाज़ जिससे उनके भागनेकी बात थी, वह रेतमें टकराकर जल-मग्न हो गया है।

सन्ध्या होनेके पहले ही लेकिन बात कुछ उलझ-सी गई। सब ठंडा देखकर हालवेलने अपने आदमियोंको थोड़ा विश्रामकर लेनेके लिए कहा। लेकिन तीसरे पहर चार बजे चारों ओर एकदम हो-हल्ला मच गया। विश्राम आदि ताकपर धरा रह गया।

सुननेमें आया कि एक डच पल्टन प्राणके भयसे भागकर बचनेके लिए या घूस खाकर अथवा बाहरके किसीके साथ षड्यन्त्र करके फोर्टके भीतरकी ओर गंगामें जानेके फाटकको तोड़कर भाग गई है। और उसी टूटे हुए गेटसे चींटियोंकी तरह सैनिक क़िलेके भीतर घुस रहे हैं।

हालवेल और उनके कई साथियोंने स्थिर किया कि अन्त तक यों नहीं छोड़ेंगे, लड़ाई करके ही मरेंगे। सभीने पिस्तौल, तलवार सँभाल ली। उस समय भी हालवेलका भागनेका मौक़ा था। लेकिन साथियोंको छोड़कर वे भागनेको राज़ी नहीं हुए।

उसी समय नवाबके एक सेनाध्यक्षने आकर आश्वासन दिया कि अस्त्र त्याग करनेपर उनके ऊपर किसी तरहका भी अत्याचार नहीं होगा। अंग्रेज़ी कायदेके अनुसार हालवेलने अपना हथियार खोलकर अपने पैरोंके पास डाल दिया। देखा-देखी दूसरोंने भी अस्त्र-शस्त्र खोल डाले। लड़ाई बन्द हो गई।

इसी समय दीख पड़ा कि एक डोलीपर चढ़कर बंगालके नवाब स्वयं सिराजुद्दौला क़िलेकी ओर बढ़ते आ रहे हैं। उन्हींकी बग़लमें और एक डोलीपर उनके छोटे भाई मिर्जा मेहदी हैं। खबर पाकर हालवेल साहबने जल्दी-जल्दी आगे आकर फोर्टकी दीवारपर चढ़कर देशी प्रथाके अनुसार नवाबको सलाम किया। नवाबने हाथ उठाकर प्रति नमस्कार किया।

इसके बाद क़िलेके भीतर घुसकर चारों ओर थोड़ा घूमघामकर नवाबने हालवेलसे कहा, तुम लोंगोंका गवर्नर ड्रेक बिलकुल उल्लूका पट्ठा है। ज़िद करके इतने सुन्दर शहरको नष्ट करनेके लिए मुझे बाध्य किया, इससे मुझे सचमुच ही बहुत दुःख हो रहा है।

उमीचन्द और कृष्णदास वन्दीखानेसे छुटकारा पा आकर नवावको कोर्निश करके खड़े हो गये। नवावने उन दोनोंको ही शिरोपा देकर सम्मान किया। इसके पहले ही नवावके साथ राजवल्लभका विवाद मिट गया था। उन्होंने कृष्णदासको छोड़ दिया।

और भी वहुतोंको छुटकारा मिला। अंग्रेज़ोंमें वहुतसे हँस-खेलकर क़िला पार हो वाहर निकल आये। उनमें कोई चला सुरमैन साहवके वाग़-की ओर, ड्रेक साहवके जहाज़की खवर अगर वहाँ मिल जाय। और फिर कोई चुंचड़ा चन्दननगरकी ओर फ्रांसीसियों और डचोंके इलाक़ेमें आश्रय लेनेके लिए गया। हालवेल और उनके साथ पूरे साठ अंग्रेज़ फोर्टमें ही रह गये। लगता है वे नवावके आदमियों द्वारा नज़रवन्द कर लिये गये थे, इसीलिए भाग नहीं सके। लेकिन कलकत्ता अव और अंग्रेज़ोंका नहीं रहा। वह नवाव सिराजुद्दौलाके हाथमें आ गया।

: २६ :

रात होनेपर कई अंग्रेज़ गोरोंने मनके दुःखको भूलनेके लिए अच्छी मात्रामें शराव पीकर होहल्ला शुरू कर दिया। नशा उस समय सरपर सवार हो गया था। 'मातालस्य नाना काण्ड'—शरावियोंके नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। वे युद्धं देहि कहकर नवावके पहरेदारोंसे मारपीट करने लगे। पहरेदारोंने तब कौन क्या है, इसका विचार न कर सवोंको पकड़ फोर्टके भीतर ले जाकर अंग्रेज़ोंके अपने ही गारदखानामें एक साथ भर दिया।

घर अठारह फीट लम्वा और चौदह फीट, दस इंच चौड़ा था। वह चारों ओरसे वन्द था। उसमें केवल लोहेकी छड़वाली छोटी दो चौकोनी खिड़कियाँ थीं। सवेरे दरवाजा खोलनेपर देखा गया कि ग्रीष्म कालकी रात्रिकी सड़ी हुई गर्मीमें उस छोटे घरमें एक-पर-एक प्रायः तीस आदमी दम घुटकर मर गये हैं। इसीका नाम काल कोठरीकी हत्या है।

हालवेल साहव हार जानेपर भी कल्पनाके बलपर सिराजुद्दौलाको अँगूठा दिखाकर बाहर हो गये। बहुत बढ़ा-चढ़ाकर, बहुत नमक-मिर्च लगाकर उन्होंने गरम-गरम भाषामें इस कालकोठरीको हत्याकी एक विचित्र कहानी गढ़कर प्रचार किया। वह कहानी डिटेक्टिव कहानीसे भी अधिक लोमहर्षक है। इतने दिनों बाद भी उसे पढ़ते-पढ़ते शरीर काँप उठता है। सिराजुद्दौलाकी कहानी बहुतोंकी अच्छी तरहसे जानी हुई नहीं है, लेकिन कालकोठरीकी कहानी सबको सुनी-सुनाई है। चाहे वह बूढ़ा हो या बच्चा।

अंग्रेज़ोंकी धारणा है कि १४६ आदमियोंको कालकोठरीमें बन्द किया गया था। और उनमें १२३ आदमियोंकी मृत्यु हुई थी। किन्तु वैसी एक छोटी कोठरीमें १४६ मुस्टंडे यूरोपीयनोंको एक साथ भरना जो असंभव-सी बात है। इसके अलावा उस समय इतने यूरोपीयन एक साथ पाये ही कहाँसे गये?

प्रारंभसे ही तो कलकत्तेमें यूरोपीयनोंको संख्या ख़ूब कम थी। इसपर चित्पुरके युद्धमें, लालदीघीके प्रथम युद्धमें, फोर्टके पास लालदीघीके द्वितीय युद्धमें कुछ कम लोग तो मारे नहीं गये थे। और फिर उससे भी अधिक लोग भाग गये थे। फोर्टका युद्ध खतम होनेपर भी बहुतसे यूरोपीयन छुटकारा पाकर इधर-उधर निकल गये थे। कुल मिलाकर साठसे अधिक लोग किसी भी तरह फोर्टमें नहीं हो सकते। असली बात यह है कि बादमें जिसका भी कोई पता नहीं चलता, उसे ही काल-कोठरीमें डालकर हत्या कराई गई है! ऐसा करनेपर गणितके नियमके अनुसार अंक तो बढ़ ही जायगा।

पता चलता है कि मिसेस कैरी नामक एक स्त्री अपने पतिको छोड़कर नहीं गई, उन्हें पतिके साथ ही काल-कोठरीमें जाना पड़ा था। भाग्यवश सवेरे वे जिन्दा बाहर निकलीं थीं और बादमें भी वह दीख पड़ीं थीं, नहीं तो लोग अभी भी हालवेल साहबकी कहानीपर विश्वास करते कि वे नवाब सिराजुद्दौलाके अन्तःपुरमें नवाबके भोगके लिए रहीं।

केवल कहानी गढ़कर ही हालवेल नहीं रुके। कालकोठरीकी हत्याकी कहानीको चिरस्मरणीय बनानेके लिए उन्होंने अपनी जेबसे पैसा खर्चकर एक स्मृति-स्तम्भ बनवा दिया था। इसीका अंग्रेज़ी नाम ब्लैक होल मानुमेन्ट है। सन् १७६० ई० में क्लाइवके बाद कलकत्ताका गवर्नर हालवेलने राइटर्स विल्डिंग्सके बिल्कुल पश्चिमकी ओर इस मानुमेन्टको बनवा दिया था।

वह आँखोंमें बहुत खटकनेवाला था। इसलिए जब मार्क्विस आफ हेस्टिंग्स् सन् १८२१ में बंगालके गवर्नर जेनरल होकर आये, तब उन्होंने उसे हटवा दिया था फिर १९०२ ई० में लार्ड कर्जन जब भारतके बड़े लाट थे, तब उन्होंने बहुतसे कागज, नक्शे उलट-पुलटकर हालवेलके मानुमेन्टका पता लगाकर ठीक उसी प्रकारका एक मानुमेन्ट पूरा मार्बल पत्थरका बनवाकर, क्लाइव स्ट्रीट और डलहौसी स्क्वायरकी मोड़पर उसके पुराने स्थानपर ही स्थापित करा दिया। सन् १९३९ ई० में सुभाष बोसकी चेष्टासे उसे उस स्थानसे हटाकर सेण्ट जोन्सके कब्रिस्तानमें रखा गया है। लगता है कि अब फिर कोई उसे खोज ढूंढ़कर कहीं स्थापित करनेकी चेष्टा नहीं करेगा।

दूसरे दिन २१ जूनको। भोरके समय हालवेलको ब्लैकहोलसे सीधे नवाबके सामने हाजिर किया गया। नवाब उस समय फोर्टके पास ही एक साहेबके मकानमें थे, उमीचन्दकी बागान बाड़ी (उद्यान-गृह) में फिर लौटकर नहीं गये।

हालवेलने प्रारम्भमें ही पिछली रात्रिकी घटना नवाबके कानमें डाली। लेकिन सिराजुद्दौलाने उसपर कान नहीं दिया। वे भी क्या जान गये थे कि हालवेल तिलका ताड़ बना रहे हैं।

बहुतसे अंग्रेज़-लेखक क्षोभ प्रकट करते हुए लिख गये हैं कि कालकोठरीकी हत्याकी बात हालवेलके मुँहसे सुननेपर भी नवाबने उसके प्रतिकारकी कोई व्यवस्था नहीं की। जो हो, यह सभीको स्वीकार करना

पड़ेगा कि इस विषयमें सिराजुद्दौलाका कोई हाथ नहीं था। जब घटना घटी, तब वे बड़े आरामसे नाक बजाकर सो रहे थे। उन्हें जगानेका साहस कौन करता? अथवा कौन उनका हुक्म लेता?

बहुत खोजने-ढूँढ़नेपर कलकत्तेसे सिराजुद्दौलाको केवल पचास हज़ार रुपये मिले। अंग्रेज़ोंने निश्चय ही रुपया-पैसा कहीं गुप्त स्थानमें छिपा रखा है, ऐसा सोचकर वे हालवेलको बहुत अधिक सताने लगे। लेकिन गुप्त धनका कुछ भी पता नहीं चला। था ही नहीं तो मिलता कहाँसे? क़ीमती माल जो कलकत्तेमें था, वह सब चार महीने पहले ही जहाज़पर लादकर विलायत चालान हो गया था। और जिन मालोंके कलकत्ता आनेकी बात थी, वे तब तक भी मुफस्सिलसे कलकत्ते नहीं पहुँचे थे। कम्पनीकी तहवीलमें रुपये भी नाममात्रको थे। नवाब क्रोधके मारे फुँफकार भरने लगा। उनकी इतनी बड़ी युद्ध यात्राकी मजदूरी तक भी नहीं निकली। क्या यह क्रोधकी बात नहीं थी?

क्रोधके मारे नवाबने कलकत्तेके उस आदिकालके नामको भी उड़ा दिया। उसके स्थानपर शहरका नाम अलीनगर रखा। बहुतसे मकान आदि जलाकर भस्म कर दिया। सबसे अधिक क्रोध प्रेसिडेण्टके मकानपर था। उसे ड्रेकका अपना मकान समझकर इसको बिलकुल चूर्ण-विचूर्ण खतम कर दिया। क़िलेके भीतर ही एक मस्जिद बनानेका हुक्म हो गया।

थोड़ेसे जो अंग्रेज़ उस समय भी फोर्टमें थे, उन्हें उसी समय कलकत्ता छोड़कर चले जानेके लिए कहा गया। नवाबने दण्ड देनेका भय दिखाया कि जल्दी भाग नहीं जानेपर उनके हाथ-पैर, नाक-कान काट लिये जायेंगे। केवल हालवेल और उनके दो साथियोंको मुक्ति नहीं मिली। सेनापति मीर मदनको हुक्म मिला कि वे जिसमें हालवेल आदिको बन्दी बनाकर मुर्शिदाबाद भेज दें। बन्दी अवस्थामें रहते-रहते वे अगर गुप्त धनका संधान बतला दें।

कुली बाज़ारमें हरमैन साहबके बाग़से लगे हुए ही गंगामें ड्रेकका दल उस समय भी ओटमें रहकर प्रतीक्षा कर रहा था। जहाज़में बैठे हुए ही

उन्होंने खबर पाई कि कलकत्ता अब और अंग्रेज़ोंका नहीं रहा। फोर्ट विलियम नवाबके कब्ज़ेमें है। लंगर उठाया गया। अंग्रेज़ उस अंचलको छोड़कर चले।

सिराजुद्दौलाने राजा मानिकचन्दको कलकत्तेका गवर्नर बना दिया। मानिकचन्द भी बंगाली कायस्थ थे। कोन्नगरके एक घोष वंशमें उनका जन्म हुआ था। प्रारम्भमें वर्द्धमान राजके गुमाश्ता होकर काम करना शुरू किया था। बेहालामें डायमण्ड हारबर रोडपर राजाको ही एक बहुत बड़े बागानबाड़ी (उद्यान-गृह) में बैठकर इस ओर जो राजाकी जमींदारी थी, उसकी ही मैनेजरी करते। बादमें अलीवर्दीखाँकी अमलदारीमें उनके सिरिश्तामें सरकारी काममें लगे। पहले सिराजुद्दौलाके साथ मानिकचन्दका विशेष प्रेम नहीं था। लेकिन अन्तमें मानिकचन्दने चतुराईसे नवाबको हाथमें किया था। बहुतसे बड़े-बड़े अमीर-उमरावोंकी नज़र कलकत्तेकी गवर्नरीपर थी। उनके भाग्यने साथ नहीं दिया और मानिकचन्दके उसे पा जानेसे उनमें कोई भी विशेष सन्तुष्ट नहीं हुआ।

२४ जून सन् १७५६ ई०। अपने दलबलको लेकर सिराजुद्दौलाने कलकत्ता छोड़ा। कासिमबाज़ारके वाट्स और क्लेट साहबको साथमें ले लिया।

राजधानी लौटनेके रास्तेमें ही चन्दननगर चुंचड़ा पड़ता है। इससे फ्रांसीसियों और डचोंपर एक साथ विपत्ति आई। भय दिखाकर नवाबने उनसे लगभग आठ लाख रुपये वसूल कर लिये। बन्धु-बान्धवोंको बुलाकर हँसते-हँसते बोले, मेरे जैसा बहादुर कौन है ? मैंने अंग्रेज़ोंके विरुद्ध युद्ध किया और लड़ाईका खर्च फ्रांसीसियों और डचोंकी गर्दन मरोड़ कर वसूल किया।

पता नहीं क्या समझकर नवाबने वाट्स और क्लेटको वहीं छोड़ दिया। लगता है, उन्होंने सोचा कि अंग्रेज़ तो अभी डोड़हा साँप जैसे हैं। उनमें अब व्यर्थकी फुँफकार रह गई है। फिर भी चन्दननगरके गवर्नरको विशेष

रूपसे कह गये कि शीघ्र ही जिसमें वाट्स और क्लेटको मद्रास भेज दिया जाय।

कलकत्ता जीतकर खूब समारोहके साथ नवाव सिराजुद्दौलाने ११ जुलाईको राजधानी मुर्शिदावादमें प्रवेश किया। दिल्लीके बादशाह आलमगीर द्वितीयको कलकत्तेकी विजयकी खवर देते हुए लिखा कि तैमूरलंग-के बाद हिन्दुस्तानमें विजयका इतना बड़ा गौरव कभी भी किसीके भाग्यमें नहीं जुटा। दरबारके सभासदोंको जमाकर बोले कि टोपीवालोंको भगानेमें अस्त्र-शस्त्रकी ज़रूरत नहीं है। केवल मेरे इस चट्टी-जूतेके होनेसे ही काम चल जायगा तो भी करम अली लिखते हैं कि इस युद्ध-यात्रामें नवावको केवल वदनामी ही हासिल हुई।

खुश होकर सिराजुद्दौलाने प्रमत्त हो उच्छृङ्खल राग-रंगमें अपनेको बहा दिया। इस उद्दाम उन्मत्त उल्लासमें क्या उन्होंने एक बार भी सोच-कर देखा कि इसके ठीक एक वर्षके अन्दर ही उनकी इहलोककी लीला सदाके लिए समाप्त हो जायगी ?

: २७ :

कलकत्तेसे चालीस मील दूर गंगाके ऊपर ही एक छोटा-सा गाँव है। अपनी जगहसे भगाये गये अंग्रेज़ोंने वहीं जाकर आश्रय लिया।

किसी समय वहाँपर डचोंका एक छोटा-मोटा अड्डा था। कई टूटे-फूटे गुदाम और एक मिट्टीके क़िलेका आधा हिस्सा उस समय भी वहाँ किसी प्रकारसे टिके हुए था। बंगाल प्रान्तमें जहाँ जितने अंग्रेज़ थे, सभी एक-एक कर वहाँ आ जुटने लगे। बंगालमें तो अंग्रेज़ोंका व्यापार एकदम बन्द हो गया।

क्रमशः वाट्स और क्लेट आये। ढाका कोठीके सभी आ पहुँचे। अन्यान्य कोठीवाले भी वहीं चले आये। अन्तमें हालवेल भी मुक्ति पाकर

मुर्शिदाबादसे सीधे वहीं आ गये। वारेन हेस्टिंग्स चुपकेसे कासिमबाज़ारसे फलता भाग आये।

फलतामें गवर्नर ड्रेकने अपनी काउन्सिल खोल दी। काम कुछ भी नहीं था। ड्रेक साहबके कलकत्ता छोड़कर भाग आनेकी बातके लिए एक अच्छी-सी कैफ़ियत तैयार करनेके प्रयत्नको देखकर बहुतसे लोग चिढ़ उठे। उसीको लेकर नित्य ही काउन्सिलमें चखचख होने लगी।

ड्रेक किसी भी तरह क़ाबूमें नहीं आते। उस समय असली फोर्ट विलियमके गवर्नर तो राजा मानिकचन्द थे। लेकिन उससे क्या? फोर्ट विलियम नामका अंग्रेज़ोंका एक जहाज़ था। उसीपर चढ़कर ड्रेक साहबने एक इश्तहार निकाला, फोर्ट विलियम जहाज़ ही तब तकके लिए अंग्रेज़ गवर्नरका गवर्नमेंट हाउस है।

इधर फलतामें मच्छर-मक्खियोंकी तरह लोग मरने लगे। फलताकी जलवायु अत्यन्त ही खराब थी। चारों ओर घोर जंगल था। खाने-पीने-की कोई भी चीज़ नहीं मिलती। नवाब उस समय भी कलकत्ते ही में मौजूद थे। इसी भयसे कोई अंग्रेज़ोंके लिए खाना नहीं जुटाता और अपनी चीज़ें भी नहीं बेचते। किसी प्रकार भिक्षा माँगकर डचोंके पाससे कुछ खानेकी चीज़ें संग्रह की गईं।

और भी एक विपत्ति थी। कलकत्तेसे भागनेके समय अंग्रेज़ केवल पहने हुए वस्त्रके साथ ही जहाज़में चढ़कर रवाना हो गये थे। इसलिए मैला-कुचैला कपड़ा पहनकर ही दिनपर-दिन काटने पड़ रहे थे। उसी अवस्थामें ही जहाज़पर भी सभीको एक जगह धक्कम-धुक्की कर रहना पड़ा। स्त्रियों-की सामान्य लज्जाका भी निवारण नहीं हो सका।

जीते हुए भी मृतक जैसी अवस्थामें केवल आशा-आशामें ही अंग्रेज़ लोग वहीं रह गये। मद्राससे सेना आनेकी बात थी। उनकी ही सहायतासे अगर फिर कलकत्तेका उद्धार किया जा सके।

कुछ दिनोंके बाद सामान्य कुछ सैनिक साथमें लेकर मेजर जेम्स किल-पैट्रिक मद्राससे आये अवश्य। लेकिन फलताकी आबहवामें बीमार होकर उनकी फौजके अधिकांश लोग ही दो दिनोंमें अधमरे हो गये। इसलिए फिर मद्राससे आदमियोंके न आ जाने तक फलतामें बैठकर ही अंग्रेज़ लोग दिन गिनने लगे। काम-धाम कुछ भी नहीं रहनेसे झगड़ा विवाद और बढ़ गया।

थोड़ा-थोड़ा करके फलतामें अंग्रेज़ जमा हो रहे हैं, यह जानकर भी सिराजुद्दौलाने कुछ नहीं कहा। पहलेसे ही यूरोपियनोंके प्रति उनमें अत्यन्त अवज्ञाका भाव था। और अभी कलकत्ता ले लेनेके बाद वह बढ़कर चौगुना हो गया था। अल्पबुद्धि नवाबकी धारणा थी कि सारा यूरोप मिलाकर केवल दस हज़ार लोग हैं। वे सभी मिलकर एक ही साथ बंगालमें आवें, तो भी नवाब सिराजुद्दौला जब इच्छा होगी तभी उन्हें पीटकर समुद्र पार करा दे सकते हैं। इतनी घबड़ानेकी क्या बात है? अंग्रेज़ोंपर और किसी प्रकारका अत्याचार नवाबने नहीं किया।

फलतामें बैठे-बैठे ही अंग्रेज़ोंने सुना कि सिराजुद्दौलाके मौसेरे भाई पूर्णियाके नवाब शौक़त जंग बंगालका नवाब होनेके लिए जोर-शोरसे लग गये हैं। सुनकर अंग्रेज़ खूब खुश हुए। केवल अंग्रेज़ ही क्यों? सिराजुद्दौला-के दरबारके बहुत लोग मन-ही-मन इससे बहुत ही सन्तुष्ट हुए। क्योंकि कलकत्तेसे लौट आनेके बाद नवाबके चित्तकी अद्भुत अस्थिरताकी मात्रा जैसे अब और अधिक बढ़ गई है। एक दिन दरबारमें बैठे क्रुद्ध होकर उन्होंने सबके सामने ही जगत सेठ जैसे नामी-गिरामी आदमीके गालपर एक चपत जमा दी थी। ग़रीब प्रजाकी तो कोई बात ही नहीं थी। उनके लिए तो निश्चिन्त हो स्त्री, दासी लेकर घरमें रहना भी मुश्किल था।

लेकिन लगता है उनमेंसे कोई यह नहीं जानता था कि दुर्बुद्धि, आत्म-श्लाघा और नशेबाजीमें शौकतजंग, सिराजुद्दौलाका ही मौसेरा भाई था। यह कहता है मुझे देख, वह कहता है मुझे देख। दोनोंमें कोई भी टाला नहीं

जा सकता। इसी बीच शौकत जंग एक करोड़ घूस देनेकी बात मानकर दिल्लीके बादशाह वज़ीर गाज़ीउद्दीनके पाससे बंगाल, बिहार, उड़ीसाकी नवाबीका एक हुक्मनामा ले आकर गर्वसे अन्धे हो गये। बादशाही पर्वाना नहीं, फ़र्मान नहीं, मुहर नहीं, केवल वज़ीरका हुक्मनामा है। इसीपर इतनी उछल-कूद है। तेज़ होकर वे सिराजुद्दौलाको पत्र लिख बैठे, तुम शीघ्र ही बंगालकी गद्दी छोड़कर मुर्शिदाबादसे अलग हट जाओ। तुम मेरे अपने हो। तुम्हारे प्राण लेनेकी इच्छा नहीं। यदि तुम सम्मानपूर्वक ढाका जाकर वहीं भले आदमीकी तरह रहने लगो, तो मैं तुम्हारे लिए कुछ मासिक वृत्तिका बन्दोबस्त कर दूँगा।

ऐसे समय मीर जाफ़रके पाससे गुप्त रूपसे एक चिट्ठी आई। शौकत जंगको उसी समय बंगालपर आक्रमण करनेका परामर्श उन्होंने दिया है। लिखा है, विशिष्ट अमीर-उमरावों सभीका इसमें समर्थन है। इस चिट्ठीको पाकर शौकतजंगके अहंकारका ज़ोर जैसे और बढ़ गया।

इस बार सिराजुद्दौला भी रणमें उतरे। उन्होंने बिहारके डिप्टी-गवर्नरको चिट्ठी लिख दी कि तैयार हो जाओ। दूसरे-दूसरे ज़मींदारोंको भी सेना संग्रह कर रखनेकी खबर भेज दी। सिराजुद्दौलाका दल क्रमशः भारी हो उठा। शौकतजंगसे डबल।

सन् १७५६ ई० के १६ अक्टूबरको मनिहारीके पास दोनों पक्षोंमें खूब ज़ोरकी लड़ाई हुई।

शुरूसे ही अपनी मूर्खतासे शौकतजंगने सब मिट्टी कर दिया। लड़ाईके दौरानमें ही खूब भंग खाकर हाथीपर सवार हो युद्ध करने चले। घोर नशेमें दूरसे किसको देखते किसको देख समझ लिया कि लगता है सिराजुद्दौला ही उनकी ओर बढ़ते आ रहे हैं। वैसे ही शौकतजंग अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपनी जगह छोड़ सिराजुद्दौलाको मारनेके लिए गरजते हुए बढ़े। ऐसे समय एक गोला आकर उनके सिरपर लगा और वे युद्धक्षेत्रमें ही ठंडे हो गये। हीरा-जवाहर-खचित सिरकी पगड़ी ज़मीनपर धूलमें लोट

गई। बंगालकी नवाबी करनेकी शौकत जंगकी आशा इसी तरह इसी जगहपर खतम हुई।

फलतामें अंग्रेज़ोंको खबर मिली, पूर्णियाके नवाब युद्धमें मारे गये। सुनते ही तो उनकी खुशी खतम हो गयी। फिर मद्रास ज़ोरका तक़ाजा भेजा गया।

: २८ :

जिस दिन नवाब सिराजुद्दौलाने कलकत्तापर अधिकार किया था, उसके दो महीने बाद ही कर्नल रावर्ट क्लाइव बम्बईसे मद्रास आकर उतरे।

इसके कुछ दिनों पहले एडमिरल वाट्सनके साथ मिलकर बम्बईके दक्षिण तीन ओर समुद्रसे घिरे हुए पहाड़के ऊपर बने हुए मराठा जल-दस्युओंके सर्दार तुला जी अंग्रियाके विजयदुर्गको उन्होंने जीत लिया था। इस समय वे कर्नल क्लाइव हो गये थे। वे मद्रासके डिप्टी गवर्नर थे।

क्लाइव बाप-माँ द्वारा विताड़ित पुत्र थे। उनके उपद्रव और ऊधमसे तंग आकर उनके बापने किसी तरहसे ईस्ट इण्डिया कम्पनीके एक साधा-रण मुंशीका काम उनके लिए जुटाकर तथा उन्हें भारतवर्षकी ओर रवानाकर निश्चिन्तताकी सांस ली। उस समय क्लाइवकी उम्र केवल सत्रह वर्षकी थी।

क्लाइव कम्पनीके मुंशी होकर मद्रासकी अंग्रेज़ी कोठीके गुदाममें बैठे-बैठे माल वज़न करते, कपड़ा पसन्दकर अलग करते, और उस सबका हिसाब-किताब रखते। यह काम बिलकुल ही उनके मनके अनुकूल नहीं था।

एक जगह बैठे-बैठे काम करना क्लाइवकी प्रकृतिके विरुद्ध था। एक दिन मनके दुःखसे वे आत्महत्या कर रहे थे। लेकिन अपने सरको लक्ष्यकर दो-दो बार पिस्तौल छोड़नेपर भी गोली नहीं लगी। क्लाइव विरत हुए।

उन्होंने सोचा कि लगता है कोई वड़ा काम करानेके लिए विधाताने उन्हें बचाया है ।

शीघ्र ही बड़े कामका एक सुअवसर उपस्थित हुआ । मनुष्यके जीवनमें कव, किस प्रकारसे वड़ा काम करनेके लिए आह्वान आता है, उसका पता न्याय-शास्त्रके किसी भी प्रकरणमें नहीं मिलता ।

फ्रान्सके साथ इंगलैण्डकी सदा ही शत्रुता है । इस शत्रुताके कारण शताव्दीके वाद शताव्दी वाटरलूके युद्धतक दोनोंके बीच कितनो लड़ाई, कितनी मारकाट और कितना वाद-विवाद हो चुका है ।

फ्रान्सने जव देखा कि पूर्वके देशोंमें वाणिज्य-व्यापार जमाकर इंगलैण्ड खूव मज़ेमें फूल उठा है, तव खींचा-तानो और वढ़ गई । अंग्रेज़ोंकी देखा-देखी फ्रान्सीसियोंने भी ईस्ट इण्डिया कम्पनीके समान एक व्यापारी कम्पनी खोल डाली । दक्षिण भारतके पाण्डिचेरीमें उनका प्रधान अड्डा हुआ ।

क्लाइव जव कम्पनीके मुंशी थे, उस समय फ्रान्सोआ दुप्लेक्स नामके एक फ्रान्सीसी साहव पाण्डिचेरीके गवर्नर थे । उसके पहले वे चन्दननगरमें भी गवर्नर रह चुके थे । दुप्लेक्स साहव अद्‌भुत प्रकृतिके आदमी थे । भारतवर्षमें आकर ही वाणिज्य-व्यवसायकी वात एकदम भूलकर वे इस देशमें एक वड़ा फ्रान्सीसी राज्य जमानेका स्वप्न देखने लगे । नवाव-वादशाहोंके समान ही उनकी चाल-ढाल, हाव-भाव, वेश-भूषा थी । पाण्डिचेरी-के गवर्नमेण्ट हाउसमें नवावी ढंगका एक दरवार उन्होंने शुरू कर दिया ।

कुछ दिन वीतते-न-वीतते दुप्लेक्स खुल्लम-खुल्ला इस देशकी पालिटिक्स-में उतर पड़े । उन्होंने देखा, इस देशके नवाव-वादशाह, राजा-रजवाड़े क्रमशः एकदम गये-गुजरे होते जा रहे हैं । उनसे उनका राज्य छीन लेनेमें अधिक कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा और समय भी अधिक नहीं लगेगा । लेकिन इस पथके कांटे अंग्रेज़ हैं ।

इसलिए सहज ही दक्षिणापथमें अंग्रेज़ोंके साथ फ्रान्सीसियोंका संघर्ष आरम्भ हो गया । इस संघर्षके फलस्वरूप वहुत-से छोकरे-केरानियोंको

बाध्य होकर कलम छोड़ हथियार पकड़ना पड़ा। क्लाइव तो जी उठे। दु:खकी जगह उनके मनमें उस समय उत्साहका अत्यधिक स्फुरण दीख पड़ा।

एकके-बाद-एक अनेक युद्धोंमें फ्रान्सीसियोंके विरुद्ध विजय पाकर क्लाइवने खूब नाम कमाया। उनका सितारा उस समय ऊँचेपर था। जैसे वे भाग्यलक्ष्मीके वरद पुत्र हों!

मद्रास लौटकर आते ही क्लाइवको मालूम हुआ कि कलकत्ता और अंग्रेज़ोंके हाथमें नहीं है। गवर्नर ड्रेकके भागनेकी कहानी सुनी। काल-कोठरीकी उस विचित्र कहानीसे लोग अवाक् रह गये। हालवेल साहबकी मनको उत्तेजित कर देनेवाली भाषामें लिखी हुई वह लोमहर्षक कहानी थी। चारों ओर तैयार हो, तैयार हो की आवाज़ गूँज उठी।

सौभाग्यवश एडमिरल वाट्सन उस समय भी अपनी नौवाहिनी लेकर मद्रास बन्दरगाहमें उपस्थित थे। चार्ल्स वाट्सन लेकिन रावर्ट क्लाइव और उनके सैन्य दलको थोड़ी अवज्ञाकी दृष्टिसे ही देखते। भले ही क्लाइव कर्नल हों, तो भी कम्पनीके ही तो नौकर हैं? और चार्ल्स वाट्सन स्वयं इंगलैण्डके राजासे कमीशन पाये हुए एडमिरल थे।

और किसी समय मान-अभिमान करनेपर भी संकटके समय अंग्रेज़ एक साथ मिलकर काम करना जानते हैं। यह विद्या फ्रान्सीसियोंकी बिलकुल जानी हुई नहीं थी।

पाँच-सौ-पचास गोरे, नौ सौ चालीस तैलंग सिपाही और चौदह तोपें लेकर पाँच-पाँच युद्ध पोत तैयार हुए। इसके अलावा वाट्सन अपने सैन्य सामन्त, लाव-लस्कर अलगसे साज-सरंज़ाम लेकर और पाँच युद्धपोतोंपर रहे। उन लोगोंके साथ मद्रास काउन्सिलने कम्पनीके पाँच माल ढोनेवाले जहाज़ दिये जिन्हें इण्डियामेन कहा जाता था।

सन् १७५६ ई० के १६ अक्तूबरको क्लाइव और वाट्सन कलकत्ताका पुनरुद्धार करनेके लिए जहाज़पर चढ़कर चले। मन-ही-मन वे सब समय सोचते-फिरसे कैसे अंग्रेज़ोंकी प्रतिष्ठाकी स्थापना होगी। क्या करनेसे फिर

कम्पनीका व्यापार बंगालमें बिना किसी झगड़ा-झंझटके चालू किया जा सकेगा।

१५ दिसम्वर सन् १७५६ ई०। क्लाइव और वाट्सन गंगासे होकर कलकत्ते आ पहुँचे। उन लोगोंको देखकर कई भूखे, रोगग्रस्त, निराश, मुमूर्षु प्राणियोंके मनमें जो अपूर्व आनन्दका संचार हुआ, उसे वाणीके द्वारा प्रकाश करना असम्भव है। परस्परके कलहको तवतकके लिए बन्द रख कलकत्तेके उद्धारके लिए विचार-विमर्शमें सभी लग गये।

मालूम हुआ कि कम्पनीके डायरेक्टरोंने खबर भेजी है कि और कौउन्सिलका काम नहीं है। अवसे एक छोटी सेलेक्ट कमिटीके ऊपर सव कामका भार दिया गया। वे सभी मिलकर जो अच्छा समझें ठीक उसी तरहसे काम करेंगे। तब तकके लिए उस कमिटीके प्रेसिडेण्ट रोज़र ड्रेक ही रहेंगे। ड्रेकके चाचा कम्पनीके एक बड़े डायरेक्टर थे। उनके भतीजेकी नौकरी इसीलिए उसी समय नहीं गयी। वाट्सन और क्लाइव दोनों ही सेलेक्ट कमिटीमें रहे।

फलतामें बैठे ही क्लाइवने पहले कलकत्तेके गवर्नरके पास चिट्ठी लिख-कर वतला दिया कि कौन-सा संकल्प लेकर वे इतनी दूर आये हुए हैं। स्वयं नवावको वे जो बतलाना चाहते थे, उसका भी एक मसविदा तैयार कर मानिकचन्दके पास भेज दिया। इस मसविदेमें बहुत काट-छाँटकर क्लाइवके पास वापिसकर मानिकचन्दने लिखा कि चिट्ठी नवावके पास भेजने लायक उपयुक्त भाषामें बिलकुल ही नहीं लिखी गयी है। इसीलिए उन्होंने उसको थोड़ा संयत कर दिया है।

क्लाइवने कहलवा भेजा कि नवावका पैर पकड़नेके लिए मद्राससे उतनी दूरका रास्ता तै कर वे बंगालमें नहीं आये हैं। इसलिए उनका पत्र नरम न होकर थोड़ा गर्म तो होगा ही। फिर मानिकचन्दके द्वारा चिट्ठी न भेज उन्होंने एकदम सीधे नवाबके पास भेजनेका वन्दोवस्त किया।

एडमिरल वाट्सनने भी उसके साथ उसी तरहकी नवावको लिखी हुई अपनी एक चिट्ठी शामिल कर दी ।

यह सब देख-सुनकर मानिकचन्द भी और चुप नहीं रह सके। अंग्रेज़ोंसे वे वहुत अप्रसन्न नहीं थे, लेकिन ऊपर जो नवाब थे। चुप वैठे रहनेसे क्या काम चलता है ? शिवपुरके थाना दुर्गको झाड़-पोंछकर उन्होंने ठीक कर रखा। इसके वाद दो हज़ार सैनिक लेकर वे बजबज चले। वहाँके रास्तेको पारकर ही तो अंग्रेज कलकत्तेमें घुसेंगे ।

सेलेक्ट कमिटीने तै कर रखा था कि अभी शीघ्र ही कलकत्तेकी ओर जाना ठीक नहीं होगा। मद्राससे और कुछ फ़ौज, और कई जहाज़ोंके आनेकी वात थी। उन सबोंके आ जानेपर ही यात्रा मंगलमय होगी। लेकिन फलतामें जिस प्रकारसे बीमारीका दौरा है, उससे और एक क्षणके लिए भी फलतामें रहनेकी इच्छा क्लाइवको नहीं हुई। हाल हीमें वे भी खूब ज्वर भोग चुके हैं ।

मेजर किलपैट्रिकने देशी सिपाहियोंको लेकर ज़मीनके रास्ते यात्रा शुरू की। क्लाइव और वाट्सन गोरोंको लेकर जहाज़पर सवार हो जल-मार्गसे चले ।

वजबज पहुँचनेके कुछ पहले ही मायापुर नामक एक स्थानपर वाट्सन साहवने क्लाइव और उनके सैनिकोंको एक ऊँची-सी जगहपर उतार दिया। मेजर किलपैट्रिक भी वहाँ शीघ्र ही आ पहुँचे। कर्नल और मेजर दोनोंकी वहीं भेंट हुई ।

इसके बाद खूब ज़ोर-ज़ोरसे पैर पटकते मार्च करते सभी वजबजकी ओर चले ।

: २६ :

सारी रात मार्च कर सवेरे आठ वजे कर्नल क्लाइव और मेजर किल-पैट्रिक सेना सहित वज़बजमें आ पहुँचे ।

२९ दिसम्बर सन् १७५६ ई०। एडमिरल वाट्सन भी जहाज़ लेकर साढ़े आठ बजे वहाँ आ पहुँचे।

क्लाइवके आदमी वाट्सनके जहाजोंको देख नहीं पाये। वे जहाँ खड़े थे, उसके चारों ओर घना जंगल था। लेकिन जहाज़ी गोरेंने मस्तूलपर चढ़कर उस स्थानपर कहाँ क्या है, इसकी खोज करते-करते देखा कि थोड़ेसे कुछ चुने हुए सैनिकोंको लेकर क़िला दखल करनेके लिए क्लाइव बजबज फोर्टकी ओर अग्रसर हो रहे हैं।

क्लाइवको मालूम नहीं हुआ कि दो मीलके भीतर ही मानिकचन्दने अपना अड्डा जमाया है। क्लाइवने अपने सैनिकोंको इधर-उधर विखराकर तैयार रखा और युद्धके लिए प्रस्तुत होने लगे। इसके वाद दो सौ चुने हुए गोरोंको लेकर गंगाकी ओर आगे बढ़ने लगे। ठीक उसी समय मानिकचन्द-के दो हज़ार सैनिकोंने उन लोगोंके ऊपर आक्रमण किया। उस समय दस बजा होगा।

मानिकचंदकी फ़ौज कलकत्तेमें अंग्रेज़ोंके साथ लड़ी थी। इसीलिए वे कुछ अवज्ञाके साथ ही क्लाइवके साथ लड़ने गये थे। लेकिन क्लाइवको तो वे जानते नहीं थे। आधे घण्टेके भीतर ही क्लाइवने उस दो हज़ारकी फ़ौज़पर दो वार प्रहारकर विल्कुल उसकी पंक्ति भंग कर दी। मानिक-चंदके प्रायः दो सौ लोग हताहत हुए। चार वड़े-बड़े सेनापति युद्धक्षेत्रमें ही मारे गये।

मानिकचंदके सिरके ऊपरसे एक गोली निकलती हुई उनकी पगड़ीको उड़ा ले गई। उसीसे युद्ध छोड़ वे इस प्रकार भागे कि कहीं भी एक क्षणके लि[illegible] भी नहीं रुके। सीधे एकदम कलकत्ते ही आ पहुँचे।

[illegible]री वीच गोले-गोलीकी आवाज़से लड़ाई हो रही है, ऐसा अन्दाज़ लगा वाट[illegible]की फौज़ जहाज़से उतर उस ऊँचे मैदानमें आ क्लाइवकी फौज़-के साथ मि[illegible]ई। इसे देख नवावकी फौज़में जो अभी भी बचे थे, वे युद्ध छोड़ सीधे वजव[illegible]फोर्टमें जाकर छिप गये।

उस तरफ फ़ोर्टमें मानिकचन्दके जो गोलन्दाज़ थे, उन्होंने इसके पहले ही वाट्सनके जहाज़ोंको लक्ष्यकर गोला दागना आरम्भ कर दिया था। अपने जहाज़से वाट्सनके दो गोले चलाते ही सब शान्त हो गये। इतने बड़े गोले इसके पहले बंगालमें किसीने नहीं देखे थे। बाप रे कैसा उसका गर्जन है! कैसा उसका तेज़ है!

शामको सात बजे वाट्सनने देखा कि सब कुछ बिलकुल शान्त है। उन्होंने बजबज क़िलेके ऊपर धावा बोलकर उसे ले लेनेके लिए सौ जहाज़ी गोरोंको नदीके किनारे उतार दिया। उनके सहकारी कैप्टेन आयर कुटकी इच्छा थी कि उसी रातको बजबजके क़िलेपर अधिकार कर लें। किन्तु कर्नल क्लाइवने कहलवाया कि वे और उनके मेजर तथा उनके सैनिकगत सम्पूर्ण रात्रि मार्च करनेके कारण इस समय अत्यन्त थके हुए हैं। आज वे और किसी भी तरह उठ नहीं सकेंगे। इस समय कुछ विश्रामकी ज़रूरत है।

रातमें ग्यारह बजे। सभी मज़ेमें नाक बजाकर सो रहें हैं, ऐसे समय एक ज़बर्दस्त शोर-गुलसे सबकी नींद टूट गई। बजबज क़िलेकी ओरसे ही आवाज़ आ रही थी।

जल्दी-जल्दी सबोंने वहाँ जाकर देखा। वह एक विचित्र दृश्य था। स्ट्रेन नामका एक जहाजी गोरा शराबके नशेमें क़िलेके सामनेकी खाईको तैरकर क़िलेकी दीवारके ऊपर जाकर खड़ा है। उसके एक हाथमें पिस्तौल है और एक हाथमें एक छोटी तलवार। और ज़ोरके आवाज़में स्ट्रेन चिल्ला रहा है, युद्धं देहि, युद्धं देहि, यह क़िला मेरा है, मेरा। फूटी हुई थालीके समान उसके गलेकी आवाज़ कर्कश थी। उसकी वह आवाज़ निकलते ही लगता, जैसे एक आदमी नहीं, एक सौ आदमी एक साथ चिल्ला रहे हैं।

फोर्टमें नवावकी फ़ौज संख्यामें बहुत कम थी। सन्ध्याके अन्धकारमें उनमेंसे बहुत भाग गये हैं। दीख पड़ा कि स्ट्रेनने ... गोली मार दी

हैं। और एकको तलवारसे काट दिया है। और एकको जो स्ट्रेनके हाथसे तलवार छीन लेनेकी चेष्टा कर रहा था, उसे स्ट्रेनने एक घूसेसे धराशायी कर दिया है। अंग्रेज़ोंके बहुतसे आदमियोंके वहाँ आ जानेसे बाक़ी फ़ौज क़िला छोड़कर जिससे जिस ओर बना भाग गई।

स्ट्रेनने जब सुना कि इसके लिए उसे कोर्ट मार्शल किया जायगा, तब उसका नशा एक दम छूट गया। माफ़ी माँगते हुए स्ट्रेनने कहा, मेरी पूरी शिक्षा हो गई है। मैं अब कभी भी अकेले कोई भी क़िला फतह करनेकी चेष्टा नहीं करूँगा।

बजबजका किला प्रायः बिना लड़ाईके अंग्रेज़ोंके हाथमें चला आया। वह एक अच्छा-सा ही फोर्ट था। पीछे उसे फिरसे दखल कर नवाबकी फ़ौज अंग्रेज़ोंके जलमार्गके यातायातमें विघ्न न डालें इसी भयसे उसे तोड़-फोड़कर एकदम धूलिसात् कर दिया गया।

फिर मार्च शुरू हुआ। इस बार कलकत्तेकी ओर।

बीच रास्तेमें गंगाके एक ओर मटियाबुर्जका मिट्टीका क़िला पड़ता है, उस समय उसका नाम आलीगढ़ था। उस ओर शिवपुरका वही पुराना थाना दुर्ग है, जिसका नाम मकवा था। दोनों ही बिना किसी बाधाके वाट्सनके हाथमें आ गये। अंग्रेजोंके जहाज़ी गोलेके प्रतापकी बात इसके पहले ही एक मुँहसे दूसरे मुँह हो फैल चुकी थी। दूरसे जहाजको आते देख-कर ही एक क्षणमें दोनों क़िले खाली हो गये।

थाना दुर्गसे चालीस सजी सजाई अच्छी तोपें गाड़ीके साथ अंग्रेज़ोंको मिल गईं। ये सभी एक समय उन्हींकी थीं। अंग्रेज़ आ रहे हैं सुनकर मानिकचन्दने उन सबोंको कलकत्तेसे लाकर वहाँ ठीक कर रखा था।

फ़ौज लेकर क्लाइव मटियाबुर्जमें उतर पड़े। वहाँसे पैदल कलकत्ता-की ओर चले। वाट्सन अपने जहाज़पर गये।

: ३० :

दूसरी जनवरी, सन् १७५७ ई०। एडमिरल वाट्सनने दूरसे ही गंगाके ऊपर जहाज़से फोर्ट विलियममें दो गोले छोड़े। स्थलमार्गसे खरोंच लगने जैसी साधारण-सी थोड़ी मारकाट हुई। दस बजे वाट्सनके जहाज़के फोर्टके सामने आते ही सब शान्त हो गया। फोर्ट खाली हो गया। कलकत्तेकी गवर्नरगीरिको फेंक-फाँककर भागते-भागते मानिकचन्दने एकदम हुगली जाकर ही साँस ली। सेना सहित जहाज़से उतरकर कैप्टेन आयर कुट और कैप्टेन आयर किंगने फोर्ट विलियमको दखल कर लिया।

उस ओर दक्षिणकी ओरसे मार्च करते-करते क्लाइवके सिपाही और गोरी पल्टन फोर्टके पास आ गये। किन्तु उनमेंसे किसीको सन्तरियोंने फोर्टमें घुसने नहीं दिया। एडमिरल साहबका सख्त हुक्म था, उनकी अनुमतिके विना कोई जिसमें फोर्टमें न घुसे। आगे आकर क्लाइवने सुना कि वाट्सनने आयर कुटको फोर्ट विलियमका गवर्नर बना दिया है।

इधर जो लोग फोर्टके पहरे पर थे, वे सभी क्लाइवको पहचानते। उनके आदमियोंको रोकनेपर भी विना कुछ कहे सुने उनके लिए उन्होंने रास्ता छोड़ दिया। फोर्टके भीतर जाकर क्लाइवने आयर कुटसे फोर्टकी चावी माँगी। एडमिरल वाट्सनके कानों तक बात पहुँचानेके लिए कैप्टेन कुटने जहाज़पर आदमी भेजा। वाट्सनने कहलवा भेजा कि क्लाइव अगर फोर्टमें रहनेके लिए ज़िद करें, तो उन्हें ऐसा उपाय अख्तियार करना पड़ेगा जो किसीके लिए भी सुखदायी नहीं होगा।

क्लाइवने वाट्सनको जता दिया कि एडमिरल साहब स्वयं आकर फोर्टको अधिकारमें लेना चाहें, तो उन्हींके हाथोंमें फ़ोर्ट छोड़ दिया जायगा। लेकिन कम्पनीके फोर्टको वे और किसीके हाथों किसी भी तरह नहीं छोड़ेंगे। हितैषी मित्रोंने वाट्सनको समझाया कि इस समय मानापमानका समय नहीं है। क्लाइव जो कह रहे हैं, वही युक्तिसंगत है।

झगड़ाके ज़ोर पकड़नेके पहले ही दूसरे दिन सवेरे वाट्सन जहाज छोड़कर फोर्टमें आये। क्लाइवने उन्हींके हाथोंमें चावी लौटा दी। ड्रेकको बुलाकर वाट्सनने उस चावीको उन्हींके हाथोंमें सौंप दिया।

कलकत्ता फिर अंग्रेजोंका हो गया। फलतासे आकर फिर सभी कलकत्तामें आकर जमा हुए। ऐसे सोनेके कलकत्ता शहरको ठीक प्रेतपुरीके जैसा खड़ा देख अंग्रेज़ोंको आनन्दके बदले दुःख ही उमड़ आया। छः महीनेके भीतर ही क्या उसका चेहरा हो गया है। पहचानना भी मुश्किल है।

क्लाइव लेकिन उस टूटे फोर्ट विलियममें रहनेको राज़ी नहीं हुए। वहाँ फ़ौजका रखना बिलकुल निरापद नहीं है। इसके अलावा, ज़रूरत पड़नेपर उस क़िलेमें बैठकर लड़ाई करना एक असम्भव सी बात है, यह तो पहले ही प्रमाणित हो गया है। इसके ऊपर एक ओर वाट्सन क्लाइवके ऊपर उनकी अवज्ञाका भाव किसीसे भी छिपा हुआ नहीं था, और दूसरी ओर सेलेक्ट कमिटी—इसके मेम्बर भी क्लाइवके प्रतापको देख ईर्ष्यासे जर्जरित थे—इन लोगोंके साथ खींचातानी कर एक जगह एक साथ रहनेको क्लाइव किसी भी तरह तैयार नहीं हुए।

दोनों ओर इन दो दलोंके बीच पड़ क्लाइव कुछ निराश हो गये। वे बड़ा काम करनेके लिए आये हैं। उन सब छोटी-मोटी बातोंको लेकर तर्क-वितर्क करना तथा मनोमालिन्य करना क्या उन्हें शोभा देता है? उनलोगोंसे बचकर काशीपुरसे कुछ उत्तर बरानगरके सुनसान खाली मैदानमें अपने आदमियोंको लेकर उन्होंने खेमा गाड़ा।

लेकिन जब भाग्यलक्ष्मी ही स्वयं क्लाइवकी सहायक हैं, तब दूसरे लोग उनसे उलझकर क्या करेंगे? क्लाइवके हाथमें धूल भी सोना हो उठता है।

कलकत्ता अच्छी तरह दखल होते-न-होते ही तीसरी जनवरीको वाट्सन और क्लाइवने अलग-अलग नवाब सिराजुद्दौलाके विरुद्ध युद्धकी घोषणा कर दी।

काउन्सिलकी सेलेक्ट कमिटी भी अपने काममें लगी। नवावका दिया हुआ कलकत्तेका नाम अलीनगर उठा दिया गया। फोर्टके भीतर जो नई मस्जिद बनी थी, उसे भी तोड़ डाला गया। फोर्टके बाहर-भीतर जितने मकान, चर्च सिराजुद्दौलाने तोड़-फोड़ जलाकर एकदम साफ़ कर दिये थे, उनका और कुछ नहीं किया जा सका। तब तकके लिए वे सब पड़े ही रहे। तब जिन-सब मकानोंके दरवाजे, खिड़कियाँ निकालकर नवावके आदमियोंने चूल्हा जलानेके काममें लगा दिया था, उनको कुछ मरम्मत कर रहने लायक़ बना लिया गया था। माल-असवाव अवश्य फिर नहीं मिला।

सबसे अधिक नुकसान देशी मुहल्लेका हुआ था। उसका आधा तो अंग्रेज़ोंने स्वयं ही जलाकर भस्म कर दिया था। वाक़ीको नवावके आदमियोंने अच्छी तरहसे ही खतम कर दिया था। वहाँ हटा ले जानेके लिए जो कुछ भी था, सब ही ग़ायव हो गया था।

जो हो, मिलिटरी सम्बन्धी कामसे छुटकारा पाकर सेलेक्ट कमिटीने शहरकी उन्नतिकी ओर ध्यान दिया। धीरे-धीरे फिरसे शहरकी श्री लौटने लगी।

क्लाइव वरानगरके मैदानमें ही रह गये। उस समयका वरानगर आजका वरानगर नहीं था। उस समय उसके चारों ओर जलसे भरी नीची ज़मीन, जंगल और वनैले सूअर भरे हुए थे। एक दिन तेज़ीसे दौड़ते हुए आकर एक वनैले सूअरने क्लाइवके एक सिपाहीको झपट्टा मारकर एकदमसे घायल कर दिया।

क्लाइव कहीं भी चुपचाप वैठनेवाले आदमी नहीं थे। दक्षिणापथके युद्धमें उन्होंने एक वात अच्छी तरह ही सीखी थी, कि इस देशके लोगोंको भय दिखाकर उनके मनमें आतंक पैदा कर देनेपर वारह आना काम हासिल हो जाता है। उस समय केवल चार आना युद्ध करनेसे ही कार्योद्धार हो सकता है।

काउन्सिलके साथ परामर्श कर क्लाइवने हुगलीमें एक बड़े पैमानेपर धावा बोलनेका प्लैन बना डाला। इस बार और सुनारकी ठुक-ठुक नहीं एकदमसे लोहारकी एक चोट।

उस समय मद्राससे वालपोल जहाज़ आ गया था। उसमें क्लाइवके अपने हाथोंसे तैयार किये हुए तीन-चार सौ सिपाही और प्रचुर युद्ध सामग्री थी—तोप, बन्दूक़, गोला, गोली, बारूद। उसे देख अंग्रेज़ोंका साहस और बढ़ गया। हुगलीपर आक्रमण करनेकी सभी तैयारियाँ अग्रसर होने लगीं। बाध्य होकर तब हुगलीमें बैठे मानिकचन्दने भी तैयारी शुरू कर दी।

कासिमबाज़ार-कोठीके सर्जन डाक्टर विलियम फोर्थ भागकर उस समय चुँचड़ामें डचोंके आश्रयमें रह रहे थे। उन्होंने लिख भेजा, रोज़ ही जल-मार्ग, स्थलमार्गसे लोग हुगलीसे भाग रहे हैं। इस सयय मौक़ा अच्छा है—हुगलीपर आक्रमण करनेपर अंग्रेज़ोंकी इज़्ज़त खूब बढ़ जाएगी। और उससे थोड़े लाभकी भी आशा है। चालाकीसे चिट्ठीके साथ उन्होंने हुगली शहर-का एक प्लैन भी भेज दिया।

चौथी जनवरी। वाट्सनने अपनी फ़ौजसे १३० गोरोंको चुनकर भेजा। क्लाइवने भी कुछ दिये। तीन सौ देशी सिपाही गोरोंके साथ चले। उन्हें लेकर तीन जहाज़ सजाये गये। क्लाइवके सहकारी मेजर क्लिपैट्रिक इस अभियानके नेता होकर ब्रिजवाटर जहाज़ पर सवार हुए। साथमें दो निपुण सेनापति कैप्टेन आयर कुट और कैप्टेन किंग थे।

लेकिन देरी हो गई। हुगली-अभियानके प्रारम्भमें ही ब्रिज वाटर जहाज़ बाग बाजारके पेरिन साहबके बाग़के बराबर आते ही रेतमें अटक गया। इससे एक पूरा दिन ही नष्ट हो गया। अंग्रेज़ आ रहे हैं, सुन कर हुगलीमें पहले ही से रोना-धोना शुरू हो गया था। देरी होनेसे वहाँके लोगोंको सुविधा ही हुई। वे माल असबाव ले, भागकर बचनेका थोड़ा और समय पा गये।

ब्रिजवाटर जब रेतीसे निकलकर बरानगर पहुँचा तब और-एक नई विपत्ति आई। मेज़र क्लिपैट्रिक आदि कोई भी तो इस ओरकी गंगाकी गतिविधिको नहीं जानते। जो जाना हुआ था, वह उन डचोंका था। डचोंसे पाइलेट चाहनेपर उन्होंने दिया नहीं। दें कैसे ? वही उस दिन नवावके हाथों उनका कितना अपमान हुआ था ? यह तो छः महीने पहलेकी बात है। डच-गवर्नर आर्डियन विसडोम साहव उस बातको क्या इतने सहजमें भूल जाएँगे।

अंग्रेज़ भी किसी तरह पीछे पैर रखनेवाले नहीं थे। डचोंका एक ज़हाज़ उस समय बरानगरमें ही गंगामें बँधा हुआ था। ब्रिज़वाटरके कैप्टेन स्मिथ साहब सीधे इस जहाज़पर चढ़कर एक डच आफ़िसरको वहाँसे शव-की तरह उठाकर अपने जहाज़पर ला पटके।

इसके बाद तो और कोई कठिनाई नहीं रह गई। ९ जनवरीको अंग्रेज़ोंके जहाज़ हुगली फोर्टके सामने आ पहुँचे। एक दल जहाज़ी गोरोंको उसी समय किनारेपर उतार दिया गया। मैदानमें उतर कोई बात बिना कहे उन लोगोंने एकदमसे सभी घर-द्वारको जलाना शुरू कर दिया। उनके चेहरोंको देखकर ही तो लोगोंके प्राण-पखेरू उड़ गये। ऐसी लम्बी-चौड़ी देह। ऐसी छाती। लाल-लाल गोल-गाल मुँह। एक-एक जैसे साक्षात् एक-एक यमदूत हो। डर किसे कहते हैं, वे नहीं जानते। खाली हाथ केवल घूँसेके बलपर ही दस-दस जवानोंको काबूमें कर लेते हैं।

तीसरे पहर भर हुगली-फोर्टके ऊपर जहाज़से गोला-वर्षण होता रहा। रातको दो बजे अंग्रेज़ी फ़ौजने हुगली क़िलेको घेर लिया। दुर्ग ले लेनेमें अधिक कष्ट नहीं उठाना पड़ा। नवावके दो हज़ार सैनिक जो क़िलेकी रक्षाके लिए थे, ये क़िलेको छोड़ भाग गये।

उसके बाद शुरू हुई ताण्डव लीला। १० से १९ जनवरी तक अंग्रेज़ गोरोंने हाथके पास जहाँ भी जो कुछ पाया, सबको जलाकर भस्म कर डाला। हुगलीसे बैंडेल तक एक भी मकान, एक भी गोला साबुत नहीं

रहा। अंग्रेज़ोंने खूब अति की। ऐसा नहीं करनेपर भी चलता। लेकिन उस समय तो खून सिरपर चढ़ गया था। हालवेलने कालकोठरीकी कहानी व्यर्थ ही तो नहीं लिखी थी। हुगली-पर्वको समाप्त कर १९ जनवरीको अंग्रेज़ कलकत्ते लौट आये।

इसके वाद नवाव सिराजुद्दौला चुप नहीं रह सके। लेकिन चुप रहना ही अच्छा होता। जव तक एक कुछ तै नहीं होता, तव तक अंग्रेज़ लोग वंगालमें व्यापार नहीं कर पाते। खाने-पीनेकी चीज़ोंको भी जुटाना उनके लिए कठिन होता। व्यापार मिट्टीमें मिल रहा है, देखकर कम्पनीके डायरेक्टर अधिक दिन वैठे नहीं रहते, जल्दी कुछ करनेके लिए कहते। लाचार होकर अपनेसे ही अंग्रेज़ लोग एक समझौताकी व्यवस्था करनेको वाध्य होते। उस समय नवावको अच्छा मौक़ा मिलता।

लेकिन 'नियतिः केन वाध्यते ?' सिराजुद्दौला कलकत्ते रवाना हुए। वे नहीं समझे कि इस वार करैत साँपके सिरपर पैर रखने जा रहे हैं।

१९ जनवरीको कलकत्तेमें वैठे अंग्रेज़ोंने सुना कि नवाव सिराजुद्दौला त्रिवेणी तक आ गये हैं। उनके साथ चालीस हज़ार घुड़सवार तथा साठ हज़ार पैदल सेना है। पचास हाथी और तीस तोपें हैं। इस ओर अंग्रेज़ोंके पास तो सात सौ ग्यारह गोरे, एक सौ गोलन्दाज़, तेरह सौ सिपाही और चौदह तीन-सेरी गोलेकी तोपें हैं।

अंग्रेज़ सचमुचमें ही कुछ डर-सा गये। डरनेकी वात ही थी। नवाव-की सेनावाहिनीका विस्तार तो कम नहीं था। इसके वारेमें खूब काना-फूसी चल रही है, कि लगता है उनके देशमें फ़्रांसीसियोंके साथ अंग्रेज़ोंकी लड़ाई छिड़ ही गई। सचमुचमें अगर छिड़ गई हो, तो दोनों ओर सँभा-लना तो वहुत कठिन है।

अंग्रेज़ोंने नवावके पास एक सन्धिका प्रस्ताव भेजा। नवाव भी इसीको लेकर थोड़ा खेलाने लगे। उन्हें भी ठोक-वजाकर देख लेनेकी इच्छा थी कि सचमुचमें अंग्रेज़ोंमें कितनी शक्ति है। इसके पहले ही मानिकचन्दने स्वयं

मुर्शिदाबाद जाकर ख़बर दी है कि उस बार लालदीघीके युद्धमें नवाब जिन अंग्रेज़ोंका परिचय पाकर आये थे, इस बार और वे सब स्त्रैण अंग्रेज नहीं हैं। क्लाइवके आदमी बिलकुल दूसरी जातिके हैं। समय बितानेके लिए नवाबने जगत सेठसे ही क्लाइवके पास चिट्ठी लिखवाई। डचों और फ्रांसीसियोंकी मध्यस्थता मानी।

अंग्रेज़ टूट जायँ तो टूट जायँ, लेकिन झुकते नहीं। बाहरसे वे खूब उछल-कूद मचाने लगे। सन्धिकी ऐसी-ऐसी शर्तें भेजने लगे कि जैसे नवाब ही चोरीके अपराधमें पकड़े गये हों। डच लोगोंने इस सन्धिमें मध्यस्थ होना नहीं चाहा। फ्रांसीसियोंका विश्वास कर इस विषयमें उन्हें बीचमें आने-देनेको अंग्रेज़ ही स्वयं राज़ी नहीं हुए। अन्तमें क्लाइवने स्वयं अपने दो विश्वस्त आदमियों, जान वाल्श और लुक स्क्राफ्टनको शान्ति दूत बनाकर नवाबके पास भेजा। दौड़े-दौड़े सुखचर तक जानेपर भी नवाबसे नहीं मिल सके। सिराजुद्दौला उस समय कलकत्तेके रास्ते रवाना हो गये हैं।

३ फरवरी सन् १७५७ ई०को नवाब सिराजुद्दौला बरानगरमें क्लाइवकी फौजसे क़तराकर बारासतका रास्ता पकड़ दमदम होकर फिर कलकत्तेमें घुसे। फिर उसी उमीचन्दके हाल्सी बाग़वाले मकानके चारों ओर नवाबका तम्बू गड़ा।

दूसरे दिन वाल्श और स्क्राफ्टनने वहीं आकर नवाबको पकड़ा।

: ३१ :

सन्ध्या समय उमीचन्दके बगान बाड़ी (उद्यान-गृह) में सिराजुद्दौलाके दरबारमें वाल्श और स्क्राफ्टनकी बुलाहट हुई। कोर्निश कर उन लोगोंने नवाबके सामने क्लाइवके सन्धि-प्रस्तावोंको पेश किया। नवाबने अच्छा-बुरा कुछ भी नहीं कहा। उँगलीसे मन्त्रियोंकी ओर इशारा कर दिया।

क्लाइवके सन्धि प्रस्तावोंमें पहला ही था कि नवावको अभी कलकत्ता छोड़कर चला जाना पड़ेगा। नहीं तो सन्धिकी वात उठ ही नहीं सकती। नवावके मन्त्री तो अंग्रेज़-दूतोंकी स्पर्धा देखकर आश्चर्यचकित रह गये। वात और आखिर तक नहीं चल सकी।

जाँ लने अपने संस्मरणमें कहा है कि वास्तवमें क्लाइवने इन दो शान्ति दूतोंको जासूसी करनेके लिए ही नवावके पास भेजा था। उद्देश्य था गुप्त रूपसे नवावकी फ़ौजकी असली खवरका संग्रह करना। इनके साथ थे फ़ारसीके जानकार कायस्थ वंशके नवकृष्ण देव, जो वादमें महाराजा नवकृष्ण वहादुरके नामसे विख्यात हुए।

ठीक-ठीक वात क्या हुई, इसका पता नहीं चलता। लेकिन देखा गया कि वाल्श और स्क्राफ्टनने अपने तम्वूमें लौटकर वत्ती बुझा दी। उन्होंने ऐसा दिखलाया, जैसे वे सोने गये हैं। थोड़ी रात होते-न-होते वे दोनों शान्तिदूत धीरे-धीरे पैर दवाकर अपने तम्वूसे वाहर हुए और एकदम सीधे वरानगरमें क्लाइवके तम्वूमें हाजिर हुए। उनके मनमें अवश्य कोई खोट था, इसीलिए उन्होंने यह समझ लिया कि शायद नवावको उनके मनकी असली वातका पता चल गया है। नहीं तो सन्धिकी वातको पूरा किये विना इतनी जल्दी भागेंगे ही क्यों?

क्लाइवने समझ लिया और देरी करना विलकुल ही उचित नहीं होगा। अशुभस्य कालहरणम्। जैसा पहले हुआ था, इस वार भी वही हुआ। नवावके कलकत्ता आनेकी वात सुनकर ही देशी लोग, मिस्त्री-कारीगर, नौकर-चाकर सभीने वहाँसे हटना आरम्भ कर दिया। क्रमशः फ़ौजके लिए रसद जुटाना कठिन हो गया। क्लाइवने देखा कि और देरी करनेपर हो सकता है कि अन्तमें वरानगरके मैदानमें उन्हें भूखों मरना होगा। चाहे इधर या उधर अभी ही तै हो जाना ज़रूरी है।

रात वीतनेके पहले ही क्लाइवने वाट्सनके पास कुछ गोरे सिपाहियोंकी सहायता माँग भेजी। इस वार और झगड़ा न कर वाट्सनने साढ़े पाँच

सौ गोरे क्लाइवके पास भेज दिये। एक बजे रातमें वे लोग जहाज़से बागबाज़ारके पेरिन साहबके बाग़में उतरे। क्लाइवके तम्बूमें पहुँचकर देखते हैं कि इसके पहले ही क्लाइवके सैनिक हथियारसे लैस तैयार हैं।

तीन बजे रातमें मार्च शुरू हुई। दलबल लेकर क्लाइव नवाबके हाल्सी बाग़की छावनीकी ओर चले। साथमें पाँच सौ गोरी पल्टन, साढ़े पाँच सौ जहाज़ी-गोरे, आठ सौ देशी सिपाही, साठ विलायती गोलन्दाज, और दो तोपें थीं।

पाँच फरवरी, सन् १७५७ ई०। भोर होते-होते क्लाइव दलबल सहित हाल्सी बाग़के पास पहुँचे। लेकिन आसपासके धानके खेतोंमें ऐसा कुहरा छा रहा था कि चारों ओर अन्धकारसे एकदम काला-ही-काला दिखाई देता था। रास्ता भूलकर क्लाइव इधर-उधर हाथसे टटोलते घूम रहे हैं, इसी समय उधरसे एक हवाई आतिशबाजी अंग्रेज़ोंके बारूदकी गाड़ीपर आकर पड़ी। उसी समय बारूद फटकर धड़ाका हुआ।

क्लाइवकी ओरके काफ़ी लोग मरे। साथ-ही-साथ नवाबके घुड़सवार अचानक अंग्रेज़ोंकी फ़ौजपर टूट पड़े।

इसके बाद घमासान युद्ध हुआ। अंग्रेज गोलन्दाज़ यथाशक्ति गोला दागने लगे। इससे नवाबके घुड़सवारोंके आक्रमणको तेजी कुछ कम हो गई। लेकिन अन्धकारमें कौन शुत्र है, और कौन मित्र यह पहचानना कठिन था। बहुत अपने ही दलकी गोलीसे मरे, जख़्मी हुए। सवेरे नौ बजे कुहरा हटनेपर चारों ओर साफ़ होनेपर मालूम हुआ कि अंग्रेज़ी फौज एकदम नवाबकी छावनीके भीतर आ पड़ी है। तब क्लाइवने दुगुने वेगसे मार काट शुरू कर दी।

क्लाइवकी इच्छा थी कि किसी तरह नवाबको पकड़ लिया जाय। वैसा होनेपर तो पौ बारह। और युद्ध नहीं करना पड़ेगा। लेकिन नवाब पकड़े नहीं जा सके। शामके वक़्त अंग्रेज़ोंके दूतोंके भागनेकी खबर सुनकर अपने पार्षदोंसे सलाह कर वे अपना तम्बू छोड़कर गोविन्द मित्तिरके

बागानबाड़ी (उद्यान-गृह) में चले गये थे। क्लाइवको अपने बलका केवल क्षय ही हाथ लगा। अब इस विपत्तिसे किसी तरह उबार हो जाय। देखा गया कि लौटनेके रास्तेमें मराठा-डिचके किनारे ही नवाबके गोलन्दाज तोपें ऊँचोकर बैठे हुए हैं।

नवाबकी फ़ौजके बीचसे लड़ाई करते-करते रास्ता बनाकर बड़ी मुश्किलसे क्लाइव सियालदहकी मोड़पर आये। थोड़ा और आगे बढ़कर मराठा-डिचको पारकर उन्हें बहूबाज़ारका रास्ता मिला। उसी रास्तेको पकड़कर जल्दी-जल्दी पैर चलाकर बारह बजेके लगभग दलबल लेकर क्लाइव फोर्ट विलियममें घुसे।

इस साधारण-सी बातमें अंग्रेज़ोंकी ओरके सत्ताइस गोरा सिपाही, बारह जहाज़ी गोरे और अट्ठारह देशी सिपाही मारे गये। सत्तर गोरे सिपाही, बारह जहाज़ी गोरे और पचपन देशी सिपाही जख्मी हुए। दो अच्छी तोपें नवाबकी छावनीमें छोड़ आनी पड़ीं। पलासीके युद्धमें भी अंग्रेज़ोंका इतना नुक़सान नहीं हुआ।

इस प्रकारसे दुःसाहस कर क्लाइवके धावा करने जानेको किसीने भी अच्छा नहीं कहा। नहीं कहनेसे क्या, क्लाइवके स्वभावमें सब समय थोड़ी नाटकीयताका भाव रहता, उसे वे किसी भी तरह सँभाल नहीं पाते। बहादुरी दिखलानेके लिए वे ऐसे-ऐसे सब असम्भव काममें कूद पड़ते जिनका युद्ध शास्त्रकी नीतिके मुताबिक़ किसी भी तरहसे समर्थन नहीं किया जा सकता। लेकिन क्लाइवका भाग्य अद्भुत बुलन्द था कि घोर विपदसे वे बराबर ही सही-सलामत निकल आते।

फोर्ट विलियममें घुसकर थोड़ा विश्राम करते-न-करते क्लाइवने नवाबको एक चिट्ठी लिख डाली। उन्होंने लिखा कि आज सुबह आपकी छावनीमें घुसकर दिखला आया हूँ कि मैं क्या कर सकता हूँ। अंग्रेज़ोंकी शक्तिको कभी भी नगण्य न समझिएगा। समझनेपर आप ही धोखा खाइएगा।

इसके बाद थोड़ा विश्राम कर ठण्डा होकर तीसरे पहर पाँच बजे अपने आदमियोंको साथमें लेकर क्लाइव फिर बरानगरके तम्बूमें लौट आये।

क्लाइवकी इच्छा पूर्ण नहीं होनेपर भी अर्थात् नवाबको बन्दी बनाकर नहीं ला सकनेपर भी भय दिखानेका काम काफ़ी सफल हुआ था। नवाबके आदमी भयभीत होकर बिल्कुल घबड़ाकर बार-बार कहने लगे कि अब किसी भी तरह वे क्लाइवके निकट नहीं जायेंगे। टोपीवालोंको रात-बेरात-का ज्ञान नहीं है। वे युद्धको कोई नियम ही नहीं मानते। 'शतहस्तेन वाजिनम्' अतएव उनसे एक सौ हाथ दूर रहना ही उचित है। हालसी बाग़ छोड़कर नवाब एकदम जहाँ आजकलका ढाकुरे लेक है, वहीं जाकर रहे।

अच्छा मौक़ा समझकर, इस बार क्लाइव और वाट्सन दोनों ही मिलकर एक साथ नवाबके पास अंग्रेज़ोंका दावा पेश करने लगे। इस बार अंग्रेज़ोंके दूत हुए जगत सेठ आदिके वकील रणजीत राय और सबके परि-चित उमीचन्द। उमीचन्द अंग्रेज़ोंके पहलेके सब बर्तावको भूलकर कर्नल क्लाइव और सेलेक्ट कमिटीकी बहुत-बहुत जी-हुज़ूरी कर फिर अंग्रेज़ोंके प्रियपात्र बन गये थे। अंग्रेज़ोंसे मेल रखनेमें उन्हें बहुत-से लाभ थे। यह तो जानी हुई बात है कि लाभके लिए बहुत-से कष्ट सहने पड़ते हैं।

सन्धिके प्रस्तावको लेकर बहुत धींगामुश्ती, बहुत मोल-भाव चला। सिराजुद्दौलाके मनमें था कि बातचीत चला टाल-मटोलकर कुछ समय काट दिया जाय। दक्षिणमें फ्रांसीसी जेनरल बुसीको चिट्ठी भेजी गई है। वे अगर इस बीच आ जायँ तो नवाब अंग्रेज़ोंको एक बार एक हाथ देख लेंगे। बुसीके शीघ्र ही आनेकी बात थी। इसलिए हाँ-नाँ करते हुए नवाब समय बिताने लगे।

लेकिन फ्रेंच लोग तो दक्षिणसे आये ही नहीं, उल्टे यह खबर मिली कि दुर्दमनीय दुरानी अहमद शाह अब्दाली मथुराको लूट दिल्लीकी दहलीज़-पर आ बैठे हैं। लगता है अन्त तक बंगालको भी नहीं छोड़ेंगे। इसलिए

बाध्य होकर एक सन्धि करनी पड़ी। ९ फरवरीको अंग्रेज़ोंके सभी दावे स्वीकार कर नवाव सिराजुद्दौलाने सन्धिपत्रपर हस्ताक्षरकर सील मुहर लगा दिया। वंगालके विभिन्न स्थानोंमें ठीक पहलेकी तरह कोठी बनाकर अंग्रेज़ लोग अपना व्यापार चला सकेंगे। वादशाह फर्रुखसियरने जो फर्मान दिया था, उसकी सभी शर्तें पूरी-की-पूरी वैसे ही रहेंगी। अंग्रेज़ोंका जो भी नुकसान हुआ है, उसका हर्ज़ाना नवाव चुकायेंगे। और जो सबसे अधिक ज़रूरी दो वातें थीं, अर्थात् अंग्रेज़ जैसी उनकी इच्छा कलकत्तेके क़िलेको वना सकते हैं और कलकत्तेमें ही एक टकसाल खोलकर हिन्दुस्तानी सिक्के वना सकेंगे, इन दोनों व्यवस्थाका भी सन्धि-पत्रमें उल्लेख किया गया।

सन्धिके सांथ एक लेन-देनकी वात भी जुड़ी हुई थी। लेकिन वह प्रकट रूपसे नहीं थी, छिपे रूपसे ही थी। इस मामलेमें नवावके पाससे क्लाइवने क्या पाया, उसे सेलेक्ट कमिटीको वता देनेकी उन्होंने कोई भी ज़रूरत नहीं समझी। लेकिन सौभाग्यसे उसे विलायतमें कम्पनीके डायरेक्टरोंकी सिकरेट कमिटीको बतला रखा था, इसलिए वादमें अनेक मुसीवतोंसे वच पाये। उन दिनों किन्तु इस प्रकारसे छिपे रूपसे लेने-देनेको कोई भी बुरा नहीं समझता था। वल्कि घूस कहकर कोई उसे लौटा देता या नहीं लेना चाहता, तो लोगोंको सन्देह होता कि उसका दिमाग़ खराव हो गया है।

इस सन्धिके फलस्वरूप और एक व्यवस्था हुई। वह व्यवस्था अगर सिराजुद्दौला नहीं करते तो लगता है कि अच्छा होता। तै हुआ कि नवाबके दरवारमें अंग्रेज़ोंके एक प्रतिनिधि रहेंगे। दोनों पक्षोंमें जो कुछ भी वातचीत होगी, उन्हींके द्वारा चलेगी। नवाब स्वयं ही विलियम वाट्सको अंग्रेज़ोंकी ओरसे एजेण्ट नियुक्त कर अपने दरवारमें भेज देनेके लिए कह गये। वाट्सका गोल-मटोल गवदा-सा चेहरा देखकर नवावने समझ लिया था कि वाट्स लगता है कि एक निरीह, सीधा-सादा, अच्छा आदमी है। उम्रमें नवाव अभी विल्कुल वच्चे थे। किसीका वाहरी चेहरा ही उसका असली रूप

नहीं है, नवाव तव तक भी यह सीख नहीं पाये थे। यही वाट्स नवावके दरवारसे नवावके घरकी सव वात जान, राजधानीमें क्या हो रहा है, क्या नहीं, इसका पूरा-पूरा लेखा-जोखा विना किसी त्रुटिके कलकत्ता लिख भेजते-यह काम और जिसका भी हो लेकिन किसी सीधे-सादे, अच्छे आदमीका तो किसी भी प्रकार नहीं था।

: ३२ :

नवावके साथ सन्धि होते-न-होते अंग्रेज़ वहुत चिन्तामें पड़ गये। मद्रास-से खवर आई कि यूरोपमें सचमुचमें फ्रांस और इंगलैंडके साथ लड़ाई छिड़ गई है।

खवर भेजनेके साथ ही मद्रासके गवर्नरने सेलेक्ट कमिटीके पास लिखा कि उनका अनुरोध हैं कि अभी ही कलकत्तेके अंग्रेज़ फ्रांसीसियोंके चन्दन-नगरको दखल कर लें। क्लाइवको इसमें कोई भी आपत्ति नहीं थी। लेकिन एडमिरल वाट्सनको लेकर झंझट हुआ। उन्होंने एक आपत्ति की कि नवावने तो अभी भी सन्धिकी कोई शर्त तोड़ी नहीं है। तव कैसे विना उनकी अनुमतिके उनके राज्यके भीतर चन्दननगरपर आक्रमण किया जाय ?

इसके पहले अब्दालीके भयसे नवावने एक असतर्कताके क्षणमें अंग्रेज़ों-के पास लिखा था, जो मेरे शत्रु हैं, वे तुम्हारे भी शत्रु हैं। और जो तुम्हारे मित्र नहीं हैं, वे हमारे भी मित्र नहीं हैं। क्लाइवने वाट्सनको समझाया कि तव यही कहकर नवावसे अनुमति माँगी जाय, फ्रांसीसी तो अभी हम लोगोंके शत्रु हैं, इसलिए इस समय वे नवाबके भी शत्रु हुए।

सेलेक्ट कमिटीके वड़े-वड़े मेम्वर और स्वयं क्लाइव भी इस नाककी सीधमें चलनेवाले एडमिरलसे थोड़ा डरकर ही चलते। इसलिए और छेड़-छाड़ करनेका साहस उन लोगोंने नहीं किया। अगर वे विगड़ खड़े हों और अपने जहाज़ोंको लेकर चल दें, तो फिर कुछ कहनेको नहीं रहेगा। एड-

मिरल चार्ल्स वाट्सन तो कम्पनीके तावेदार नहीं हैं। उनकी इच्छा अनिच्छा-का सम्पूर्ण भार उन्हींके ऊपर है। उनकी वातको मानकर क्लाइव चन्दन-नगरपर आक्रमण करनेके लिए नवावकी अनुमति मँगानेके उद्देश्यसे उन्हें दिखा-दिखाकर वारवार चिट्ठी लिखने लगे।

लेकिन केवल चिट्ठी-पत्री लिखकर समय नष्ट करनेवाले आदमी रावर्ट क्लाइव नहीं थे। उस समय नन्दकुमार राय—बादके महाराजा नन्दकुमार—हुगलीके फ़ौजदार थे। उमीचन्दकी मध्यस्थतामें क्लाइवने नन्दकुमारके साथ एक व्यवस्था कर ली। उपयुक्त परिमाणमें दक्षिणा देनेसे ठीक हो गया कि क्लाइव जव अपनी फ़ौज देकर चन्दननगरकी ओर आयेंगे, तव फौजदार नन्दकुमार हुगलीकी मुग़ल फ़ौजको चालाकीसे अन्यत्र हटा रखेंगे। तव क्लाइव चन्दननगरमें विना किसी बाधाके जो खुशी कर सकेंगे।

प्रतिदिन इसी समय सीधे-सादे बेचारे वाट्स मुर्शिदाबादसे चिट्ठीपर-चिट्ठी भेजकर सेलेक्ट कमिटीका पारा चढ़ाने लगे। उन्होंने लिखा, नवावसे किसी प्रकारकी अनुमति माँगना बेकार है। वे आज इस ओर चल रहे हैं, कल उस ओर। उनकी किसी बातका ही कोई ठिकाना नहीं है। फिर उन्होंने लिखा कि दक्षिणमें फ्रान्सीसी जेनरल बुसीको नवाबने फिर पत्र लिखा है कि जिसमें वे और देरी न कर बंगालमें आ उपस्थित हों। जेनरल बुसी दक्षिणसे बस आ ही चले हैं।

खबर सुनकर एडमिरल वाट्सन भी कुछ विचलित हो गये। तो भी अपनी ज़िदपर अड़े उन्होंने स्वयं नवावको एक चिट्ठी लिखी। उसमें उन्होंने लिखा कि आप अगर अपनी बात न रखें और इंगलैण्डके शत्रु फ्रान्सी-सियोंके विरुद्ध अपने मित्र पक्षके अंग्रेज़ोंकी सहायता न करें, तो आप जान रखें कि आपके राज्यमें एक ऐसी आग लगा दूँगा कि उस आगको गंगाका सब पानी उँडेलकर भी आप बुझा नहीं सकेंगे। और कृपा करके यह भी याद रखिएगा कि यह बात एक ऐसे आदमीके मुँहसे निकल रही है कि जिसकी एक बात भी आजतक अन्यथा नहीं हुई है।

सब विचार-वितर्ककी मीमांसा १२ मार्चको हो गई। कलकत्तेमें नवाबकी चिट्ठी आ गई। उन्होंने लिखा था, सिर्फ़ कई दिन हुए कि मेरे राज्यमें अशान्तिकी आग बुझी है। देशमें फिर लड़ाईकी आग नहीं जलाने दे सकता। उस समयमें अहमदशाह अब्दाली दिल्ली लूटकर अपने देशमें लौटनेकी बात सोच रहे हैं, यह खबर मुर्शिदाबादमें पहुँच गई थी। इस समय उनके बंगालमें आनेकी कोई सम्भावना नहीं है। अतएव नवाब सिराजुद्दौलाकी चिट्ठी कुछ नरम-कड़ी जैसी होगी ही।

नवाबकी चिट्ठी पढ़कर सेलेक्ट कमिटीने उसी समय एडमिरल वाट्सनसे अनुरोध कर भेजा कि एडमिरल साहब जिसमें इंगलैण्डके राजाके नाममें अपनी नौवाहिनी लेकर इंगलैण्डके शत्रु फ्रान्सीसियोंके विरुद्ध अभी अभियान कर दें। वाट्सनने उत्तर दिया कि जिस क्षण पाइलट बतलायेगा कि जहाज़ चलेगा, उसी क्षण वे चन्दननगरकी ओर रवाना हो जायेंगे।

उधर वाट्सनकी प्रतीक्षा किये बिना उसी दिन बरानगरसे डेरा-डण्डा उठाकर फ़ौजके साथ गंगा पार कर क्लाइवने मार्च शुरू कर दिया। एकदम चन्दननगरके पास ही गोरिटी बाग़में जाकर खेमा गाड़ दिया १२ मार्च सन् १७५७ ई०। हुगलीके फौजदार नन्दकुमार सब जान-सुनकर भी चुप रहे।

दूसरे दिन क्लाइवने चन्दननगरके गवर्नर पियर रेनो साहबको अंग्रेजोंके हाथमें फ़्रान्सीसी-क़िला छोड़ देनेके लिए हुक्म भेजा। रेनो साहबने कोई जवाब नहीं दिया। यद्यपि उनके पास न आदमी हैं, न रुपया-पैसा है और न रसद आदि है, फिर भी अंग्रेज़ोंके साथ बिना एक बार लड़े क़िला न छोड़ेंगे, ऐसा उन्होंने स्थिर किया।

अपनी फ़ौज लेकर चन्दननगर शहरके दक्षिण-पूर्वी हिस्सेको क्लाइवने घेर लिया। चन्दननगर फोर्टके ऊपर उन्होंने ही पहले गोला-गोली चलाई। लेकिन अधिक गोली-बारूद नष्ट नहीं किया। क्योंकि वे जानते थे कि असली लड़ाई गंगाके ऊपरसे ही होगी। उसके लिए एडमिरल वाट्सन

पहुँचना ही चाहते हैं। जबतक वे नहीं आ जाते हैं, तबतक क्लाइवका काम युद्धकी भूमिकाको ठीक कर रखना है।

कासिमबाज़ार कोठीके फ्रान्सीसी अध्यक्ष ल-साहबके अनुरोधपर मुर्शिदाबादमें बैठे हुए नवाब सिराजुद्दौला फ्रान्सीसीकी सहायताके लिए वहाँसे आदमी भेजनेका उपाय कर रहे थे। दुर्लभराम, मानिकचन्द, मोहनलाल सबको तैयार रहनेके लिए कह दिया। लेकिन चन्दननगर फोर्ट-के ऊपर क्लाइवका पहला गोला पड़ते ही नन्दकुमारने नवाबके पास खबर भेज दी कि फ्रान्सीसी क़िला फतह हो गया। नवाबके आदेशसे हुगलीसे प्रायः दो हज़ार मुग़ल फ़ौजने चन्दननगरमें अंग्रेज़ोंके विपक्षमें लड़ाई करनेके लिए फ्रान्सीसियोंका साथ दिया था। वे भी इस पहले आक्रमणमें ही फ्रान्सीसियोंको छोड़कर निकल भागे।

नन्दकुमारकी चिट्ठी पाकर नवाबने सोचा कि अब और आदमी भेजना बेकार है। बहुत कुछ समझानेपर भी ल-साहब सिराजुद्दौलासे किसी प्रकार भी कुछ भी नहीं करा सके। फ्रांसीसी लोग बिलकुल अकेले पड़ गये। कूटनीतिज्ञ नन्दकुमारने एक ही चालमें अंग्रेज़ोंका काम बहुत दूर तक आगे बढ़ा दिया। उससे साँप भी मरा और लाठी भी न टूटी।

१५ मार्च। वाट्सनके तीन युद्धके जहाज़—केण्ट, टाइगर और सल्सबेरी—एक-एककर चन्दननगरके उस पार कौगाछीमें जमा होने लगे। क्लाइव देशी चरित्र जितना अच्छी तरह समझते थे, ठीक उसी प्रकारसे फ्रांसीसी चरित्र भी उनका जाना हुआ था। वे अच्छी तरह जानते थे कि अब फ्रेंच लोग आपसमें ही मान-अभिमान शुरू कर झगड़ेंगे और काम नष्ट करेंगे। इसी मौक़ेपर उन्होंने चारों ओर प्रचार कर दिया कि जो कोई भी फ्रेंच अपना दल छोड़कर अंग्रेज़ोंकी ओर आयगा उसे अंग्रेज़ क्षमा तो कर ही देंगे, इसके अलावा उसके लिए यथोचित पुरस्कारकी भी व्यवस्था है।

यह सुनकर फ्रांसीसियोंके गोलन्दाज-फ़ौजके सर्दार लेफ्टिनेण्ट सेंजार तेरानो फ्रांसीसियोंको छोड़कर अंग्रेज़ोंके दलमें मिल गये। तेरानोंके अंग्रेज़ों-

की ओर चले जानेसे फ्रांसीसियोंकी गोलन्दाज फ़ौज प्रायः अन्धी हो गई। अंग्रेज़ोंको अवश्य ही ख़ूब सुविधा हुई।

अंग्रेज़ोंके जहाज़ जिसमें उस पारसे आकर इस पार चन्दननगरमें सहज ही पहुँचने न पावें, इसके लिए फ्रांसीसियोंने अपने शहरके सामनेके भागकी गंगाको घेरकर उसके ऊपर पंक्तिको पंक्ति देशी डोंगियोंको उलटा कर चेनसे बाँध और रस्सीसे बाय (buoy) के साथ अटका रखी थीं। इस व्यवस्थासे अंग्रेज़ोंके बड़े-बड़े जहाज़ोंको उस ओर बढ़नेमें बाधा होगी। केवल एक गुप्तमार्ग खुला रखा गया था कि अपने लिए ज़रूरत पड़नेपर केवल फ्रांसीसी लोग ही उस रास्तेसे गंगामें आ जा सकें। तेरानोंने अंग्रेज़ोंको वह पथ दिखला दिया।

२२ मार्चके भीतर वाट्सनके अन्य सभी जहाज़ चन्दननगरके उस पार आ पहुँचे। साथ-ही-साथ एडमिरल पोकक अपना एक जहाज़ लेकर दक्षिण भारतसे वहाँ आ पहुँचे। मद्राससे कलकत्ते आकर उन्होंने सुना था कि वाट्सन चन्दननगरकी ओर गये हैं। वे भी और कहीं नहीं रुक सीधे वाट्सनके पीछे पहुँचे।

२३ मार्च। सवेरेसे पूर्व-दक्षिणकी ओरके स्थलमार्गसे क्लाइवने चन्दन-नगरपर आक्रमण किया। उस ओर गंगाके ऊपरके जलमार्गसे अंग्रेज़ोंके युद्धके जहाज़ोंसे एक साथ ही एकसौ तोपें क्षण-क्षणपर गरज उठतीं। दो घण्टे तक भीषण गोलाबारी हुई। और कैसे-कैसे भयंकर गोले थे वे! उसके सामने खड़े होनेकी हिम्मत किसमें थी? साढ़े नौ बजेके भीतर ही फ्रेन्च गवर्नर रेनोने शान्तिका उजला झण्डा फहरा दिया। चन्दननगरका युद्ध यहीं समाप्त हुआ।

: ३३ :

आग लग गई। इस आगको बुझते बहुत दिन लगे। सन् ईसवीकी अट्ठारहवीं शताब्दीका बाक़ी समय भी उसके लिए पर्याप्त नहीं हुआ;

उन्नीसवीं शताब्दीके भी प्रथम दस वर्ष बीत गये। पलासीका युद्ध उसीके बीचकी एक घटना मात्र है।

क्लाइवमें यह बड़ा गुण था कि वे दूर-द्रष्टा थे। कलकत्तेमें उतर ज़रा-सा हीमें उन्होंने समझ लिया था कि कलकत्ता वापिस पानेपर भी उनका काम वहीं खतम नहीं होगा। अब फ्रांसीसियोंको हराकर उन्होंने समझा कि उनका काम अभी शुरू हुआ।

चन्दननगरकी ओर जानेके पहले ही क्लाइव सेलेक्ट कमिटीसे स्पष्ट रूपमें कह गये थे कि जब चन्दननगरको ले लेना निश्चित हुआ है तो ओर वहीं रुकनेसे नहीं चलेगा। ओर बहुत दूर तक आगे बढ़ना होगा। चन्दन-नगरके हाथमें आते ही क्लाइवने सेलेक्ट कमिटीको फिर लिखा कि बिना नवाबकी अनुमतिके यहाँ तक कि उनकी इच्छाके विरुद्ध ही केवल बल प्रयोगसे हम लोगोंने चन्दननगरको ले लिया। अब नवाब भी बल प्रयोगसे हम लोगोंको भगानेके लिए यथाशक्ति चेष्टा करेंगे। तब जो शुभ कार्य एक बार शुरू हो गया है, उसको लापरवाहीसे मिट्टी होने देना किसी भी प्रकारसे बुद्धिमानीका काम नहीं होगा।

उस ओर नवाब सिराजुद्दौला क्या करेंगे, यह किसी भी तरहसे निश्चय नहीं कर पा रहे थे। एक तो लड़कपनसे ही वे अत्यन्त अस्थिर चित्तके थे और उसके ऊपर असंयमके फलस्वरूप ज़रा भी उनके मनका ज़ोर नहीं था। इसके अलावा अपने विशिष्ट सामन्तों, देशके जमींदारों, खानदानी अमीर-उमरावों तथा सरकारी कर्मचारियों आदि सभीको अपने दुर्व्यवहार-के कारण अत्यन्त ही नाराज कर रखा था। इस समय किसीपर भी वे पूरी तरह विश्वास नहीं कर पा रहे थे। इसलिए एक बार सोचते कि अंग्रेज़ोंके साथ मित्रता कर उन्हें ही बुलायें और फिर दूसरे ही क्षण सोचते कि फ्रेंच लोग ही हमारे मित्र हैं, उन्हींके ऊपर निर्भर करूँ। असमंजसमें पड़कर आखिर तक किसीकी भी कोई भी व्यवस्था नहीं हुई।

दूरसे ही नवाबके मनको स्थिर कर देनेका भार क्लाइवने लिया।

वाट्सनके मार्फ़त अदृश्यमें उन्होंने नवावके साथ एक ऐसी लड़ाई चलाई, जिसका नाम शीत युद्ध है अर्थात् आजकलकी सुपरिचित भाषामें कोल्ड-वार। इसमें अस्त्र-शस्त्रका प्रयोजन नहीं, सैन्य सामन्तकी भी ज़रूरत नहीं। इसकी क्रिया शरीरके ऊपर नहीं होती, मनके ऊपर होती है। केवल भय दिखाने और भयभीत कर देनेकी विद्या जानी हुई होनेपर यह युद्ध अच्छी तरहसे ही चलाया जा सकता है। असलमें मनुष्यकी स्नायुओंपर सूक्ष्म भावसे इसका प्रभाव होता है, इसलिए इसका एक और नाम स्नायविक युद्ध दिया जा सकता है। अंग्रेज़ीमें इसका और भी अच्छा नाम है—वार आफ नर्वस।

वाट्सके ज़रिये क्लाइव नित्यप्रति नवावको तंग करने लगे। नवाव सन्धिकी इन शर्तोंको मान रहे हैं, इन-इन शर्तोंको तोड़ रहे हैं, यह नहीं किया, वह नहीं किया, रोज़-रोज़ नये-नये अभियोग उपस्थित करने लगे। वाट्स अव वह वाट्स नहीं थे। फ्रांसीसियोंको हराकर अंग्रेज़ोंके चन्दननगर ले-लेनेपर वे एकदम दुष्टताके अवतार हो गये। अत्यन्त उत्साहके साथ वे नवावके पीछे पड़ गये। रोज एक-एक नया-नया अनुचित दावा उपस्थित करने लगे। हर्जानेका रुपया दो, गोला-गोली वापस करो, कम्पनी-के कर्मचारियोंके खाये हुए माल-असवावका दाम चुका दो आदि कितने प्रकारके दावोंका व्यौरेवार चिट्ठा।

लेकिन वहुत खींचातानीसे जिसमें रस्सी टूट न जाय, उस ओर भी क्लाइवकी सतक दृष्टि थी। नवावको ठण्डा करनेके लिए वीच-वीचमें खूव विनम्रता भी दिखलाते। क्लाइवने नवावको पत्र लिखा, आपकी मित्रता ही हम लोगोंकी एकमात्र काम्य वस्तु है। ठीक मानिएगा, कि आपके अनुग्रहको हमलोग अत्यन्त मूल्यवान् समझते हैं। लेकिन हालमें आपकी ओरसे इस अनु-ग्रहका परिचय कुछ कम मिला। इससे मैं अत्यधिक चिन्तित हो उठा हूँ।

कुछ ही वाद क्लाइवने फिर नवावको लिखा कि आपके प्रति हमलोगों-का मनोभाव ठीक पहलेकी तरह ही है। हम लोगोंके वीच सन्धि होनेके

पहले जो कुछ भी हुआ था, वह सब हम लोग भूल गये हैं। अब हम लोगों-का मन बिल्कुल साफ़ है, आपके प्रति बिल्कुल सद्भावसे भरा हुआ है। पर अगर अन्ततक हम लोगोंमें प्रीतिका कोई लक्षण न देख पायँ, तब समझ लीजिएगा कि हम लोगोंके ऊपर आपकी कृपाके अभावसे ही वैसा हुआ है। चिरकालसे ही अंग्रेज़ोंका एक हाथ गलेपर और एक हाथ पैरपर रहता है, गला दबानेमें जितना समय और फिर पैर पकड़नेमें भी उतना ही समय लगता है।

इसके बाद क्लाइवके उकसानेसे वाट्सन फिर नवाबके कानमें वही पुरानी एक ही बात सुनाने लगे, फ्रेंच हम लोगोंके शत्रु हैं, इसलिए आपके भी शत्रु हैं। हम लोग नवाबके मित्र हैं, अतएव हम लोगोंके शत्रु फ्रांसीसी लोग किसी तरह भी नवाबके मित्र नहीं हो सकते। इसलिए फ्रांसीसियों-को बंगालसे बिना देरी किये उच्छेद कर देना नवाबका परम कर्त्तव्य है। कासिम बाज़ारकी उनकी कोठीको अभी ही दखल कर लेना उचित है। वाट्स हरदम सीखे हुए तोतेकी तरह रट लगाने लगे।

उस समय भी कासिम बाज़ारकी फ्रांसीसी कोठीके सर्दार ल-साहब थे। वे सचमुचमें ही नवाबके हितैषी मित्र थे। लेकिन वाट्सके खोंचा मारनेसे सिराजुद्दौला उन्हें भी मौक़े-बेमौक़े सन्देह करने लगे। ल-साहब कामके आदमी थे। क्लाइवने देखा नवाबके निकटसे लको नहीं हटा सकनेपर वे बादमें अंग्रेज़ोंको बहुत कष्ट देंगे। क्लाइव, वाट्सनके द्वारा नवाबके प्रिय-पात्रोंको रुपया देकर हाथ करनेकी चेष्टा करने लगे; जिसमें कि वे भी फ्रेंचों-के विरुद्ध नवाबके कानमें फूँकते रहें। लने स्वयं भी उसी प्रकारका रास्ता पकड़ा था। लेकिन पार कैसे पाएँगे? अंग्रेज़ोंके समान फ्रांसीसियोंको रुपये का बल कहाँ है?

दोनों ओरके खिंचावमें पड़कर नवाब बराबर इतस्ततः करने लगे। अन्तमें क्लाइवको ही विजय हुई। एक ओर नवाबके जैसा अशिक्षित, अविवेकी तथा कुकर्ममें आसक्त युवक और दूसरी ओर क्लाइवके जैसा

धुरन्धर घाघ जो किसी तरह हार नहीं मानता, किसी तरह पीछे पैर नहीं हटाता। और इस पर अत्याचार, अनाचार, असंयमसे नवावके स्थूल, सूक्ष्म दोनों ही शरीर विल्कुल जर्जरित हो गये है। वे और कितनी देर तक जूझते?

लको अन्तमें जाना ही पड़ा। १८वीं अप्रैलको कासिम वाज़ारकी कोठी को छोड़कर ल-साहव पटना-कोठीको चले। जानेके पहले विदा होते समय सिराजुद्दौलासे कहते गये कि मित्र! यह अन्तिम विदा है और कभी हम दोनोंकी भेंट होगी, इसमें सन्देह है। भेंट हुई भी नहीं।

आनन्दसे अधीर होकर वाट्सनने एक दिनमें ही दस चिट्ठियाँ लिखकर कलकत्तेमें सवको खवर भेज दी। एकके वाद एक शत्रु जा रहे हैं।

: ३४ :

घटनाएँ क्रमशः खूव पेचीदा हो उठीं। समस्या जटिल होनेपर ही क्लाइवकी वुद्धि और तीव्र हो उठती है। अन्दाजसे क्लाइव खूव अच्छी तरह समझ रहे थे कि गुप्त रूपसे सिराजुद्दौलाके विरुद्ध एक जवर्दस्त षड्यन्त्र चल रहा है। सवके लिए नवाव सिराजुद्दौला एकदम असह्य हो गये हैं। इसलिए वहुतोंकी दृष्टि अंग्रेज़ोंकी ओर गई है। इस नवावके हाथसे उन्हें अगर कोई बचा सकता है तो वह वही कर्नल क्लाइव वहादुर हैं। और तो कोई कहीं दीख ही नहीं पड़ता। फ्रेंच लोग चले गये हैं, इस समय एकमात्र आशाके केन्द्र अंग्रेज़ लोग हैं।

क्लाइवके इसे मज़वूत करनेपर भी षड्यन्त्र असलमें हिन्दुओंका ही षड्यन्त्र था। पश्चिमी वंगालमें उस समय वीरभूमिको छोड़कर और सभी वड़े-वड़े परगनोंमें हिन्दू जमींदार ही थे। सिराजुद्दौलाके मारे उनके नाकों दम था। प्रकट रूपमें नहीं होनेपर भी भीतर-भीतर प्रायः सभी जमींदार इस षड्यन्त्रमें शामिल थे। उनमें प्रधान नदियाके राजा कृष्णचन्द्रराय थे।

वर्द्धमानके राजाके वाद इज्ज़त-धनमें कृष्णनगरके राजा कृष्णचन्द्रका ही नाम था। वे अत्यन्त ही गुणग्राही थे। उस समयके लोग कहते हैं कि वंगालमें जो ब्राह्मण कृष्णचन्द्रकी दी हुई ज़मीन अथवा वृत्तिका भोग नहीं किये हुए हैं, वह ब्राह्मण ही नहीं हैं।

जगत सेठके घरानेके मालिक महतावचन्द वंगालके महाजनोंके सिर-मौर थे। जगत सेठ आदि जैन सम्प्रदायके होनेपर भी वहुत दिनों तक पुश्त-दर-पुश्त वंगालमें रहनेसे वे एक प्रकारसे हिन्दू समाजमें ही अन्तर्भुक्त हो गये थे। सिराजुद्दौलाके हाथों महतावचन्दको रोज़ ही कुछ न कुछ अपमान सहना पड़ता। उनको नाना प्रकारसे अपमानित करनेपर भी सिराजुद्दौला शान्त नहीं होते थे। उस दिन उनको पकड़कर मुसलमानी रीति-रिवाजके अनुसार सुन्नत करानेके लिए ले गये थे। अपने वकील रणजीतरायके मार्फत गुप्त रूपसे वही अंग्रेज़ोंसे वात चलाने लगे। अंग्रेज़ोंकी ओर उमी-चन्द थे। इस समय उमीचन्द अधिक समय मुर्शिदावादमें ही रहते। नवावके साथ भी उन्होंने अच्छी दोस्ती गाँठ ली थी। रुपया कमाकर उमीचन्दकी इच्छा इस वार पालिटिक्समें नाम कमानेकी थी। इसलिए पालिटिक्सके गुप्त मार्गपर उन्होंने आना-जाना शुरू कर दिया। लेकिन वादमें कहीं लोगों-को सन्देह न हो, इसलिए वाहर व्यवसायीका वेष भी उन्होंने एकदम उतार नहीं फेंका।

हिन्दू सरकारी कर्मचारियोंमें इस दलके अगुआ हुए राय दुर्लभराम। सिराजुद्दौलाके शासनकालमें वे अपने ऊँचे पदसे वहुत नीचे उतार दिये गये थे, लेकिन उस समय भी वे नवावका नमक खाते थे। सिराजुद्दौलाके दरवारमें उस समय काश्मीरी हिन्दू मोहनलालकी खूब इज्ज़त थी। वे अवश्य ही इस ओर शामिल नहीं हुए। लेकिन कम उम्रके छोकरे इस विदेशी मोहनलालकी मुसाहिवी सभी पुराने कर्मचारियोंको असह्य हो उठी थी, चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान।

हुगलीमें नन्दकुमार थे। अंग्रेज़ोंका होकर उमीचन्दने उन्हें वहुत

रुपयेका लोभ दिखा रखा था। अंग्रेज़ोंकी गतिविधिके सम्वन्धमें जितनी सब अविश्वसनीय खवरोंको नवावके दरवारमें भेजनेका भार नन्दकुमारने लिया।

प्रधानत: हिन्दुओंका षड्यन्त्र होनेपर भी कमसे कम एक वड़ा-सा मुसलमान भी तो चाहिए। नहीं तो सिराजुद्दौलाके स्थानपर नवाब कौन होगा? क्लाइव स्वयं तो हो नहीं सकते। हिन्दू गवर्नर भी सब लोग पसन्द करेंगे इसमें सन्देह है। अकवर वादशाहके शासनमें मानसिंह जो एक वार बंगालके गवर्नर होकर आये थे, उसके वाद और कोई हिन्दू बंगालके गवर्नर हुए, ऐसा नहीं देखा जाता। दिल्लीके वादशाह किसी हिन्दूको वंगालकी गवर्नरीका पर्वाना देंगे, ऐसा तो किसीका विश्वास नहीं होता। इसलिए नवावी गद्दी लेनेके लिए एक मुसलमानको तो जुटाना ही होगा।

जगत सेठ आदिने अपने ही आश्रित इयार लुत्फ़ खाँको सिराजुद्दौलाकी जगह बंगालकी गद्दीपर वैठानेका मनमें निश्चय किया था। उमीचन्द भी सहमत थे। लेकिन क्लाइवने अन्य प्रकारसे निश्चित किया। वे ऐसे आदमीको नवाव वनाना चाहते थे, जो अंग्रेज़के अधीन रह उन्हींकी वात मानकर चलेंगे। अवश्य ही मनकी वात उन्होंने मनमें ही रख दी। प्रकट रूपसे वोले, ऐसे आदमीका नवाव होना उचित है, जिसको सब लोग मानें। इयार लुत्फ़ कामके आदमी होनेपर भी खानदानी नहीं हैं। उनके नवाव होनेपर फिर नवावी-पदके लिए लड़ाई छिड़ जायगी। अन्तमें जगत सेठने भी क्लाइवकी वातको युक्तिसंगत समझकर मान लिया।

क्लाइवने मन ही मन मीर जाफरको वंगालका भावी नवावी-पदके लिए मनोनीत कर रखा था। उन्होंने मीर जाफरको उस समय तक भी आँखोंसे देखा नहीं था, केवल वाट्सका विवरण पढ़कर ही उन्होंने तय किया था। विचित्र वुद्धि थी। उन्होंने अंग्रेज़ोंके पक्षके लिए उपयुक्त व्यक्तिको ही चुना।

मीर जाफर सिराजुद्दौलाके रिश्तेदार थे। अलीवर्दी खाँकी एक सौतेली

बहनके साथ उनका विवाह हुआ था। मीर जाफर चिरकालसे विश्वास-घाती थे। बंगालका नवाब होनेकी उनकी कामना बहुत दिनोंकी थी। बर्गियोंके उपद्रवके समय अलीवर्दीका खून कर बंगालकी गद्दी लेनेकी चेष्टा भी उन्होंने एक बार की थी। लेकिन अन्त तक सफल नहीं हुए। इसके बाद शौक़त जंगसे मिलकर सिराजुद्दौलाके भी सर्वनाशकी कोशिशमें वे थे। इस बार फिर बंगालकी नवाबीके पदके लोभसे सिराजुद्दौलाके विरुद्ध चरम विश्वासघात करनेके लिए राज़ी हो गये। परिणामकी अच्छी तरहसे विवेचना किये बिना ही अंग्रेज़ोंने जो-जो शर्तें दीं, उन सभीको मीर जाफरने कुबूल कर लिया। राज्य-पद ऐसी ही लोभकी वस्तु है।

मीर जाफरको अपने भी बहुतसे सैनिक थे। अवसर आते ही वे नवाबको छोड़ प्रकट रूपसे क्लाइवके साथ होकर सिराजुद्दौलाके विरुद्ध युद्ध करेंगे यही तै हुआ। इसके अलावा उस समय यद्यपि मीर जाफर नवाबी फ़ौजके बख्शी नहीं थे—सिराजुद्दौलाने उन्हें उस पदसे हटा दिया था—फिर भी सरकारी फ़ौजके ऊपर उनका प्रभाव उस समय भी कुछ कम नहीं था।

जब सब प्रायः ठीक हो गया तब उमीचन्दने झंझट पैदा किया। उनके साथ मीर जाफरका मेल नहीं था। उन्होंने सोचा कि मीर जाफरके नवाब होनेपर उनके हाथसे वे एक पैसा भी निकाल नहीं सकेंगे। राज-काजमें भी उन्हें कोई सुविधा नहीं मिल सकेगी, उसमें उनका कोई हाथ ही नहीं रहेगा। उनका सारा परिश्रम ही व्यर्थ जायगा। इयार लुत्फ़ खांके नवाब होनेसे उन्हें दो पैसेकी प्राप्तिकी बड़ी आशा है। पालिटिक्समें बड़ा एक कुछ होनेकी भी उम्मीद है।

पहले अपने हिस्सेका पक्का बन्दोबस्त कर लेनेके लिए उमीचन्दने अंग्रेज़ोंको सूचित किया कि सिराजुद्दौलाकी जो धन-राशि अंग्रेज़ोंके हाथमें आयेगी, उससे उनको सैकड़े पाँच रुपया अथवा एक मुश्त तीस लाख रुपया देना होगा। नहीं तो षड्यन्त्रकी बात वे नवाबके पास खोल देंगे।

उमीचन्दको मालूम नहीं था कि वे किससे लगने गये हैं। शठतामें क्लाइव उन्हें सात जन्मतक शिक्षा दे सकते थे। क्लाइवने पहले तो ऐसा दिखलाया कि उमीचन्दके प्रस्तावसे वे बिल्कुल असहमत हैं। तुरन्त सम्मत हो जानेपर बादमें कहीं उमीचन्दको सन्देह न हो जाय, इसीलिए क्लाइवने पहले उनकी बातोंपर ध्यान नहीं दिया। इसके बाद दरदस्तूर करनेका थोड़ा स्वाँग भरनेके बाद क्लाइव तीस लाखके बदले उमीचन्दको एक मुश्त बीस लाख रुपये देनेको राज़ी हो गये।

क्लाइवने दो शर्तनामे बना डाले। एक असली और दूसरा जाली। पहचानके लिए एक सफ़ेद काग़ज़पर लिखा हुआ था और दूसरा लाल काग़ज़पर। लाल काग़ज़पर उमीचन्दके हिस्सेमें लूटके मालका अंश बीस लाख रुपये और सफ़ेद काग़ज़पर उनके हिस्सेमें बिलकुल शून्य, उनका नाम-निशानतक नहीं था।

दोनों शर्तनामोंपर अंग्रेजोंकी ओरसे दस्तखत किया गया और सील-मुहर लगाया गया। मीर जाफरने पहले हीसे लाल काग़ज़पर ब्लैक दस्त-खत कर दिया था। लेकिन एडमिरल वाट्सन जाली काग़ज़पर दस्तखत करनेके लिए राज़ी नहीं हुए। तब क्लाइवने हेनरी लार्सिगटन नामक एक छोकरा केरानीसे लाल काग़ज़पर वाट्सनके नामका जाल करा लिया। बेचारा लार्सिगटन कालकोठरीसे बच गया था, लेकिन बादमें सन् १७६३ ई०में मीर कासिमके पटनाके हत्याकाण्डमें उसने प्राण गँवाये।

लाल काग़ज़ पढ़कर उमीचन्द ख़ुशीसे फूले नहीं समा रहे थे। वे कल्पनाकी उमंगमें सात राजाकी सम्पत्ति, हीरा जवाहर आदिका स्वप्न देखने लगे।

इसके बाद मीर जाफरका दस्तखत करा लेनेके लिए सफ़ेद काग़ज़ कासिम बाज़ारमें वाट्सके पास भेजा गया। ४ जूनको एक ढकी हुई डोली-में बैठकर जनानी सवारीके रूपमें वाट्स गुप्त रूपसे मीर जाफरके अन्तः-पुरमें जा उनसे भेंट कर उनका दस्तखत करा लाये। वाट्सका भेजा हुआ

शर्तनामा कलकत्तेकी सेलेक्ट कमिटी ११ जूनको पा गई। उधर और कुछ वाक़ी नहीं रहा।

शर्तनामेमें वहुत कुछ लिखा हुआ था। उसका सारांश यही था कि मीर जाफरको वंगालकी गद्दीपर शिखण्डीकी तरह वैठाकर अंग्रेज़ ही असलमें राज्य चलायेंगे और नवावकी गद्दीके वदले राज्य चलानेका अंग्रेज़ों-का खर्च नवाव मीर जाफर खाँ जुटायेंगे। वहुत तरहके डिवीजन आफ लेवरकी वात इकनामिक्सकी कितावोंमें पढ़नेको मिलती हैं लेकिन इस प्रकारकी हिस्सेदारीकी वात तो कहीं भी देखनेको नहीं मिलती।

षड्यन्त्रकी वात विस्तारसे नहीं जाननेपर भी गुप्त रूपसे उसकी चर्चा चल रही थी, उसकी भनक सिराजुद्दौलाके कानोंमें भी अवश्य पड़ी। लेकिन दूसरी कोई व्यवस्था न कर सकनेपर क्रुद्ध होकर उन्होंने अंग्रेज़ोंके देशी वकीलको दरवारसे अपमानित कर निकाल दिया। अंग्रेज़ोंको डरानेके लिए फ़ौजकी एक टुकड़ी दुर्लभरामके साथ पलासीके मैदानमें भेज दी। १२ जून को इस खवरके वरानगर पहुँचते ही क्लाइवने हुक्म दिया, स्ट्राइक दि टेण्ट। दूसरे दिन गंगा पार कर मुर्शिदावादकी ओर मार्च शुरू हो गया।

सेलेक्ट कमेटीने वाट्सको लिख दिया कि समय रहते कासिम वाजार-की अंग्रेज़ी कोठीके सभी अंग्रेज़ जिसमें कलकत्ता चले आवें। कलकत्तेमें जो फ़ौज थी, उसे ही सेलेक्ट कमिटीने क्लाइवकी सहायताके लिए मेज़र क्लिपैट्रिकके साथ रवाना कर दी। उन लोगोंको चन्दननगर तक पहुँचा आनेके लिए एडमिरल वाट्सनने एक जहाज़ छोड़ दिया।

इसके पहले ही कासिमबाजारके अंग्रेज़ोंने एक-दो करके कलकत्ते भागना शुरू कर दिया था। वाक़ी रह गये थे केवल वाट्स और उनके साथी मैथ्यू क्लेट और पर्सी साइक्स। इसके पहले लुक स्क्रफ्टन भागते समय उमीचन्दको साथ लेते गये। जिसमें वादमें मुर्शिदावादमें और कुछ गड़वड़ी न करे।

नवावके दरवारमें जाकर वाट्सने वतलाया कि वे शिकार खेलने

मादीपुर जा रहे हैं। मांदीपुरमें अंग्रेज़ोंकी एक बागानवाड़ी (उद्यान-गृह) थी। बीच-बीचमें कासिमबाज़ारके अंग्रेज़ वहाँ जाकर आमोद-प्रमोद करते, शिकार खेलते। सिराजुद्दौला कुछ भी सन्देह नहीं कर सके। वाट्सकी विनम्रतासे सन्तुष्ट होकर उन्होंने जानेकी अनुमति दी। लेकिन क्या शिकार खेलना था, इसका बिन्दुमात्र भी अन्दाज़ सिराजुद्दौला न लगा सके।

खुले मैदानमें आ वाट्स और उसके साथियोंने सईसोंको विदा कर दिया। एक नौकरको साथ ले घोड़ा दौड़ा वे अग्रद्वीपके पास आ पहुँचे। वहाँपर नौकरके हाथमें घोड़ा छोड़ एकदम नावमें जा बैठे। गंगा पार कर १४ जनको वे कालना आ गये। वहाँ आकर उन लोगोंने देखा कि क्लाइव अपना दल बल लेकर पहले ही वहाँ पहुँच चुके हैं। वाट्स वग़ैरह क्लाइव-के पास ही रह गये। फिर कलकत्ता नहीं गये।

वाट्सके भागनेकी खबर पाकर सिराजुद्दौलाकी आँखें खुलीं। इतने दिन कभी भय दिखाकर, कभी विनम्रतासे खुश कर वाट्स और क्लाइवने उन्हें मोहाच्छन्न कर रखा था। इसपर वे जन्मसे ही अल्पबुद्धिके मन-मानी करनेवाले व्यक्ति थे। उनके मिजाजका ठीक ठिकाना पाना कठिन था। इसके कुछ दिन पहले एक बार क्रुद्ध होकर मीर जाफ़रको क़ैद करनेकी कोशिशमें थे। आज फिर उसी मीर जाफरके पास दीनभावसे क्षमा माँग-कर अंग्रेज़ोंके विरुद्ध सहायता करनेकी भिक्षा माँगी। धनवान्की प्रीति वालूकी भीति है, क्षणमें हाथमें हथकड़ी पड़ती है और क्षण हीमें हाथमें चाँद आ जाता है !

इसी समय नवाबके पास क्लाइवकी चिठ्ठी आई कि वे न्याय करानेके लिए मुर्शिदाबाद आ रहे हैं। इस बार सन्धिकी सभी शर्तोंको अच्छी तरह समझ एक निष्कर्षपर पहुँचना चाहिए। मुर्शिदाबादमें बहुतसे गण्यमान्य व्यक्ति हैं, वे जो न्याय करेंगे, क्लाइव उसे ही सर-आँखोंपर ले लेंगे।

सिराजुद्दौलाने देखा अंग्रेज़ोंके साथ लड़ाई करनेके सिवा दूसरा कोई चारा नहीं है। नवाबके हितैषियोंने सलाह दी कि ल-साहबको पटनेसे बुला

भेजा जाय। उनके नहीं आने तक युद्ध छेड़ना उचित नहीं होगा। इस बीच मीर जाफरको बन्दी बनाकर रखा जाय, यह सलाह भी बहुतोंने दी। दुविधामें पड़े-पड़े सिराजुद्दौला काम लायक कुछ भी नहीं कर सके।

नवाबने देखा कि उनके सेनापति और उनकी फ़ौज जिस प्रकारसे विभ्रान्त हो पड़ी हैं, उसमें और अधिक देरी करनेपर सभी उनके विरुद्ध षड्यन्त्रमें शामिल हो जायेंगे। राजधानी छोड़कर वे पलासीके मैदानकी ओर चले। उसी मार्गसे होकर ही क्लाइवको मुर्शिदाबादमें घुसना पड़ता। मैदानसे दो मील उत्तर भागीरथी नदीके घुमावदार किनारेपर उनके सैन्य सामन्तने पहलेसे ही मिट्टी काटकर सुरंग बनाकर अड्डा जमाया है। क्रूर नियति सिराजुद्दौलाको उसी ओर खींच ले गई। यमराज द्रुतगतिसे उनकी ओर आने लगे।

: ३५ :

१४ जून सन् १७५७ ई०। गंगाके किनारे-किनारे अपनी फ़ौज लेकर क्लाइव कालना पहुँच गये। मुर्शिदाबादसे आकर मीर जाफरके यहींपर क्लाइवके साथ शामिल होनेकी बात थी। लेकिन वे नहीं आये।

क्लाइवने एक बार सोचा, भूल तो नहीं की? केवल मीर जाफरकी बातपर ही इतना निर्भर करना क्या उचित हुआ? जो भी हो, वे हैं तो विश्वासघाती। ऐसे आदमीकी बातपर विश्वास कर इतनी दूर बढ़ना क्या बुद्धिमानी हुई?

कलकत्ते सेलेक्ट कमिटीके पास क्लाइवने लिखा, कि जब तक मीर जाफर आ नहीं जाते, तब तक वे गंगा पार करे या नहीं, यही सोच रहे हैं। सेलेक्ट कमिटीने लिखा, मा भैः। कुछ चिन्ता नहीं, आगे बढ़ जाओ। लेकिन चिट्ठी ऐसी दुभाषिया भाषामें लिखी गई थी कि आगे बढ़नेपर विनाश, पीछे हटनेपर भी वही। अर्थात् आगे बढ़नेपर युद्धमें अगर हार हो, तो भी क्लाइवका दोष, और पीछे हटनेपर कोई विपत्ति आवे, तो

वही उन्हींका क़सूर। सौभाग्यवश यह चिट्ठी जब क्लाइवके हाथमें आई, तब सब खतम हो गया था।

और आगे नहीं बढ़नेपर भी तो चुपचाप कालनामें बैठा नहीं जा सकता। १९ जूनको कुछ फ़ौज लेकर आयर कुटने कटवाके मिट्टीके क़िलेको दखल कर लिया। कैप्टेन कुट उस समय मेजर आयर कुट हो गये थे। दो दिन पहले ही क्लाइवने उन्हें कैप्टेनके पदसे मेजरके पदपर पहुँचाया है। अधिक लड़ना नहीं पड़ा। मेजर आयर कुटके क़िलेके पास पहुँचते ही नवावके आदमी क़िला छोड़कर चले गये। वहाँ प्रचुर खाद्य सामग्री मिली।

कटवामें भी मीर जाफर नहीं मिले। वहाँ दो दिनोंतक प्रतीक्षा करनेपर भी मीर जाफरकी कोई खबर नहीं मिली। इस समय अब बिना कुछ किये काम नहीं चलेगा। अब शीघ्र ही वरसात आ रही है। और यह भी खबर मिली है कि नवावने पटनासे चले आनेके लिए ल को पत्र लिखा है।

जीवनमें यही पहला और यही अन्तिम है, किंकर्तव्य-विमूढ़ होकर अपने सेनाध्यक्षोंको परामर्श करनेके लिए क्लाइवने बुला भेजा। मन्त्रणाका विषय था, अभी आगे बढ़कर नवावपर आक्रमण करना उचित है अथवा वरसात यहीं विताकर वर्षा खतम होनेपर मराठोंकी सहायता लेकर नये सिरेसे उद्योग करना होगा।

वोट लिया गया। और आगे बढ़नेके विरुद्ध ही क्लाइवने अपना वोट दिया। बीस आदमियोंमें तेरह आदमियोंका यही मत था। बाक़ी सात आदमी जो उसी समय युद्ध करनेके लिए तैयार थे उनमें मेजर आयर कुट प्रमुख थे। उन्होंने युक्ति दी कि हम लोग एकके-बाद-एक सभी जगह विजयी हुए हैं, इसलिए हमारी पल्टनके सिपाहियोंका मन दुगुना बढ़ गया है। अब इतनी दूर बढ़कर चुपचाप बैठे रहनेसे उनका उत्साह एकदम ठण्डा पड़ जायगा। और यदि प्रतीक्षा ही करनी है, तो यहाँ इस मैदानके बीच क्यों? इससे तो कलकत्ते ही लौट जाना अच्छा है। लेकिन वहाँ जानेपर तो अब सभी एक स्वरसे धिक्कारेंगे।

मन्त्रणा-सभा खतम हुई। दोनों हाथ पीछेको ओर मिलाकर गर्दन झुकाकर सोचते-सोचते एक बगीचेमें क्लाइव चहलक़दमी करने लगे। एक घण्टेके बाद ही उनका मन स्थिर हो गया। आयर कुटको बुलाकर उन्होंने हुक्म दिया, कल सवेरे ही फिर मार्च शुरू होगा।

मीर जाफर स्वयं तो नहीं आये। लेकिन उसी दिन तीसरे पहर उनकी एक चिट्ठी आ गई। उन्होंने लिखा था, कि नवाबके द्वारा नज़रबन्द किये जाकर वे पलासीके मैदानमें ही बैठे हुए हैं, आगे बढ़नेका कोई उपाय नहीं है। वहीं दोनों दलोंकी मुठभेड़ होगी। क्लाइव भी तथास्तु कह सवेरे होनेवाले मार्चका निरीक्षण करने चले गये।

२२ जून। सवेरे ही यात्रा शुरू हुई। अग्रद्वीपके पास गंगा पार कर रातमें बारह बजे अपने दलबल सहित क्लाइव प्लासीके मैदानमें पहुँच गये।

सामने ही छाती भर ऊँची मिट्टीकी दीवारसे घिरा हुआ डेढ़ हज़ार बीघेका एक आमका बाग़ था। उसका नाम लक्ष बाग़ था। आमके एक लाख पेड़ उस बाग़में क़तारके-क़तार खड़े थे। इसी बाग़में क्लाइवके सैनिकोंने रात-भर आश्रय लिया।

बाग़की बग़लमें ही बायीं ओर गंगाके ठीक ऊपर प्राचीरसे घिरा हुआ एक पक्का मकान था। नवाब जब इस ओर शिकार खेलने आते, तो वही उनके विश्रामका स्थान होता। क्लाइव और उनके सेनाध्यक्षगण उसी मकानमें जाकर रहे। उसी समय गुप्तचरोंके मुँहसे खबर मिली कि सामने ही डेढ़ मीलके भीतर नवाब सिराजुद्दौला अपनी फ़ौजके साथ प्रतीक्षा कर रहे हैं।

: ३६ :

दूसरे दिन २३ जून, सन् १७५७ ई०, बृहस्पतिवार।

भोर होते-न-होते दूर युद्धके बाजे बजने लगे। उस समय भी अच्छी तरहसे सबकी नींद नहीं खुली थी। शिकार-गृहकी छतपर चढ़कर क्लाइवने

दूरवीन लगाई। देखा कि नवावके सैनिक छावनीसे वाहर निकल रहे हैं। वह जैसे मनुष्योंका एक विशाल समुद्र था। आमके वाग़के सामने दाहिनी ओर अर्ध चन्द्राकारमें खड़ी होकर वह विशाल वाहिनी अंग्रेज़ोंको विलकुल घेर लेनेके फेरमें थी। क्लाइवकी छाती जैसे काँप गई। उनकी सारी फ़ौज मिलकर नवावकी विशाल सेनाके वीस भागकी एक भाग भी नहीं होगी।

शिकार-गृहको छोड़कर क्लाइव नीचे उतर आये। आमके वाग़से फ़ौजको वाहर लाकर वाग़के प्राचीरके सामने ही युद्धके लिए सजा दिया। वीचमें ग़ोरे थे। उनके दाहिने-वायें तीन-तीनके हिसावसे छः तोपें थीं। सफ़ेद मुँह, लाल कुर्तावाले गोरोंकी दोनों वग़लमें काले तैलंग सिपाही और देशी लाल पल्टन थी। अंग्रेज़ोंसे ही उन्होंने आधुनिक युद्ध-विद्या सीखी थी। थोड़ेसे सैनिक रसदपर पहरा देनेके लिए आम-वाग़के भीतर रह गये।

मेजर जेम्स़ क्लिपैट्रिक, मेजर आर्चीवाल्ड ग्रान्ट, मेजर आयर कुट, कैप्टेन जार्ज गप—यही चार अंग्रेज़ आफ़िसर सैन्य-परिचालनके लिए रहे। क्लाइव स्वयं तो सवके ऊपर थे ही।

उनकी वायीं ओर गंगा थीं। उसके ऊपर ही वह शिकार-गृह। तव तकके लिए वह अंग्रेज़ोंकी फ़ौजका हेड क्वार्टस् था।

नवावकी ओर अंग्रेज़ोंके सामने ही दो सौ गज़ अलग एक छोटेसे पोखरेके किनारे साँफ़े नामक एक फ्रेंच फ़ौजी अफसर खड़े थे। उनके साथ पैंतालीस फ्रांसीसी गोलन्दाज और चार छोटी-छोटी तोपें थीं। उसके ठीक पीछे मीर मदनके सेनापतित्वमें नवावकी एक टुकड़ी सेना थी।

मीर मदनकी वायीं ओर एक वहुत वड़ी जगहको घेर काश्मीरी सेनापति मोहनलाल थे। वहाँ सव मिलकर पाँच हज़ार घुड़सवार और सात हज़ार पैदल सिपाही थे। नवावकी वाक़ी फौज़ एक छोड़े हुए ईंटके पजावेके किनारे एक ऊँचे टीलेके ऊपर थी।

इसके ऊपर फिर अंग्रेज़ोंकी वायीं ओर गोलाकार हो रायदुर्लभ, इयार

लुत्फ़ खाँ और मीर जाफर डटे हैं। उनसे दक्षिणकी ओर पलासी ग्राम अस्पष्ट-सा दीख रहा है।

सब मिलाकर अंग्रेज़ोंके पास ९५० गोरे, २१००सिपाही, ८ छोटी तोपें और दो बड़ी तोपें थीं। नवावकी ओर पैदल और घुड़सवार मिलकर ५० हज़ार सैनिक और ५३ बड़ी-बड़ी तोपें थीं। नवावके सेनानियोंका क्या विचित्र चेहरा था! क्या रंग-बिरंगा साज-पोशाक था। नवावी फ़ौजमें सब प्रदेशके लोग दिखाई पड़ रहें हैं!

भोर आठ बजे लड़ाई शुरू हो गई। पहले ही साँफ़्रेने तोप दागी। आधे घण्टेके भीतर अंग्रेज़ोंके तीस आदमी घायल हो गये। क्लाइवने देखा कि उनके एक-एकके बदले अगर नवावके दस-दस आदमी भी मरें तो भी लड़ाई जीती नहीं जा सकती। दो क्षणमें वे ही निश्चिन्त हो जायेंगे। वे बेकारमें शक्तिको नष्ट न कर धीरे-धीरे पीछे हटकर सबको फिर आम बाग़-के भीतर ले गये।

अंग्रेज़ोंको पीछे हटते देख नवावकी फ़ौज कुछ आगे बढ़ी। लेकिन यथाशक्ति तोप छोड़, गोली चलाकर भी अंग्रेज़ोंका नुकसान न कर सकी। सब गोले-गोलियाँ अंग्रेज़ी पल्टनके सिरके ऊपरसे निकल आमके बाग़के अच्छे-अच्छे कलमी आमोंकी डालोंको तोड़ बाहर छिटककर जा पड़तीं।

इधर आमके बाग़में घुसकर प्राचीरमें थोड़ा-सा सूराखकर उसके भीतर तोपका मुँह डालकर अंग्रेज़ लोग घुटने टेक तोप छोड़ने लगे। कितना अद्-भुत उस तोपका निशाना था। कैसी भीषण उसकी संहार शक्ति थी। नवावकी ओर अनगिनत लोग मारे गये। असावधानीसे रखी हुई बहुत-सी बारूदकी गाड़ियोंपर गोला पड़नेसे वे देखते-देखते हवा होकर उड़ गईं। ग्यारह बजे तक दोनों पक्ष लगातार केवल तोप दागते रहे। केवल पैंतरे-बाजी होती रही, लड़ाईका कुछ भी फलाफल नहीं हुआ। तब तक न किसी-की हार हुई, न किसीकी जीत।

क्लाइवने सोचा, इस प्रकार शाम तक चलानेपर रातमें एक बार वे

नवाबी फ़ौजपर प्रहार कर देखेंगे। रातमें देशी फ़ौज आम तौरसे लड़ाई नहीं करना चाहती। रात्रि-युद्धमें वे भयकारी दृश्य देखते हैं। दक्षिण भारतमें युद्धकी जानकारी होनेसे क्लाइवको यह भलीभाँति मालूम था।

: ३७ :

ग्यारह बजेके बाद अचानक ख़ूब ज़ोरोंकी बौछार हो गई। आध घण्टेतक लगातार वर्षा होनेसे सारा मैदान कीचड़-ही-कीचड़ हो गया। वर्षा रुकनेपर अंग्रेज़ फ्रान्सीसियोंके गोलेका जवाब देनेको तैयार हुए। लेकिन आश्चर्य यह कि नवावकी ओरसे कोई आवाज़ ही नहीं सुनाई पड़ रही थी। बात यह थी कि नवावकी ओरसे वारूदकी गाड़ी ढकी हुई नहीं थी। गोल-मालमें तिरपाल खोजकर वाहर निकालते-निकालते ही सब वारूद भींगकर नष्ट हो गई।

वर्षाका वेग रुकनेपर नवावके सेनापति मीर मदनने सोचा कि लगता है कि अंग्रेज़ोंकी भी यही एक ही दशा हुई है। उनकी वारूद भी शायद बेकार हो गई। यही सोचके वे एक हज़ार सैनिक लेकर अंग्रेज़ोंकी ओर धावा बोलने गये। मनमें विचारा कि यदि धारसे न कटें तो मारसे तो निश्चय ही कटकर खत्म हो जायेंगे। इधर अंग्रेज़ोंकी बारूदकी गाड़ी अच्छी तरह ढककर सजी हुई थी। उसका कुछ भी नहीं बिगड़ा।

नवावके सैनिकोंको आगे बढ़ते देखकर अंग्रेज़ोंने फिर ख़ूब गोला-गोली चलाई। उससे नवावकी ओरके मीर मदन, मीर मदनके दामाद बद्री अली ख़ाँ, नौबे सिंह हजारी—बड़े-बड़े सेनापति—तथा और भी बहुत-से छोटे-मोटे सेनाध्यक्ष युद्धक्षेत्रमें ही मारे गये। नवावकी सेना धीरे-धीरे पीछे हटने लगी। हटते-हटते बिल्कुल छावनीके मुँहपर आ गयी। इसके बाद वहाँपर काटी हुई सुरंगके भीतर जाकर छिप गई। अपनी जगहके मोर्चेकी रक्षा करते हुए केवल फ्रान्सीसी सांफ्रे और उनके संगी लोग रह गये।

आमके बाग़की दायीं ओर मीर जाफर, इयार लुत्फ़ ख़ाँ, राय दुर्लभ

कलकी तरह मुँह बाये खड़े रहे। ज़रा भी हिलते-डुलते नहीं, जैसे मज़ा लूटते हुए तमाशा देख रहे हैं। क्लाइवने उनको भी नहीं छोड़ा। उनका क्या इरादा है, यह समझ नहीं सकनेके कारण उनके ऊपर भी उन्होंने गोली चलाई, जिसमें कि अधिक पास न बढ़ सकें।

बादमें अंग्रेज़ोंको कहते सुना गया कि मीर जाफर और उनके दोनों साथी देख रहे थे कि कौन पक्ष अन्तमें जीतता है। यदि वे देखते कि अंग्रेज़ हार रहे हैं तो अन्तिम क्षणमें उनकी गर्दनपर कूद युद्ध जीतनेकी बहादुरी-का दावा वही करते। विश्वासघातियोंका भाग्य इसी प्रकारका होता है। कोई भी पूरी तरह उनका विश्वास नहीं करता। इसीको कहते हैं कि 'जिसके लिए चोरी करे, वही कहे चोर।'

नवाबकी ओरके उन तीन विश्वासघाती व्यक्तियोंको अगर छोड़ भी दिया जाय, तो भी नवाबके जो सैन्य सामन्त थे वे अगर धीर स्थिर होकर बुद्धिमानीसे सब समेटकर युद्ध करते तो अंग्रेज़ोंके थोड़े-से उन कई आद-मियोंको कुचलकर गंगाके जलमें बहा देना उनके लिए कोई मुश्किल नहीं था। लेकिन क्या होता, और क्या नहीं होता, इसे सोचनेसे अब क्या फ़ायदा? जो हुआ वह तो अब नहीं लौटेगा? और यही तो इतिहास है।

युद्धमें सेनापति मीर मदनकी मृत्यु हो गई, यह सुनकर नवाब सिराजुद्दौला हतोत्साह हो सिरपर हाथ रखकर बैठ गये। उठ-पड़कर और कुछ करना चाहिए, यही नहीं हुआ। और किसी प्रकारकी चेष्टा ही उन्होंने नहीं की। केवल मीर जाफरको बुलवाकर अपनी पगड़ी उनके पैरोंपर रख आरज़ू-मिन्नत करते हुए बोले, इस समय मेरे प्राण, मेरा मान तुम्हारे ही हाथोंमें है। रखना चाहो तो तुम्हीं रख सकते हो, मारना चाहो तो तुम्हीं मार सकते हो।

विश्वासघाती मीर जाफरने कुरान छूकर शपथ खायी कि वे नवाबकी रक्षा करेंगे। अंग्रेज़ोंसे अच्छी तरह लड़ेंगे। लेकिन उस दिन और नहीं। उस दिनके लिए बन्द रहे। सभी इस समय छावनीमें लौट जायँ। दूसरे

दिन भोरमें अंग्रेज़ोंको एक बार अच्छी तरह एक हाथ देख लिया जायगा। यही परामर्श देकर मीर जाफर चले गये।

लेकिन अपने स्थानपर लौटकर आते ही मीर जाफरने क्लाइवको एक चिट्ठी लिखी, आमके बाग़से निकलकर नवाबकी सेनापर धावा करनेका यही उपयुक्त समय है। अंग्रेज़ोंका भाग्य अच्छा था कि वह चिट्ठी क्लाइवके हाथमें पलासी युद्ध खत्म होनेके बाद आई।

एक विश्वासघातीके जानेके बाद दूसरे विश्वासघाती आये। राय दुर्लभने भी नवाबको उस दिन युद्ध बन्द रखनेकी सलाह दी। उसके बाद वे यह भी बोले कि इस समय नवाबको स्वयं युद्ध क्षेत्रमें रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। रातमें मोर्चेकी रक्षाके लिए तो सेनापतिगण ही काफ़ी हैं।

लेकिन मीर जाफरके उपदेशके मुताबिक़ सेनापति मोहनलाल लड़ाई बन्द करनेको राज़ी नहीं हुए। उन्होंने कहा, कि इस साधारण बातसे अगर वे लोग पीछे हट जायँ तब तो युद्ध यहीं खत्म है। उनकी हार है। कल और किसी तरह भी उठना नहीं होगा। फ़िर अंग्रेज़ोंपर आक्रमण करनेके लिए मोहनलाल उद्योग करने लगे।

इधर युद्धको कुछ नरम पड़ा हुआ देख क्लाइव भीगे हुए कपड़ोंको बदलनेके लिए शिकार-गृहमें गये। कपड़े बदल लगता है कि वे थोड़ा सो गयें थे। असम्भव नहीं है, क्योंकि खूब ही थके हुए थे। जागकर देखते हैं कि कोई पुकार रहा है। उन्होंने सुना कि मेजर क्लिपैट्रिक युद्ध क्षेत्रमें फ्रान्सीसियोंको अकेला देख क्लाइवका हुक्म लेनेके पहले ही उनको खबर कर देनेके लिए आदमी भेजकर आमके बाग़से कुछ सैनिक लेकर पोखरेके किनारेपरके फ्रेंचोंकी ओर आगे बढ़ गये हैं।

एक ही दौड़में वहाँ आकर क्लाइवने मेजर क्लिपैट्रिकको पहले तो थोड़ी डाँट बतायी। इसके बाद चारों ओर निगाहें फेरकर देखा कि क्लिपैट्रिकने काम ठीक ही किया है। वे स्वयं वहाँ उपस्थित रहनेपर ठीक

यही करते। मैदानमें फ्रेंच बिल्कुल अकेले थे। अन्य सभी युद्ध क्षेत्र छोड़कर छावनीकी ओर चले गये हैं।

इसका ठीक कारण क्या है, क्लाइव यह समझ नहीं सके। मीर मदन कुछ पहले ही मारे जा चुके हैं, नवाव अत्यधिक विचलित हो गये हैं—मीर जाफर आकर उस दिनके लिए युद्ध बन्दकर देनेको कह गये हैं—भीतर-ही-भीतर इतनी घटनाएँ हो चुकी हैं, उस समय तक वे कुछ भी नहीं जानते थे।

किलपैट्रिकको आम-बागसे और कुछ फ़ौज लानेके लिए कहकर क्लाइव स्वयं फ्रेन्चोंकी ओर आगे बढ़ चले। चारों ओर देखकर फ्रान्सीसी अच्छी तरह समझ गये कि इन्हीं कई आदमियोंको लेकर उन लोगोंको अकेले ही क्लाइवके साथ जूझना पड़ेगा। यह कोशिश बेकार थी। अंग्रेज़ोंके और भी आदमी आम-बाग़से निकले आ रहे हैं, यह देख वे लोग तोपोंको खोल धीर-शान्त भावसे पीछे हट नवाबकी छावनीमें घुसनेके द्वारपर जहाँ क़िलेबन्दी की गई थी, वहीं जाकर कतार बाँध खड़े हो गये। फिर तोपोंको मिला वहीं चटपट तैयार कर दिया।

आगे बढ़कर फ्रान्सीसियोंके छोड़े हुए पोखरेके उस किनारेको क्लाइवने दखल कर लिया। यह देख फ्रान्सीसी लोग अपने नये स्थानसे इस प्रकार गोला चलाने लगे कि लगता है जैसे चन्दननगरका बदला उन्होंने यहींपर अंग्रेज़ोंसे लेनेका निश्चय किया है।

फ्रान्सीसियोंको इस प्रकार लड़ते देख मोहनलाल आदि अन्य सेनापति फिर युद्ध करनेके लिए खाईंकी सुरंगसे बाहर निकल पड़े। इसे देख क्लाइव थोड़ी-सी फ़ौज पोखरेके किनारे पहरेके लिए रख और थोड़ा आगे बढ़ उसी ईंटके पजावाके टीलेपर चढ़ गये। उस जगहसे नवाबकी छावनीके मुँहका फासला केवल दो सौ गज़का था।

उसी बीच यहाँपर एक अच्छी खासी लड़ाई हो गई। नवाबके सैनिक

यथाशक्ति अपनी बारूद ठूसकर भरी जानेवाली बन्दूक़से गोली चलाने लगे। लेकिन उन बाबा आदमके ज़मानेकी पुरानी बन्दूक़ोंसे क्लाइवके आधुनिक गोले-गोलियोंको क्या रोका जा सकता था? इसके अलावा, नवाब-की फ़ौजका कौन संचालन कर रहा है, यह भी ठीक समझमें नहीं आता था। जिससे जैसा बन पड़ा, अपनी-अपनी इच्छाके अनुसार विश्रृंखल भाव-से युद्ध करता रहा। इससे और चाहे जो हो, युद्ध नहीं जीता जा सकता।

छावनीसे बाहर आकर नवाबकी फौज फिर दल बाँध एक कतारमें खड़ी न हो सकी। अच्छी तरह सेनाका परिचालन करनेवाले आदमीके अभावमें माल ढोनेवाली बैलगाड़ी, घुड़सवारोंके घोड़े सामनेकी ओर बढ़कर कीचड़में फँसने लगे। लड़नेवाले पीछे रह गये। क्लाइवके एक-एक गोलेसे एक सौ पशु निहत होने लगे।

लेकिन हाँ, फ्रेन्च ख़ूब लड़े। पीछेसे फिर नवाबके आदमी बाहर आ रहे हैं, यह देखकर वे दुगुने उत्साहसे तोप दागने लगे।

तीसरे पहर चार बजेके लगभग अंग्रेज़ोंको और नज़दीक बढ़ आते देख नवाब सिराजुद्दौला घबड़ाये। एक ख़ूब तेज़ चलनेवाले ऊँटपर सवार हो वे युद्ध छोड़कर चटपट राजधानीकी ओर भागे। नवाबकी छावनीमें बहुत गड़बड़ी पैदा हो गई।

युद्धके समय क्लाइवकी दृष्टि और पैनी हो जाती। वे दूसरे ही क्षण अपनी सारी पल्टन लेकर नवाबकी छावनीके ऊपर एकदम बाघकी तरह टूट पड़े। सचमुचमें यहींपर क्लाइवकी बहादुरी थी। दूसरा कोई रहता तो उतनी कम फ़ौज लेकर ऐसा काम करनेका साहस शायद नहीं करता।

नवाबकी फ़ौज क्लाइवके सामने ठहर नहीं सकी। चारों ओर आवाज़ गूँज उठी—भागो, भागो। सब माल-असबाब, साज-सामान, रसद आदि पीछे छोड़कर सभी भाग चले। शोरगुल करते जो जिस ओर भाग सका, भागा। क्लाइवने आकर नवाबकी खाली छावनीपर अधिकार कर लिया।

गिनती करनेपर देखा गया कि इस युद्धमें अंग्रेज़ोंकी ओरके सात गोरे और सत्रह सिपाही मारे गये हैं; और तेरह गोरे और छब्बीस सिपाही जख्मी हुए हैं। एक छोटे-मोटे दंगेमें इससे अधिक लोग मरते हैं।

यही है पलासीका युद्ध। विजयी कर्नल रावर्ट क्लाइवने सीधे तनकर चारों ओर देखा। इसके बाद फिर मार्च। इस बार राजधानीकी ओर।

ढलती हुई वेलामें अस्तगामी सूर्य डूबते-डूबते गंगाके गर्भमें अदृश्य हो गया। चारों ओर अन्धकार फैल गया।

: ३८ :

उस दिनके उस पलासीके युद्धका आज और कोई भी साक्षी नहीं रह गया है।

आदमी तो नहीं ही है। मनुष्यकी उछल-कूद, रोवदाव और फूत्कार तो दो दिनोंके हैं! वह लाख पेड़ोंवाला बाग़ आज गंगाके गर्भमें है। वह शिकार-गृह न जाने कहाँ बहकर चला गया। न तो पलासीका मैदान ही है। नये पलासी ग्राममें नये अपरिचित चेहरे हैं। भागीरथी भी अब वहाँसे होकर नहीं बहतीं। बहुत दूर हट गई हैं।

केवल सूर्य जिस प्रकारसे उस दिन उदय हुआ था, अस्त हुआ था, आज भी उसी तरह उदय और अस्त होता है।

पलासीके युद्धको कोई युद्ध जैसा युद्ध स्वीकार नहीं करता। लेकिन उसी युद्धके फलस्वरूप धीरे-धीरे एक मुट्ठी कारवारी व्यक्तियोंने नापनेके दण्डके बदले राजदण्ड हाथमें धारण किया। शुरूसे ही उन्होंने शासन भले ही नहीं किया, लेकिन बंगालके भाग्यविधाता अवश्य हो गये।

कौन बंगालकी गद्दीपर बैठेगा, कौन वहाँसे उतरेगा, इसके विधायक अंग्रेज़ सौदागर हुए। फ्रान्सका सम्राट् होनेके पहले नेपोलियन कहा करते "मैंने स्वयं राजमुकुट भले ही नहीं पहना, लेकिन जो राजमुकुटको सिरपर धारण करते हैं, मैं उन्हें ही सिंहासनपर उठाता-बिठाता हूँ।" उसी प्रकार

क्लाइवके वाहुवलसे पलासीके युद्धको जीतकर अंग्रेज वणिक भी ठीक वही वात कह सके। इस वार सचमुच ही वे सुई होकर घुसे और फाल होकर निकले।

मज़ेकी वात यह कि स्वयं अंग्रेज़ोंने भी पलासीके युद्धको राज्य जय करना कहकर कहीं भी वर्णन नहीं किया। उनका कहना है कि यह एक रिवोल्यूशन अर्थात् राष्ट्रविप्लव था। फिर किसीने नाम दिया है रिवोल्ट अथवा प्रजा-विद्रोह। नामसे क्या वनता-विगड़ता है ? कार्यमें क्या हुआ यह समझना किसीके लिए वाक़ी नहीं रहा।

पलासी युद्धके प्रधान नायक क्लाइवके चरित्रमें एक अद्भुत साहस और एक अदम्य कार्यशक्तिका परिचय पग-पगपर मिलता है। भय क्या है, यह उनका जाना हुआ नहीं था। यही कारण है कि युद्ध शास्त्र विना पढ़े हुए ही, युद्ध विद्या विना सीखे ही क्लाइव एक वहुत बड़े सेनापति हो सके थे।

लड़ाईके मामलोंमें क्लाइवका एक ऐसा सहज ज्ञान था कि वहुतोंने उसकी व्याख्या प्रतिभा कहकर की है। किसी एक असम्भव चीज़को सम्भव कर दिखानेपर वहुत वार उसका कार्य-कारण सम्वन्धका पता नहीं लगता। उस समय उसे प्रतिभा कहकर चला दिया जाय तो अधिक कहनेकी ज़रूरत नहीं रह जाती।

असली वात यह है कि सन् ईसवीकी अट्ठारहवीं शताब्दीके वहुतसे अंग्रेज़ोंके समान क्लाइवकी प्रकृतिमें भी एक निधड़क, वेपरवाह और दुर्दान्तपनेका भाव था। वह इस देशके युद्धक्षेत्रमें ख़ूव काम आया। उस ओर अंग्रेज़ोंके विपक्षी दल अर्थात् उस समयके देशी लोगोंमें अयोग्यता अपनी चरम सीमापर पहुँच गई थी। विपक्षी दल जहाँ इस प्रकारका हो वहाँ युद्ध-नीतिसे वाहर दुर्दान्तपनामें ही रणकौशलका भ्रम होना कुछ आश्चर्यकी वात नहीं है।

इसपर क्लाइवका युद्ध करना वहुत दूर तक सब कुछको दाँवपर लगा-कर जुआ खेलने जैसा था। लगे तो पौ वारह नहीं तो सव ख़तम। इस पार या उस पार। लेकिन इसके लिए भाग्यका ज़ोर चाहिए। क्लाइवका

भाग्य तेज़ ही था। किन्तु मुश्किल यह है कि भाग्यका ज़ोर एक ही तरहसे बहुत दिनों तक नहीं रहता। भाग्यवश पलासीके युद्धके बाद क्लाइवको और लड़ना नहीं पड़ा। नहीं तो क्या होता, कहा नहीं जा सकता।

पर यदि गहराईमें उतरकर छानबीन की जाय तो एक बातका पता लगता है। कम संख्यावाली अच्छी तरह सीखी-सिखाई फ़ौज अगर एक मन, एक प्राण हो सेनाध्यक्षकी बातपर उठे-बैठे, तो केवल संख्यामें बड़ी सेनाको हरा देनेमें उसको अधिक समय नहीं लगता। अंकगणितमें संख्याका एक मूल्य रहनेपर भी युद्ध-क्षेत्रमें उसका सब समय वही मूल्य होगा ऐसी बात नहीं है।

लड़ाईमें देशी फ़ौज भी कम नहीं जाती। किन्तु उनके परिचालक अपने-अपने स्वार्थ, मान, अभिमान, एक दूसरेके प्रति विद्वेष लेकर ही युद्धमें उतरते। फल यह होता कि उस बड़ी वाहिनीमें छोटी-छोटी भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी फ़ौजकी टुकड़ीकी सृष्टि होती। एक पूरी सैन्यवाहिनी कभी भी नहीं बन पाती।

इसके अलावा देशी सैनिकोंका किसी भी समय पूरी सेनावाहिनीके प्रति कोई भी ममत्व नहीं होता। उनका खिचाव केवल अपने नायकोंके प्रति होता। इसीलिए जैसे ही एक सेनानायक लड़ाईमें धराशायी हुए, अथवा किसी कारणसे पीठ दिखाई वैसे ही उनके दलके आदमी विशृंखल होकर भागना शुरू कर देते। दूसरा कोई आकर उस दलको सँभालकर फिर युद्धमें लगाता ऐसी सामर्थ्य किसीमें भी नहीं होती।

लड़ाईके मामलेमें इस देशके नवाब, बादशाह, राजे-महाराजे बिलकुल पुराने सड़े हुए ढंगको अपनाते। उनके वही बाबा आदमके ज़मानेके युद्धके तरीक़े थे और न जाने कबके पुराने अस्त्र-शस्त्र थे। समयके साथ क़दम मिलाकर चलनेमें उन्हें खीझ होती। आधुनिक युद्ध-विद्या जिन्हें नखदर्पण था, जिनके हाथोंमें हालके अस्त्र-शस्त्र, हर्बा-हथियार थे, उनके सामने इस देशके लोग कितनी देर तक ठहरते? हारकर प्राण गँवायेंगे, यह तो जानी हुई बात है।

और एक बात कहनी ही पड़ती है। इस देशके लोगोंका चरित्र इतना नीचे गिर गया था कि घूस देकर, लोभ दिखाकर उन्हें किसी भी नीच कर्ममें प्रवृत्त कराना बहुत सहज था। नर-हत्या, विश्वासघात, देश-द्रोह कुछ भी बाक़ी नहीं रहता। किन्तु आश्चर्य यह कि इस देशके लोगोंको घूस देकर अंग्रेज़ोंने इन सब जघन्य कामोंमें प्रवृत्त कराया अवश्य पर स्वयं कभी भी निजी स्वार्थके लिए उन्होंने देशके स्वार्थको बलि दी है, इसका भारतवर्षके इतिहासमें तो कोई प्रमाण नहीं मिलता।

इतनी बातोंके कहनेकी ज़रूरत क्या है? कुछ ज़रूरत अवश्य है। भारतवर्षमें जहाँ-जहाँ भी अंग्रेज़ देशी राजशक्तिके विरुद्ध लड़े हैं, वहाँ-वहाँ यह एक ही प्रकारकी बात देखनेको मिलती है। इसीलिए, क्यों वैसी बात हुई, उनके कारणोंका जान रखना अच्छा है।

: ३६ :

अब कहानी ख़तम की जाय!

नवाबकी छावनीमें घुसकर चाहे गोरे हों, चाहे देशी लाल पल्टन या तैलंग सिपाही किसीने भी एक भी चीज़पर हाथ नहीं लगाया। उनकी डिसिप्लिन आश्चर्यजनक थी। क्लाइवके साथ सभी दाऊदपुर तक बढ़ गये। रात हो गई है। उस दिन वहीं तम्बू गाड़े गये।

भोरके समय डरते हुए मीर जाफ़र अंग्रेज़ोंके अड्डेपर आकर मिले। पलासीके युद्धमें उनके कार्यकलापको देखकर अंग्रेज़ोंने क्या निश्चय किया है, कौन जाने? धीरे-धीरे मीर जाफ़र आगे बढ़ने लगे। उनको देखकर अंग्रेज़ सन्तरी जब विलायती क़ायदेके अनुसार बन्दूक़ ऊँची कर सम्भ्रमके साथ सलाम करने जा रहे थे, तब वे ज़रा अकचका गये। उन्होंने सोचा, वे मार तो नहीं डालेंगे? और आगे बढ़ने की उनकी हिम्मत नहीं हुई।

मीर जाफ़र इतस्ततः कर रहे हैं, ऐसे समय क्लाइव तम्बूसे बाहर निकलकर आये और उनको आलिंगनमें जकड़ लिया। विनयके साथ बोले, "अरे, नवाब साहब, आइये, स्वागतम्।" सुनकर मीर जाफ़र आश्वस्त हुए।

क्लाइवने परामर्श दिया कि सब काम छोड़कर सिराजुद्दौलाको पकड़ लेनेकी ज़रूरत है। फ्रांसीसी जाँ ल के साथ सिराजुद्दौला अगर फिर मिलें तो क्यासे क्या हो जाए, यह तो कहा नहीं जा सकता। उसी समय मीर जाफ़र मुर्शिदाबादकी ओर रवाना हो गये। शहरकी सीमापर सैदाबाद अंचलमें फ्रांसीसियोंकी कोठीमें क्लाइव टिक गये।

उस ओर मीर जाफ़र शहरमें आ रहे हैं, यह सुनकर सिराजुद्दौलाकी घबड़ाहट बढ़ गई। इस समय उनकी ओर एक भी आदमी नहीं है। पुकारनेपर कोई जवाब नहीं देता। उसी रातको ही अपनी स्त्री लुत्फ़उन्निसा बेगमका हाथ पकड़ और एक बच्चीको हृदयसे चिपटाये सिराजुद्दौला अन्धकार-ही-अन्धकारमें राजधानी मुर्शिदाबादका परित्याग कर बाहर हो गये।

२९ जून सन् १७५७ ई०। थोड़ेसे सैनिकोंको लेकर क्लाइवने मुर्शिदाबादमें प्रवेश किया। मुरादबाग़में सिराजके ही एक प्रासादमें उनके ठहरनेका प्रबन्ध हुआ।

उसी दिन तीसरे पहर नवाब मीर जाफ़रका प्रथम दरबार लगा। मीर जाफ़र बच्चोंकी तरह मचल कर बोले, स्वयं कर्नल साहब उनका हाथ पकड़ कर बंगालकी गद्दी पर न बैठा दें, तो वे किसी भी तरह गद्दी पर नहीं बैठेंगे। क्लाइव और क्या करते? अपनी जगहसे उठकर मीर जाफ़रका हाथ पकड़कर उन्होंने उनको बंगालकी गद्दीपर बैठा दिया।

दरबार खतम होनेपर सम्भ्रान्त लोगोंके सामने नवाब सिराजुद्दौलाका राजकोष खोला गया। उमीचंदके रिपोर्टके मुताबिक उतना कुछ नहीं पाया गया। वैसे क्लाइवको खूब अधिक निराश नहीं होना पड़ा। अकेले उनके हिस्से लगभग इक्कीस लाख रुपये आये। इसके बाद नवाब मीर जाफ़रने खुश हो डेढ़ लाख रुपये नकद और चौबीस परगनेके सम्पूर्ण मालिकानेका अधिकार क्लाइवको बख्शीश दिया।

क्लाइव कम्पनीके कर्मचारी रहकर भी कम्पनीके जमींदार हो गये। उसी जमींदारीके खजानेके रुपयेकी बाबत मृत्युकाल तक कम्पनीके पाससे

साल-साल चार लाख रुपये क्लाइवको मिलते गये। क्लाइवकी मृत्युके वाद वह जमींदारी कम्पनीके राज्यमें अन्तर्भुक्त हो गई।

वादमें चलकर इन्हीं सव रुपये-पैसेकी लेन-देनके विषयकी जाँच करनेके लिए पार्लियामेण्टने एक कमिटी वैठाई थी। कमिटीके सामने अभियोगों-का उत्तर देते-देते गर्म होकर क्लाइवने जोरोंसे टेवुलपर हाथ पटककर कहा,"सभापति महाशय और उपस्थित सदस्यगण, उस समयके अपने संयम-की वातको सोचकर तो मैं इस समय अवाक् रह जाता हूँ। जिस समय नवावकी दौलत मेरे पैरोंके नीचे थी, जव मीर जाफ़रसे लेकर राज्यके सभी अमीर-उमराव मेरे हँसते हुए चेहरेको देखनेके लिए सर नीचा किये हुए खड़े थे, उस समय मैंने सिराजुद्दौलाके गोदामसे अपने लिए सिर्फ़ इक्कीस लाख रुपये लिये थे। उस समय कैसे मैंने अपने लोभको सँभाल रखा था, उसे सोचते हुए मैं आश्चर्यचकित रह जाता हूँ।

वँटवारा तो एक प्रकारसे हो गया। अव उमीचन्दको लेकर क्या किया जाय ? क्लाइवके शागिर्द लुक स्क्राफ्टनने भार लिया कि वे ही उमीचन्दसे सारी वात खोलकर कह देंगे। सफ़ेद काग़ज़पर लिखे हुए शर्तनामेको ले जाकर और उमीचन्दकी आँखोंके सामने घुमाते-घुमाते स्क्राफ्टनने कहा, देखो उमीचन्द, शर्तनामा पढ़कर देखता हूँ तो तुम्हारे हिस्सेमें विल्कुल शून्य है। सुनकर तो उमीचंद एकदम अवाक्; उनके मुँहसे और वात नहीं निकली। चेहरेका जो रंग हुआ वह तो कहा नहीं जा सकता। केवल वड़वड़ाने लगे, लाल काग़ज़ ! लाल काग़ज़ !

क्लाइव आकर स्नेहपूर्वक उमीचंदको सान्त्वना देने लगे और अन्तमें तीर्थयात्रा करनेका उपदेश दे गये। वोले, तीर्थपर जानेसे वहुत शान्ति पाओगे। उमीचन्दने सचमुच ही तीर्थयात्रा की। तीर्थ क्षेत्रमें वैठे-वैठे वे क्या सोचते, नहीं कह सकता। यह वात उन्हें याद आती होगी क्या कि एक दिन उन्होंने ही सिराजुद्दौलाको अंग्रेज़ोंके साथ मेल-जोल रखनेकी सलाह

देते हुए कहा था अंग्रेजोंके आश्रयमें चालीस वर्षों तक रहकर उन्होंने देखा है कि अंग्रेज़ कभी अपनी बातसे मुकरते नहीं।

तब ऐसा लगता है कि तीर्थ-यात्रामें जाकर उमीचन्दने थोड़ी शान्ति लाभ की थी। क्योंकि तीर्थसे लौटकर उमीचंदने अपने हाथों एक विल लिखा। उस विलके द्वारा वे बहुत दान कर गये थे।

सन् १७५८ ई० में कलकत्तेमें उमीचन्दके निःसन्तान मरनेपर उनके साले और एक्ज़ीक्यूटर हुजुरीमलने सन् १७६० ई० में उमीचन्दके इस्टेटसे दातव्य कुछ रुपये विलायतकी किसी किसी संस्थाके पास भेज देनेके लिए कलकत्तेकी काउन्सिलके प्रेसिडेण्ट साहबके हाथोंमें दिये थे। लन्दनके मड्लिन अस्पताल और शिशुओंके लिए आश्रम अर्थात् फाउण्डलिंग अस्पतालको इस दातव्यका कुछ भाग मिला था।

उमीचन्दके साथ इस दग़ाबाजीकी बातको लेकर ब्रिटिश पार्लियामेण्टकी एक जाँच कमिटीने जब क्लाइवपर दोषारोपणकी चेष्टा की, तब क्लाइवने पार्लियामेण्टके मुँहपर ही ऊँची आवाज़में कह दिया कि अरे महाशय, ठहरिए, ठहरिए। अवस्था समझकर ही तो उसकी व्यवस्था होती है। आप लोग नहीं जानते कि उमीचन्द क्या है, किस प्रकारका धोखेबाज है। वैसी अवस्थामें पड़नेपर मैं एक बार क्या हज़ारों बार फिर वही काम करनेके लिए अभी भी तैयार हूँ। जवाब सुनकर कमिटीके मेम्बरोंकी अकड़ चूर-चूर हो गयी।

धर्मको तिलांजलि देकर मीर जाफरने बंग़ालकी नवाबी-गद्दीको दखल किया। लेकिन हीरा देकर उन्होंने केवल काँच ही पाया। असल नवाब कौन हुआ, इस विषयमें किसीको थोड़ा भी सन्देह नहीं रहा।

इतिहासज्ञ ग़ुलाम हुसेनने अपने सियर-उल-मुताख्खरीन नामक ग्रन्थमें इस सम्बन्धमें एक मजेदार घटनाका उल्लेख किया है। एक दिन किसी कारणसे मिर्जा शम्सुद्दीन नामक एक उमरावके आदमियोंके साथ क्लाइवके अनुचरोंका एक साधारण-सा वाद-विवाद हो गया। इसे लेकर

सभीके सामने दरबारमें बैठे हुए मीर जाफ़रने मिर्जा साहबको डाँटना-फटकारना शुरू कर दिया। मिर्जाने तब हाथ जोड़कर कहा—हुजूर नवाब साहब, आप ही इसका विचार करें। कर्नल साहब जिस गधेकी पीठपर चढ़ते हैं मैं उसको ही रोज़ तीन वेला तीन तीन बार कोर्निश करता हूँ। मैं किस साहससे गधेके मालिकसे झगड़ा करने जाऊँगा, आप ही बतलाइए? हुजूर, आप ही इस बातपर गौर करके देखें।

सिराजसे मीर जाफरके चरित्रको अगर कोई थोड़ा अधिक अच्छा मानता भी है, तो ऐसा उसने प्रकाशित नहीं किया है। वरन् जो दोष एक मूर्ख शिक्षा-दीक्षाहीन युवकमें देख पानेपर लोग उसे थोड़ी क्षमाकी दृष्टिसे देखते हैं, उसी दोषको उसके पितामहकी उम्रके किसी आदमीके स्वभावमें देखनेपर लोग किसी भी तरह बर्दाश्त नहीं करते।

सारे दिन गाँजा-अफ़ीम खींचते हुए कई पतित यार-दोस्तोंको लेकर नाचवालियोंको घेरे हुए मीर जाफ़र बंगालकी नवाबी करने लगे। जिस राज्यके ऐसे कर्णधार हों, वह राज्य कैसे चला होगा, उसे क्या और खोलकर कहना होगा?

कम्पनीके डायरेक्टरोंने देखा कि क्लाइवने तो कम्पनीके लिए इतना किया, अब क्लाइवके लिए कुछ नहीं करनेपर तो देखनेमें अच्छा नहीं लगता। ड्रेकके सिरपर पहलेसे ही तलवार झूल रही थी। कम्पनीने अब उन्हें बर्खास्त कर क्लाइवको ही कलकत्तेके गवर्नरके पदपर बैठा दिया।

अच्छी तरहसे युद्ध करनेके अलावा क्लाइवमें एक और गुण था। डिप्लोमेसीमें क्लाइवकी बराबरी करनेवाला उस समय क्या इस समय भी मिलना कठिन है। इसलिए राजकाजमें भी क्लाइवने कुछ कम करामात नहीं दिखलाई। इसपर डिस्पैच लिखनेकी कलामें तो क्लाइव एकदम फर्स्ट-क्लास फर्स्ट थे। अंग्रेज़ोंमें क़रीब सभीकी यह विद्या कम या बेशी जानी हुई है। लेकिन डिस्पैच लिखकर क्लाइव ऐसा चकमा दे सकते थे कि

लोगोंके मनमें उससे ऐसा भ्रम पैदा होता है कि वे सम्पूर्ण मिथ्याको विशुद्ध सत्य मान लेनेको वाध्य हो जाते।

उद्देश्यकी सिद्धिके उपायोंको लेकर क्लाइव कभी दिमाग़ नहीं खपाते थे। काम पूरा करने जाकर उपायके अच्छे-बुरेका विचार करना कमज़ोरोंका काम है। क्लाइव शक्तिशाली, वीर पुरुष थे। वे किसलिए इन-सब तुच्छ बातोंको लेकर द्विधा संकोच करेंगे? और व्यावहारिक नीति तो स्थान-व्यक्ति देखकर बदलती ही है। उन दिनों आजकलकी तरह पालिटिक्स एक वहुत बड़ा फाइन आर्ट नहीं हो पाई थी। अगर हुई होती तो सम्पूर्ण नीति-शास्त्र आदिसे अन्ततक नये ढंगसे लिखा जाता, यह बात वहुत-से बुद्धिमान् व्यक्तिके मुँहसे भी सुननेको मिलती है। जो भी हो, धर्म, अधर्मको लेकर अधिक माथा-पच्ची नहीं करनेके कारण ही लगता है कि युद्ध क्षेत्रकी तरह राज्य-परिचालनमें भी क्लाइव पूरा नैपुण्य दिखला गये हैं।

सिराजुद्दौलाका अन्त क्या हुआ, अव इसे ही देखें। लेकिन इसके पहले पलासी युद्धके प्रधान नायक उपनायकोंकी क्या दशा हुई, यहाँ उसकी कहानीको ही संक्षेपमें खतम कर लिया जाय।

मीर जाफ़र कुष्टके रोगी हो सवके निकट घृण्य, अस्पृश्य होकर सन् १७६५ ई० में मर गये। उनके पुत्र मीरन, जिन्होंने नवावीके लोभसे सिराजुद्दौलाके वंशके एक भी लड़केको ज़िन्दा नहीं छोड़ा, एक-एककर सवकी हत्या कर दी, वे वज्राघातसे मृत्युको प्राप्त हुए। दुर्लभराम, मीर जाफ़र और मीरनके हाथोंमें पड़ नेस्तनावूद हो गये। अन्तमें अंग्रेज़ोंकी सहायतासे किसी प्रकार प्राण वचाकर कलकत्ता भाग आये। नन्दकुमारको आख़िरमें फाँसीके तख़्तेपर झूलना पड़ा।

कम्पनीकी नौकरीसे वर्ख़ास्त होकर वाट्स विलायत भागकर मनके क्षोभसे वहीं मर गये। स्क्राफ्टन जहाज़ डूवनेसे मरे। स्वयं रावर्ट क्लाइवने वैरन आफ़ प्लाशी होकर भी पता नहीं किस ग्लानिसे अपने ही हाथों गलेमें छुरा भोंक सन् १७७४ ई० के २२ नवम्बरको आत्महत्या कर

ली, वेचारे एडमिरल वाट्सन कलकत्तेकी आवहवाको सह नहीं सकनेके कारण पलासी युद्धके दो महीने वाद ही सेण्ट जान्सके कब्रिस्तानमें दफनाये गये।

: ४० :

राजधानी छोड़कर सिराजुद्दौला भागे जा रहे हैं। रास्तेमें एक जगह लुत्फ़उन्निसा बेगमकी गाड़ी कीचड़में फँस जानेके कारण वे पीछे रह गईं। सिराजुद्दौला एक क्षण भी कहीं रुक नहीं सकते। कहीं किसीके हाथमें न पड़ जायँ। उन्हें आगे वढ़ना ही पड़ा। पति-पत्नी वरावरके लिए वहींपर विछुड़ गये।

सिराजुद्दौलाकी इच्छा थी कि मालदह होकर पूर्णियाका रास्ता पकड़ें और पटने पहुँच ल-साहवके साथ मिल जायँ। लेकिन अपने चलनेवाले रास्तेपर जगह-जगह लोगोंने उन्हें पहचान लिया है, ऐसा समझकर उन्होंने पूर्णियाका मार्ग छोड़ राजमहलका रास्ता पकड़ा।

राजमहलके निकट पहुँच भूख-प्याससे व्याकुल हो वे एक दरवेशके स्थानपर गये। वंगालके नवावने राजमहलके फ़क़ीरके पास एक टुकड़ा रोटीकी भिक्षा माँगी।

सिराजुद्दौलाको देखते ही फ़क़ीर दानाशाहने उन्हें पहचान लिया। पहचाननेकी वात ही थी। सिराजके हुक्मसे ही तो उनके नाक-कान काटे गये थे। उसका घाव तवतक भी अच्छी तरह सूखा नहीं था।

सिराजुद्दौलाको ज़रा-सा बैठनेके लिए कहकर दानाशाह सीधे राजमहलको चले गये। उस समय राजमहलके फौज़दार मीर जाफ़रके एक भाई मीर दाऊद थे। क्षण भरमें सैनिकोंको ले आकर मीर दाऊदने सिराजुद्दौलाको वन्दी कर लिया।

वंगालके नवाव सिराजुद्दौलाको फटा हुआ मैला कपड़ा पहनाकर एक छकड़ेपर चढ़ाकर उनको अपनी राजधानीमें वन्दोकी हालतमें ले आया गया। उस समय दोपहरका समय था। खा-पीकर मीर जाफ़र सोने जा रहे

थे। वन्दीको लेकर वे क्या करेंगे, यह स्थिर न कर सकनेपर वे सिराजुद्दौला-को अपने उपयुक्त पुत्र मीरनके हाथों सौंपकर सोने चले गये। जानेके समय केवल कह गये कि वन्दीको जिसमें खूब होशियारीसे रखा जाय।

मीरनने अपने दोस्तोंको वुलाकर कहा कि इस प्रकारकी एक मूल्यवान वस्तुको सारे दिन होशियार होकर हिफाज़त करनेपर तो मैं गया और क्या? उससे तो उसको एकदम खतम कर देना अधिक बुद्धिमानीका काम होगा।

लेकिन कोई भी अमीर उमराव सिराजके शरीरपर हाथ उठानेको राज़ी नहीं हुआ। तव महम्मदी वेंग नामक एक जल्लाद प्रकृतिका आदमी यह काम करनेको राज़ी हुआ। वह राज़ी क्यों न होता? सिराजुद्दौलाके बापने ही तो उसे अनाथ देखकर आदमी बनाया था। सिराजकी माँने ही तो समा-रोह कर उसकी शादी की थी। कृतज्ञताका काँटा तो उस समय भी उसके हृदयमें चुभ रहा है। उस काँटेको निकालनेका तो यही सुअवसर है। वह आदमी सिराजुद्दौलाकी हत्या करना नहीं चाहेगा तो कौन चाहेगा?

इसी नीच आदमीके पैरों पड़कर नवाव सिराजुद्दौला आरज़ू-मिन्नतकर प्राणोंकी भिक्षा माँगने लगे। रोकर बोले, वे और कुछ भी नहीं चाहते। केवल वहुत दूर किसी अज्ञात गाँवमें जाकर अज्ञात रूपसे एक साधारण प्रजाके समान रह सकनेपर ही वे चिर कृतज्ञ रहेंगे। उनका यह अनुरोध जिसमें एक वार मीर जाफ़रको वतलाया जाय।

लेकिन वतलानेपर भी कुछ परिणाम नहीं हुआ। नीच आदमी क्या कभी क्षमा कर सकते हैं? केवल वीर पुरुष ही यह कर सकते हैं। नीच व्यक्ति तो सर्वदा ही निष्करुणा भवन्ति। इसीलिए तो नीच आदमियोंके निकट प्रार्थी होने जैसा जघन्य पदार्थ इस दुनियामें नहीं है।

लौटकर महम्मदी वेगने सिराजुद्दौलाको हाथ-मुख धोकर कलमा पढ़ने-का समय तक भी नहीं दिया। साधारण चोर-बदमाशोंकी तरह मार-मार पीट-पीटकर सिराजकी हत्या कर डाली। २ जुलाई सन् १७५७ ई०। नियतिका कैसा कठोर खेल है!

यहीं कहानी खतम कर देना अच्छा होता। लेकिन परमेश्वरकी करुणा-का नाम लेकर जो मनुष्यका खून करते हैं, उसकी निर्दयताकी तो सीमा नहीं रहती। इसीलिए कुछ और कहना पड़ता है।

दूसरे दिन भोरमें एक हाथीकी पीठपर सिराजके मृत शरीरको चढ़ा कर सारे शहरमें रास्ते-रास्ते उस हाथीको घुमाया गया। जिसमें सबको विश्वास हो जाय कि नवाब सिराजुद्दौला अब इस जगत्में नहीं हैं।

हाथी चल रहा है। चलते-चलते एक जगह आकर अचानक रुक गया। तीन वर्ष पहले ठीक इसी जगह सिराजने हुसेन कुली खाँकी हत्या की थी। भयके साथ लोगोंने देखा कि सिराज़की मृत देहसे दो बूँद रक्त बहकर वहीं मिट्टीके ऊपर गिरा।

हाथी फिर चला। सिराजके पुराने मकानके सामने जब वह पहुँचा, उस समय भीड़ जमा हो गई है। चारों ओर खूब होहल्ला मचा हुआ है। घरके भीतरसे हाथीकी पीठपर बेटेकी मृत देहको देखते ही सिराजकी माँ अमीना बेगम खाली पाँव, अस्त-व्यस्त वेषमें काँपते-काँपते आकर हाथीके पैरोंपर घुटनेके बल गिर पड़ीं। बेग़म साहबा बेपर्द हो रही हैं, देखकर बग़लके मकानके एक उमराव अपने आदमियोंकी सहायतासे अमीना बेग़म-को पकड़कर अन्दर महलमें खींच ले जाकर पहुँचा दिया।

इसके बाद सिराजकी मृत देहको हाथीकी पीठसे बाज़ारके चौकमें उठाकर फेंक दिया गया। नराधमोंके मनमें एक बार भी नहीं आया कि शवको कम-से-कम किसी चीज़से ढक देना उचित है।

अन्तमें और नहीं रह सकनेपर मिर्जा जैनुल आबेदीन नामक एक दयालु उमरावने आकर सिराजकी मृत देहको उठा ले जाकर खुशबाग़में नवाब अलीवर्दी खाँकी बग़लमें ही दफ़ना दिया।

सब समाप्त हो गया। केवल पच्चीस वर्षकी उम्रमें चौदह महीने बंगालका कर्ता-धर्ता विधाता रहकर अन्तमें सिराजुद्दौलाकी ऐसी गति हुई।

अमीर या फ़क़ीर, देशी या विदेशी सबके क्रोधका पात्र होनेपर भी

अपने भाग्यहीन अभिशप्त जीवनमें सिराजुद्दौला एक बहुत बड़ी वस्तु प्राप्त कर गये थे। वह था एक महिमामयी नारीके हृदयका एकनिष्ठ प्रेम। वह नारी थी उनकी स्त्री—लुत्फ़उन्निसा बेगम।

सिराजुद्दौलाकी मृत्युके बाद मीर जाफ़रके इशारे पर मीरनने जब लुत्फ़उन्निसा बेगमके पास निकाहका प्रस्ताव भेजा, तब उन्होंने उत्तरमें कहलवा भेजा कि जो व्यक्ति बराबर हाथीकी पीठपर चढ़कर घूमता-फिरता रहा है, वह आज कैसे गधेकी पीठपर चढ़कर घूमे-फिरे।

नारीका हृदय! हज़ारों वर्षोंकी साधनासे भी उसका कूल किनारा पाया जा सकता है या नहीं? इसमें सन्देह है। उस मनके रहस्यको देवा न जानन्ति—देवता भी नहीं जान सकते, मनुष्य तो तुच्छ, नगण्य है। जितने सब अयोग्य, अक्षम, अकृती, अत्याचारी, अनाचारी पुरुषोंके ऊपर ही तो स्त्रियोंकी अपार करुणा, असीम स्नेह और जबर्दस्त मनका खिंचाव होता है।

इसके बाद मृत्युकाल तक (नवम्बर, सन् १७९० ई०), जितने दिन लुत्फ़उन्निसा बेगम मुर्शिदाबादमें रहीं, प्रतिदिन सन्ध्याको सिराजकी क़ब्र पर एक दीप जला देतीं। और उसीकी बग़लमें बैठकर अपने अन्तरकी प्रार्थना सुना आतीं। घने अन्धकारमें दूरसे उस प्रेमके दीपकको जलते हुए देख लोगोंका सर अपनेआप झुक जाता।

शेष

इतिहास-ग्रन्थके उपसंहारके रूपमें कुछ कहनेका चलन है। मैं उसीका अनुसरण कर रहा हूँ।

तब अभी तक मैंने जो कहा है वह निर्भय होकर कहा है। कारण यह है कि मेरे वैसा कहनेका आधार खूब पक्का और ठोस है। लेकिन अब जो कहने जा रहा हूँ वह बड़े भयके साथ ही कह रहा हूँ। इतिहासके बाहर नहीं होनेपर भी वह एक संकेत मात्र है।

संकेतका उद्देश्य यह नहीं है कि मैं अपने किसी आग्रहसे पुष्ट मतको

दूसरोंपर लादकर एक तर्कजालकी सृष्टि कर रहा हूँ। असली मतलब पण्डितोंका ध्यान इस ओर आकृष्ट करना है। आशा है कि उससे वहुतसे नये-नये तथ्य प्रकाशमें आएंगे। लेकिन वहुत संक्षेपमें ही कह रहा हूँ। क्योंकि आशंका इस वातकी है कि कहानीके भीतर तत्त्वकी वातोंकी अवतारणा करनेसे वहुत लोग क्षुब्ध हो सकते हैं।

पलासीके युद्धके बाद अंग्रेज़ोंपर कलकत्तेके बाशिन्दोंकी आस्था फिरसे लौट आई। देशी लोगोंमें जो इसके एक वर्षसे कुछ पहले कलकत्ता छोड़कर चले गये थे, वे सभी निश्चिन्त होकर फिर कलकत्ते लौट आये। उनकी देखादेखी और वहुतसे लोग भी आने लगे।

इसके फलस्वरूप कलकत्तेमें जो एक वंगाली हिन्दू समाज वना वह वास्तवमें कायस्थ-समाज था। व्राह्मण लोग कायस्थोंके पूज्य होकर यद्यपि उस समाजके सिरपर रहे फिर भी समाजका मेरुदण्ड कायस्थ ही थे। उन्हीं लोगोंके हाथमें समाजका जीना-मरना था। वैश्य लोग उस समाजके भिन्न-भिन्न अंग-प्रत्यंग थे।

पहलेके समाजकी तरह यह समाज वर्णाश्रम धर्मके ऊपर आश्रित नहीं था। यह समाज अंग्रेज़ोंकी कृपापर ही पल रहा था।

सन् १७७३ ई० से उस समाजका रूप स्पष्ट होने लगा। उसी सालमें वंगालके तत्कालीन गवर्नर वारेन हेस्टिंग्सने वंगालकी राजधानी मुर्शिदावादसे उठाकर कलकत्तेमें स्थापित की। इसके कुछ पहले अर्थात् सन् १७६५ ई०में दिल्लीके वादशाह शाह आलम द्वितीयने ईस्ट इण्डिया कम्पनी बहादुर को वंगाल, विहार, उड़ीसाकी दीवानीका परवाना दे दिया था।

साधारणतः हम लोगोंके मनमें आता है कि मुसलमानी शासनमें अंग्रेज़ों के शासनसे हम लोग वहुत अधिक सुखी थे। लेकिन यह धारणा एकदम भ्रमात्मक है और इसका साक्षी इतिहास है। कालके स्रोत जैसे तरल पदार्थपर भी इतिहास लकीर खींच देता है और वह लकीर एकदम वज्रके जैसी कठिन होती है। किसी भी तरह उसे मिटाया नहीं जा सकता।

अकवर वादशाहके शासनकालको छोड़कर अन्य किसी भी वादशाह अथवा नवावके शासनमें पार्थिव जगत्के लौकिक मामलोंमें हिन्दुओंकी उन्नतिकी कोई भी संभावना नहीं थी। साधारण हिन्दू प्रजा क्रीत दासोंके समान थी। सिर्फ़ दो पैरके जानवर। मनुष्यकी मर्यादा किसीने भी उन्हें नहीं दी। अतएव उन्होंने कूर्मवृत्ति अर्थात् मुसलमानोंके साथ नान-को-आपरेशनका रास्ता अख्तियार किया। उस हालतमें छुआछूतका रास्ता नहीं पकड़नेपर तो और कोई उपाय नहीं था।

यह तो कहना ही पड़ेगा कि अन्नकी थोड़ी सुविधा थी। लगता है इसीसे इस भ्रमकी उत्पत्ति हुई है। लेकिन उसके दूसरे वहुतसे कारण थे। उस समय जनसंख्या कम थी। देशमें शान्ति नहीं होनेपर जनसंख्यामें वृद्धि नहीं होती, यह एक अत्यन्त साधारण-सी वात है। युद्ध-विग्रहमें वहुत संख्यामें लोगोंका विनाश होता है। उसके पीछे-पीछे छायाकी तरह दुर्भिक्ष और महामारी आती है। जनसंख्याकी वृद्धिमें इनमें कोई भी सहायक नहीं है। उस कालमें युद्ध-विग्रह, अशान्ति, वीमारी भारतवर्षके एक कोनेसे दूसरे कोने तक नित्यनैमित्तिक व्यापार हो गये थे।

भोजनकी सुविधा सव समय ग़रीब प्रजाको थी, ऐसा समझना तो और भी भ्रम है। आजकलके समान अर्थोपार्जनके नाना प्रकारके उपाय उस समय नहीं होनेसे कृषि कार्य करनेवालोंकी संख्या ज़रूर ही बहुत अधिक थी। खेतमें अन्न रहता अवश्य लेकिन वह सब समय गृहमागतम् होता ऐसी वात नहीं थी। सर्वदा लड़ाई-झगड़ा, दंगा-फसाद एक-न-एक कुछ लगे रहनेके कारण वह अन्न प्रजाके भोगमें नहीं जाता। उसका अधिकांश राज्यके अधिकारी और सैन्य सामन्तोंके पेटमें जाता। वह भी दाम देकर खरीदा हुआ नहीं होता ज़बर्दस्ती छीना हुआ होता।

चीज़ोंका दाम सस्ता था। सस्ता होनेकी वात भी है। लोगोंके हाथमें रुपया नहीं था। यह तो इकनामिक्सका एक साधारण नियम है कि रुपया नहीं रहनेपर चीज़ोंका दाम कम हो जाता है। सस्ता होनेपर भी

हाथमें पैसा नहीं होनेसे उसे खरीदनेकी सामर्थ्य बहुतोंमें नहीं थी। बंगलाके पुराने हस्तलिखित ग्रंथों और चिट्ठी-पत्रोंको थोड़ा उलटने-पुलटनेसे देखनेको मिलता है कि चावलके दाममें आधे पैसेकी वृद्धि होनेसे चारों ओर हाहाकार मच गया है। साधारण लोग सिरपर हाथ रखे हुए उदास हैं।

मुसलमानी शासनके पहले भारतवर्षमें जो संस्कृति प्रतिष्ठित थी उसको ब्राह्मण धर्म नाम दिया जा सकता है। अंग्रेजीका ब्राह्मणिक कल्चर शब्द और भी अधिक भाव-व्यंजक है। इसकी प्रतिष्ठाका एक कारण था। उस कालमें ब्राह्मण लोग जो समाजको देते उससे बहुत कम समाजसे लेते। और जो देते उसे सम्पूर्ण रूपसे उड़ेल कर देते। स्वार्थसिद्धिके लिए हाथमें कुछ रख नहीं लेते।

इस कल्चरका एक बहुत बड़ा गुण था। वह एक समग्र कल्चर था। अर्थात् इहलोक और परलोक दोनोंका वह उन्नतिविधायक था। कोई भी लोक उसके पास अवहेलनाकी वस्तु नहीं थी। दोनों लोकोंके ऊपर उसकी समान दृष्टि थी। इसीलिए उससे एक साथ ही अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष—चतुर्वर्गके फलकी प्राप्ति होती।

लेकिन मुसलमानी कालमें एकदम चक्र घूम गया। इहलोकमें किसी प्रकार-की उन्नतिकी आशा न देख हिन्दुओंने पार्थिव काम्य वस्तुओंको तिलांजलि देकर पार-लौकिक विषयोंमें अच्छी तरह मन लगाया। फलस्वरूप लक्ष्मीने तो उन्हें छोड़ ही दिया, सरस्वतीने भी उन्हें त्याग दिया। साथही उन्हें धर्मको भी विसर्जन देना पड़ा। इहलोक तो गया ही परलोक भी जर्जर हो गया।

ब्राह्मण आचार्योंके स्थानपर ब्राह्मण गुरु-पुरोहितोंकी प्रधानता हो गई। अपनी स्वार्थ-सिद्धिके लिए उन्होंने अज्ञानता, अविद्या और अकल्याण-का प्रचार किया। झूठमूठ उन लोगोंने लोगोंको समझाया कि इस संसारमें जो जितना कृच्छ्र-साधन करेगा, सांसारिक व्यापारोंकी उन्नतिसे जो जितना उदासीन होगा संसारमें जो जितना कष्ट पाएगा, स्वर्गराज्यमें वह उतना ही डबल प्रोमोशन पाता रहेगा।

हिन्दुओंने उसे ही मान लिया। उस समय जैसी अवस्था थी, बिना माने कोई उपाय नहीं था। भगवान्‌को आराधनाको छोड़कर उन्होंने एकान्त भावसे मनुष्यकी पूजा शुरू की। कई आचार, अनुष्ठानको उन्होंने धर्म-का स्थान दिया। उस आचारमें विचारका कोई स्थान नहीं था। वह आचार-विभेदपर विभेदकी सृष्टि करता गया। फलस्वरूप दुर्दशापर दुर्दशा, दुर्गतिपर दुर्गति भोगनी पड़ी।

गुरु-पुरोहितोंको और एक सुविधा थी। उस समय बहुतसे देव-देवियों-का आविर्भाव हो गया था। वे तैंतीस करोड़ थे। सभी सन्तुष्ट हुए, कोई भी नहीं छूट पाये। तैंतीस करोड़ लोगोंमें सबके बाँटे एक-एक पड़े। जीविकाका और कोई उपाय नहीं कर सकनें पर गुरु-पुरोहितोंने उन सब देवी-देवताओंको लेकर व्यवसाय चला दिया। कितने प्रकारके भौतिक, दैविक, आधिदैविक, अनैसर्गिक क्रिया कलापोंको उन्होंने जुटाया कि जिसका ठिकाना नहीं। उससे गुरु-पुरोहितोंका पेट भरा अवश्य लेकिन समाजका कोई कल्याण, किसी प्रकारंकी उन्नति नहीं दीख पड़ी।

प्राचीनकालका हम लोगोंका ब्राह्मण धर्म—जो धर्म शक्तिशाली था, वीरोंका धर्म था, जो सूर्यकी तरह चमकता, जिसका अनुष्ठान सबको लेकर सबके सामने होता—वही धर्म तन्त्र मन्त्रके गुप्त मार्गमें प्रवेश कर निर्बलों-का धर्म होकर छिपे रूपसे अन्धकारमें इस उद्देश्यसे आचरित होने लगा कि उसके द्वारा इस संसारमें राज्य करनेकी कुछ शक्ति फिरसे पाई जाय। लेकिन ऐसा भी क्या संभव है?

सांसारिक उन्नति करानेवाली विद्याको छोड़ देनेसे उस समयका हम लोगोंका साहित्य या तो खुल्लमखुल्ला श्रृंगार रसात्मक है अथवा देव-देवी या नर-देवताकी स्तव-स्तुति परक है और नहीं तो बहुत अधिक हुआ तो मर्मी सन्त भक्तोंकी ऊबा देनेवाली नाकके सुरमें की हुई हाय-हाय है। शक्तिशाली, सर्वव्यापी ब्राह्मण-शास्त्र भी धीरे-धीरे न जाने कहाँ विलुप्त

हो गये इसका पता नहीं चलता। विद्याके बदले अविद्या ही हम लोगोंके सिरपर सवार हो गई।

कायस्थ वंशके लोग तो जीविकोपार्जनके लिए पेशेवर गुरु-पुरोहित हो नहीं सकते थे और उन्हें भी जीविका निर्वाहके लिए कोई उपाय चाहिए। उनकी जीविका बुद्धिपर निर्भर करती थी। अंग्रेज़ोंके आश्रयमें कलकत्तेमें उन्होंने ही एक बुद्धिजीवी समाजकी प्रतिष्ठा की।

पहलेसे ही कायस्थोंको क़लमके पेशेका अभ्यास था। अब वह कलकत्तेमें खूब काम आया। उन्हें पाकर अंग्रेज़ोंको भी कुछ कम लाभ नहीं हुआ। इस समय वे केवल व्यापारी ही नहीं रह गये थे। उन्हें अब एडमिनिस्ट्रेशन भी चलाना पड़ता। एडमिनिस्ट्रेशन चलानेमें कलकत्तेके कायस्थ सहायक हो गये।

धीरे-धीरे अपने आश्रित ब्राह्मणोंको भी कायस्थोंने खींच लिया। कुलीन ब्राह्मणों, जिन्हें समाजके नियमानुसार गुरु-पुरोहित होनेमें वाधा थी, उनका पेशा बहुविवाह था। लेकिन उन लोगोंने जब देखा कि कुलके व्यवसायसे कायस्थ-वृत्तिमें अधिक लाभ है तो इस दलमें आ मिलनेमें उन्हें भी कोई आपत्ति नहीं हुई।

मुंशी नवकृष्ण उस समय महाराजा नवकृष्ण वहादुर हो गये थे। सुतोनुटि ग्रामके वे मालिक थे। वे उसी गाँवमें ब्राह्मणोंको विना मालगुज़ारी के वास करनेकी ज़मीन दान करने लगे। इससे उनके इहलोक, परलोक दोनों लोकोंका ही कल्याण हुआ। सामाजिक मामलोंमें एक दल बुद्धिमान ब्राह्मणोंकी सहायता पाकर नवकृष्ण कुलीन कायस्थ नहीं होनेपर भी कलकत्तेके समाजपति हो गये। ब्राह्मणोंको दान देना बहुत पुण्यका काम है—चाहे वह भूमिदान हो या गोदान—यह धारणा उस समय भी लोगोंके मनमें बद्धमूल थी। इसलिए महाराजा वहादुरने बहुत अधिक पुण्य अर्जन किया इसमें किसीको ज़रा भी सन्देह नहीं रहा। नवकृष्णने एक ढेलेसे दो पक्षियोंका शिकार किया।

अंग्रेज़ोंके सान्निध्यमें आ इस बुद्धिजीवी समाजके लोगोंने देखा कि इहलोकमें उन लोगोंके भाग्यमें भी सुख है, अभ्युदय है। उन्होंने अच्छी तरह समझा कि अर्थका चाहे जितना ही अनर्थ कहकर वर्णन किया जाय लेकिन अर्थ ही मृत्युलोकके मानव समाजके व्यावहारिक मामलोंका मूल आधार है। अर्थकी अवहेलना करनेपर समाज कभी भी अच्छी तरह नहीं गढ़ा जा सकता। और अर्थके सम्बन्धमें थोड़ा निःशंक और निश्चिन्त नहीं होनेपर उस समाजका भविष्य भी अन्धकारमय हो जायगा। ये दोनों बातें ही हिन्दुओंके लिए बिल्कुल नई थीं। लेकिन दोनों ही कलकत्तेमें सम्भव थीं।

अंग्रेज़ोंकी छायामें भौतिक (वैपथिक) उन्नति हो रही है यह देखकर कलकत्तेके देशी समाजकी आँखें खुल गईं। ऐहिक मामलोंमें फिरसे मन रमा। इहलोककी आशा, आकांक्षा फिरसे लौट आई। प्रथम-प्रथम उससे थोड़ी बुराई भी हुई। सुननेमें आता है कि एक जातिके लोग हैं जो मांस-मछली नहीं छूते लेकिन एक बार आमिषका स्वाद पानेपर मांसके लिए जान देने लगते हैं। यहाँ भी यही हुआ। कलकत्तेका हिन्दू समाज सन्तुलन नहीं रख सका। अर्थकी ओर मनके अधिक झुकावसे सचमुचमें खूब अनर्थ हुआ। इसके परिणामस्वरूप आगे चलकर इस समाजने अत्यन्त कुत्सित रूप ग्रहण किया था। उसका रूप एकदम बीभत्स था। अर्थकी प्रचुरता, ऐश्वर्यके विलास तथा रुपयेकी गर्मीको लेकर आपसकी खींचातानी, मत्तता, दलबन्दी, परस्पर विद्वेषका बोलबाला हो गया। वह एक अत्यन्त ही लज्जाकर बात थी।

लेकिन धीरे-धीरे घड़ीका पेण्डुलम फिर अपनी जगहपर चला आया। केवल बुद्धिके ऊपर तो समाजकी प्रतिष्ठा नहीं होती। बुद्धिके साथ ज्ञान चाहिए। ज्ञान आता है विद्यासे। ईसवी सन्‌की उन्नीसवीं शताब्दीके प्रथम दशकके बाद ही कलकत्तेमें विद्याकी प्रतिष्ठा हुई। उस समय उत्तरापथमें लार्ड लेक और दक्षिणापथमें सर आर्थर वेलेस्ली (बादमें ड्यूक आफ वेलिंगटन) ने मराठोंको हराकर ब्रिटिश राज्यकी बुनियाद पक्की कर दी थी। देशमें बहुत दूरतक शान्ति आ गई थी।

लेकिन उस समय भी विद्या प्रचारकी ओर अंग्रेज़ी सरकारकी दृष्टि नहीं गई थी। कई ग़ैर सरकारी सहृदय अंग्रेज़ोंकी सहायता लेकर देशी लोगोंने अपने ही प्रयत्नसे कलकत्तेमें विद्याचर्चाका काम शुरू कर दिया। उनके मनमें उस समय सब कुछ जानने, सब कुछ समझने तथा सब कुछ सीखनेकी कैसी प्रबल आकांक्षा, कैसा कठिन उत्साह तथा कैसी प्राणपण चेष्टा थी। मरणासन्न बंगाली हिन्दू समाज जैसे मन्त्र बलसे सहसा जाग उठा और देह झाड़कर खड़ा हो गया।

सुविधा भी प्राप्त हो गई थी। विद्या प्रसारके तीनों अंग—प्रेस, समाचारपत्र और स्कूल-कालेज—कलकत्तेमें प्रवेश पा चुके थे। किन्तु इन तीनोंमें किसीकी भी स्थापनामें कम्पनीका कोई हाथ नहीं था।

हिन्दू समाजके भीतरकी आग एकदम बुझ नहीं गई थी। राखसे ढँकी हुई थी। विद्याने उसे फूँककर उड़ा दिया। अन्धकार-युग चला गया और प्रकाश-युग आ गया। यूरोपमें जिसके होनेमें आठ सौ वर्ष लगे थे, ठीक वही चीज़ कलकत्ता-समाजमें पलासी-युद्धके बाद सत्तर वर्षोंके भीतर सम्भव हो गई।

कलकत्तेके समाजमें विद्या और बुद्धिको एकत्र कर राजा राममोहन रायने ज्ञानकी धारा बहा दी। वे कलकत्ताके रहनेवाले नहीं थे। लेकिन जिस कामका भार लेकर उन्होंने जन्म-ग्रहण किया था उसके लिए उन्हें कलकत्तेमें अपना निवास-स्थान बाध्य होकर उठा लाना पड़ा। कलकत्तेके समाजको छोड़कर और अन्य कहीं उनके लिए उपयुक्त स्थान नहीं था।

राममोहन रायके धर्मको लेकर जो वाद-विवाद है वह कोई बड़ी वस्तु नहीं है। वह केवल उपलक्ष्य है, बिल्कुल सामयिक है। किसी धर्म-सम्प्रदाय-के प्रतिष्ठाता होने लायक इमोशनलिज्म अथवा भावावेग राममोहन रायमें किसी भी समय नहीं था। उनकी दृष्टि सम्पूर्ण रूपसे ज्ञानकी दृष्टि थी। ज्ञानकी बुनियाद पर आधारित विचार बुद्धिको राममोहन रायने अपने सम-सामयिक देशी-समाजमें फिरसे ला दिया था। यही उनकी सबसे बड़ी देन

है। एक शब्दमें उन्होंने ही बंगाली मनको वर्तमान कालके उपयोगी द... दिया था। और यहीं वे सचमुचके ब्राह्मण आचार्य थे, गुरु-पुरोहित नहीं।

राममोहन रायके इस दानको उनके समयके सब लोगोंने ग्रहण कर लिया था ऐसी बात नहीं है। बहुतोंने इस दानका प्रत्याख्यान किया था। लेकिन तो भी क्रान्तदर्शी ऋषियोंकी तरह राममोहन रायने ज़ोरके साथ ही कहा था, विचार बुद्धिसम्पन्न हो, ज्ञानके ऊपर प्रतिष्ठित हो, आलोकमें बैठ ऐसी साधना करो जिस साधनामें ऐहिक सुख है और पारलौकिक मोक्ष भी है। उसीको थोड़ा सरस ढंगसे उन्होंने फिर कहा है, भुक्ति-मुक्ति दोनों एक साथ होना चाहिए। ठीक। इहलोकका कल्याण नहीं होनेपर तो परलोकमें मंगल नहीं है। यह तो खूब ही सत्य है।

राममोहन रायके दानका फल अपने पूर्वजोंसे अधिक इस समय हम लोग ही भोग कर रहे हैं। हम लोगोंने अच्छी तरहसे जान लिया है कि हम लोगोंकी आँखोंके सामने ही एक अत्यन्त अद्‌भुत, एक अत्यन्त आश्चर्यजनक भौतिक राज्य पड़ा हुआ है। यह राज्य स्वर्गके राज्यसे कुछ कम नहीं है। उसीके केन्द्रमें है मनुष्य जाति—विधाताकी एक अपूर्व सृष्टि। उसी मनुष्य जातिके सामाजिक कल्याणमें ही चतुर्वर्ग फलकी प्राप्ति है। उस सामाजिक कल्याणकी अवहेलना करनेपर है 'महती विनष्टिः'।

बुद्धिके साथ विद्याके संयोगसे कलकत्ताके समाजमें जो ज्ञानोदय हुआ था उससे एक नये प्रकारकी संस्कृतिका जन्म हुआ। उसका और कोई युक्तिसंगत नाम न पाकर उसको मैं कलकतिया कल्चर कहता हूँ। उसको केवल शहरी कल्चर कहना काफ़ी नहीं होगा। इसके पहले ही बंगाली हिन्दू समाजमें शहरी कल्चर दीख पड़ा था। वह नदिया कल्चर था। लेकिन उसमें बुद्धिकी दीप्ति रहनेपर भी ज्ञानकी ज्योति नहीं थी। ज्ञान सर्वव्यापी है। कलकतिया-कल्चरने दो दिनोंमें ही नदिया-कल्चरको ग्रास कर लिया।

लेकिन कलकतिया-कल्चर न देशी है न विलायती, दोनों मिलकर एक वर्णसंकर कल्चर है। लेकिन खूब अच्छी तरह चूल-चूल मिलकर एक हो गया

कोई भी एक दूसरेसे विच्छिन्न हो अपने-आप प्रधान नहीं हुआ है। यह बंगाल प्रान्त ही था कि ऐसा अद्‌भुत संमिश्रण संभव हो पाया। क्योंकि बंगालमें ही सदासे विभिन्न कल्चरको एक स्थानपर संमीभूत होते देखा गया है।

और ठीक इसी कारणसे कलकतिया-कल्चरमें प्रारंभसे ही एक सार्वभौम भाव देखा जाता है। कहा जा सकता है कि उसमें प्रान्तीयता नहीं है। कलकतिया समाज तो अर्थ, विद्या, वुद्धि और ज्ञानके ऊपर ही गठित है। इनमें किसीको भी तो जाति नहीं है, सम्प्रदाय नहीं है। देश नहीं है। उसमें कोई म्लेच्छ-अम्लेच्छ नहीं है, छुआछूत नहीं है, पूर्व-पश्चिम नहीं है। कलकत्ता शहरमें कितने विभिन्न प्रकारके लोगोंका समावेश है और कितने विभिन्न प्रकारके लोगोंके साथ उसका आदान-प्रदान, कारवार चलता है। संकीर्णता आयेगी कहाँसे ?

और कुछ दिनोंके वाद ज्ञानके साथ विज्ञानका योग हुआ। जैसे सोनेमें सुहागा पड़ा। सार्वभौम भाव उससे और अधिक समृद्ध हुआ। इसीके फलस्वरूप नये वंगाली कल्चरको कलकत्तेकी चौहद्दीके भीतर रोककर रखा नहीं जा सका। शहरकी सीमाको छोड़ वंगाल प्रान्तके घेरेको पारकर धीरे-धीरे यही कल्चर समस्त भारतवर्षमें फैल गया।

इस प्रसंगमें इतना कहना पड़ता है कि इस नये कल्चरके फैलनेमें व्रिटिश इम्पायर सहायक हुआ। वड़ा साम्राज्य नहीं होनेपर कल्चरका प्रसार नहीं होता। अशोकका साम्राज्य नहीं रहनेपर वौद्ध-कल्चर, समुद्रगुप्तका साम्राज्य नहीं रहनेपर व्राह्मण-कल्चर, कान्सटैनटाइनके नहीं रहनेपर क्रिश्चियन-कल्चर तथा अकवरका साम्राज्य नहीं रहनेपर मुग़ल-कल्चर इनमें किसीका भीं विकास और प्रसार होता कि नहीं इसमें सन्देह है।

भौतिक समृद्धिको प्रत्यक्ष देखनेसे नये कलकत्ता-समाजमें एक विचित्र स्पन्दन हुआ। उसका झोंका समाजके सम्पूर्ण जीवनमें आकर लगा। सवसे अधिक वँगला-साहित्य दोलायित हुआ। यह ऐसा झोंका था कि ईसवी सन्

उन्नीसवीं शताब्दीके प्रायः आरम्भसे कलकत्ता शहरमें जिस बँगला-साहि
का विकास हुआ उसकी तुलना उसीसे की जा सकती है।

पहलेके बँगला-साहित्यसे इस नये बँगला-साहित्यका जैसे कोई सादृश्य नहीं है। मनुष्यके सुख-दुःख, आशा-आकांक्षाको लेकर मनुष्यके ही सुख-कल्याणके लिए इस साहित्यका निर्माण हुआ है। उस साहित्यमें जहाँ-जहाँ देवी-देवता इस मृत्युलोकमें आते हैं वहाँ-वहाँ वे भी मनुष्यके हाथोंमें पड़कर एकदम मनुष्य बन गये हैं।

बड़ी मजेदार बात है। कलकत्तेके बँगाली लेखकोंकी क़लमकी चोटसे बँगला गद्य क्रमशः साहित्यका वाहन हो गया। होगा क्यों नहीं? गद्य जो ज्ञानकी भाषा है। इसके पहले बँगला गद्य कारबारकी भाषा थी। उसमें चिट्ठीपत्री लिखी जाती, दस्तावेज़ लिखे जाते, हिसाब-किताब रखा जाता। लेकिन उसके सहारे कभी भी साहित्यकी रचना की जा सकेगी, पहले स्वप्न-में भी कोई इस बातकी कल्पना नहीं कर सकता था। कलकत्तेके नये समाजने इसीको सम्भव कर दिखाया।

पहले अंग्रेज़ छोकरा-सिविलियनोंके पढ़नेके लिए बंगला गद्यमें कई टैक्स्ट बुक लिखे गये। मृत्युंजय विद्यालंकार भट्टाचार्यने अपने लिखे हुए प्रबोधचन्द्रिका ग्रन्थकी प्रस्तावनामें स्पष्ट ही स्वीकार किया है 'अभिनव युवक साहेबजातेर शिक्षार्थी (नयी साहब जातिके युवकोंकी शिक्षाके लिए) यह ग्रन्थ रचित हुआ है।

इसके बाद राजा राममोहन रायने बँगला गद्यमें थोड़ा रस ढाल दिया। फिर तो रास्ता खुल गया। लोगोंने चकित होकर देखा बंगला गद्यके द्वारा क्या नहीं किया जा सकता। हिसाब-किताबके बही-खाते लिखनेसे लेकर उसमें पद्यकी ध्वनि तक लाई जा सकती है।

उस ओर, कलकतिया समाजके हाथोंमें पड़कर बँगला काव्य सचमुच कविता बन गया। यात्रा-पांचाली (नाटक-मण्डली और बटगायन) की केंचुलको छोड़कर उसने नाटक, प्रहसन, ड्रामाका रूप धारण कर लिया।

में कोई सचमुचकी ट्रेजेडी हुआ और कोई असली कामेडी। पर लिरिक जितनी वंगालियोंको मज्जागत है उतना नाटक नहीं। इसीलिए नाटक वंगालियोंके हाथमें पड़कर चमका नहीं। वँगला गद्यका स्वर बदल जानेसे वंगालियोंकी कहानी-रचनाने हितोपदेशकी कहानियोंको छोड़कर नावेलका रूप लिया। गद्यकी लिरिक छोटो कहानियाँ हैं। वंगालियोंके हाथमें पड़कर वह वँगला-साहित्यकी एक अपूर्व सम्पत्ति वन गयी। अन्तिम सीमा तक पहुँचा क्या ? जो लिखा गया वह पृथ्वी भरके पण्डितोंके थालेमें परोसा जा सकता है। एकधुष्टता खतम होकर वैचित्र्यकी चंचल पुलकराशिका जैसे सहसा वँगला साहित्यके गर्भमें प्रवेश हुआ।

ईसवी सन्‌की अठ्ठारहवीं शताव्दीके अन्त होनेके कुछ पहलेसे ही विलुप्त प्राच्यविद्याका उद्धार शुरू हुआ। वँगला साहित्यको समृद्ध करनेमें वह बहुत सहायक सिद्ध हुआ था। विदेशी लोगोंने ही प्राच्य विद्याको विस्मृतिके गर्भसे वाहर लाकर सवके सामने रखा था, इसे भूल जाना महान् अपराध होगा। इस दिशामें एशियाटिक सोसाइटी और उसके प्रथम प्रेसिडेण्ट सर विलियम जोन्सकी देनका ऋण चुकाना सम्भव नहीं है।

इस सम्वन्धमें वारेन हैस्टिंग्सको विना याद किये नहीं चल सकता। वर्क शेरिडनकी स्पीचके वेग तथा मेकालेकी क़लमके प्रभावसे हम लोग हेस्टिंग्सको दुश्मन ही मान लेते हैं। हम यह भूल जाते हैं कि हेस्टिंग्सके जैसे ज्ञानी, गुणी, विद्यानुरागी अंग्रेज गवर्नर इस देशमें बहुत ही कम आये हैं। प्राच्य विद्याके उद्धारके सम्वन्धमें हेटिंग्सके प्रयत्नोंकी कोई सीमा नहीं थी। उनके समयमें इस विषयमें जिसे भी थोड़ा बहुत ज्ञान था उसे किसी-न-किसी तरह कुछ-न-कुछ सहायता देकर हेटिंग्सने उसका उत्साह वढ़ाया था। यह किंवदन्ती नहीं है, इतिहासका तथ्य है।

विदेशियोंका अनुसरण कर हम लोग भी क्रमशः वैज्ञानिक प्रणालीसे प्राच्य विद्याका रिसर्च करनेमें पारंगत हो उठे। नये ढंगका मन हो जानेसे हमलोग उस विद्याको अव केवल भक्तिमूलक दृष्टिसे नहीं देखते बल्कि

तर्कमूलक दृष्टिसे देखते हैं। और युक्ति तथा तर्कके सहारे हम देखते हैं इसलिए उसकी प्रकृत गरिमाको समझ सकते हैं, उसका उचित मूल्यांकन कर सकते हैं और सचमुचमें उसकी महिमाका प्रचार कर सकते हैं।

साहित्यके भीतर भी फिर वही अर्थकी वात लानी पड़ रही है। कलकत्ता शहरका नया वुद्धिमान, ज्ञानवान समाज ही इस साहित्यका स्रष्टा है। वुद्धिमान, ज्ञानवान समाजने ही धीरे-धीरे मध्यवित्त गृहस्थ समाजका रूप ले लिया। धनी लोग तो धनके जालमें फँसकर अर्थके दास हो जाते हैं। श्रमिकोंके हाथमें वचतके रुपये रहते नहीं। उन्हें तो रोज़ कमाना, रोज़ खाना है। इसीलिए इन दोनों वर्गोंके लोग किसी भी देशमें कभी-भी वड़ी आइडिया नहीं दे पाते। ज्ञान-विज्ञान, साहित्य, कला, शिल्प-की भी सृष्टि वे नहीं कर पाये। मध्यवित्त श्रेणीके लोग ही इसमें समर्थ होते हैं। कभी-कभो इसमें दो-चार व्यतिक्रम अगर दीख भी पड़े तो वह व्यतिक्रम नियमका प्रमाण ही मात्र है।

कलकत्तेके नवीन समाजके मध्यवित्त वालोंके हाथमें खा-पीकर कुछ रुपयेकी वचत होने लगी और उन वचाये हुए रुपयोंको विना किसी दुश्चिन्तताके रक्षा करनेकी व्यवस्था भी दीख पड़ी। रुपये रखनेके सम्बन्ध-में यह निर्विघ्नता और निश्चिन्तता ब्रिटिश एडमिनिस्ट्रेशनकी ही देन है, यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा। केवल यही नहीं ब्रिटिश एडमिनिस्ट्रेशन-के फलस्वरूप यह मध्यवित्त समाज सम्मानके साथ ही अर्थोपार्जनमें भी समर्थ हो सका। रुपयेके लिए उन्हें धनियोंका आश्रित होकर खुशामदके लिए उनके मनमाने विचित्र ख्यालोंको सन्तुष्ट नहीं करना पड़ता। दूसरी ओर चोरी-डकैती कर रुपया इकट्ठा करनेके लिए भी वाहर नहीं निकलना पड़ता, सम्मान सहित अच्छे ढंगसे हो अर्थोपार्जनका उपाय निकल आया था। और इसीलिए वे समाजको वहुत-कुछ दे सके थे।

पुराने ज़मानेमें मेधावी ज्ञानी गुणी व्यक्तियोंके आश्रयदाता राजा और ज़मींदार लोग थे। हीनवृत्तिसे उन्हें छुटकारा दिलानेका उत्तरदायित्व इन्हीं

लोगोंपर था। मुसलमान राज्याधिकारियोंने हिन्दुओंके सम्बन्धमें इस उत्तरदायित्वको स्वीकार नहीं किया। वे साधारणतः पशुबलको ही जानते-समझते। फ़ौजके आदमियोंको ही सम्मान देते। बड़े-बड़े सेनापतियोंको जागीर देते।

इच्छा रहनेपर भी हिन्दू ज़मींदार सब समय इस उत्तरदायित्वको ग्रहण नहीं कर पाते। और जहाँ जितना भी किया था वहाँ लोगोंको अपने अधीन रख़कर किया था। उससे न फूल ही सुन्दर खिला और न फल ही अच्छा लगा।

ब्रिटिश गवर्नमेंटने भी सीधे इस उत्तरदायित्वको स्वीकार नहीं किया। वैसे अच्छे ढंगसे अर्थोपार्जनके अनेक रास्ते कर तथा उपार्जित धनकी रक्षा की व्यवस्था कर वे इस उत्तरदायित्वसे थोड़ा स्वतंत्र हो सके थे।

आर्टमें भी यही एक ही भौतिक दृष्टि लौट आई। कालीघाटके पटमें, कलकत्तेकी पुस्तकोंको चित्रित करनेके वुडकटमें, लिथोग्राफीमें तथा एन-ग्रेविंगमें देवी-देवताका अवलंबन छूट जानेसे इसी समय आर्टिस्टोंकी दृष्टि मनुष्योंकी ओर पड़नी आरम्भ हुई। इस बातको समझानेके लिए अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ेगा।

धार्मिक अनुष्ठानोंमें भी एक परिवर्तन दीख पड़ा। उसे देख कट्टर-पन्थियोंके हो-हल्ला मचानेपर भी कर्मकाण्ड प्रधान धर्म परसे लोगोंका विश्वास कम होता गया। धर्मके संबंधमें इतने दिनों तक उनकी जो दो बद्धमूल धारणाएँ थीं वे भी शिथिल हो आईं। इतने दिनोंतक वे विश्वास करते आ रहे थे कि धर्म कोई लौकिक वस्तु नहीं है। कुछ नहीं होनेपर वह धर्म ही क्या है? और धर्मकी प्राप्तिके लिए संसार-धर्मका त्याग करना चाहिए। संसार तो मायाके धोखेकी टट्टी है। वहाँ रहनेसे कौन-सा धर्म प्राप्त होगा?

लेकिन कलकतिया-कल्चरके वातावरणमें आदमी बननेवाले नवीन पन्थी लोगोंने उल्टा समझा। धर्ममें उन्होंने आडम्बरको स्थान देनेपर क्षोभ

प्रकट किया। धर्मके लिए वे संसारका त्याग करनेको भी राज़ी नहीं हुए। संसारकी गोदमें ही तो आदमी जन्म लाभ करता है। उसे छोड़कर मनुष्य और जायगा कहाँ? ज्ञान सम्पन्न भौतिक दृष्टि लेकर उन्होंने कहा—मनुष्य के लिए कल्याणकारी कर्मोंका अनुष्ठान ही तो धर्माचरण है। इसीलिए ईसवी सन्‌की उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भसे ही इस नये समाजके लोगोंका हाथ जन-कल्याणकारी संस्थाओंमें कम नहीं था।

इस नये प्रकारके धर्मके ज्ञानके फलस्वरूप व्यावहारिक नैतिकताका ज्ञान भी अधिक बढ़ गया। अधिक अध्यात्म-चर्चा करनेके फलस्वरूप नीति-बोध या मारल सेन्स इस देशमें बहुत ही कम हो गया था। आध्यात्मिक जगत्‌में तो नैतिकताका कोई बन्धन नहीं है। लेकिन लौकिक समाजमें नैतिकताका बन्धन नहीं रहनेपर मनुष्य कैसे साथ रह सकेंगे? यह मानना ही पड़ेगा कि मिशनरियोंके क्रिश्चियन धर्मके प्रचारका फल भले ही और कुछ न हो लेकिन नीति-बोध और ड्यूटीके उत्तरदायित्वके ज्ञानके प्रचारमें वह सहायक अवश्य हुआ था। क्रिश्चियानिटी अपने-आपमें मूल रूपसे लौकिक धर्म है।

इस नीति-बोधसे ही पैट्रियटिज़्मका जन्म हुआ है। नीतिज्ञानके फल-स्वरूप ही यह ज्ञान उत्पन्न होता है कि जो मनुष्य-समाजका स्वार्थ है। वही देशका स्वार्थ है। और जो देशका स्वार्थ है वही हमारा अपना स्वार्थ है। इस बोधका ही नाम पैट्रियटिज़्म है। वह लेकिन इस देशकी चीज़ नहीं है; इसलिए इसका कोई देशी नाम नहीं है।

मुसलमानी शासन-कालमें हिन्दुओंको देशसे कुछ मिलनेकी आशा नहीं दीख पड़ती थी। देशसे कुछ नहीं मिलनेपर देशके प्रति ममता होगी कहाँसे? मुसलमान भी इसे अपना देश नहीं समझते थे। इसके अलावा, पलासी-युद्धके कुछ पहलेके अधिकांश मुसलमान जो शासनके प्रमुख थे वे विदेशसे आये हुए थे, और कल्चरहीन, अस्त्र धारण करनेवाले फ़ौजके

आदमी थे। यह देश उनके लिए या तो केवल शासन या लूटके लिए था। अतएव उन्हें भी पैट्रियटिज़्मसे कोई वास्ता नहीं था।

ब्रिटिश शासनमें ही हम लोग फिरसे देशसे कुछ प्राप्त करने लगे। तभी हम लोगोंमें देशके प्रति अपनापनका भाव फिरसे लौट आया। इसी लोकमें एक साथ ही हम लोगोंको भुक्ति-मुक्ति प्राप्त हुई इसलिए हम लोगोंने देशसे प्रेम करना सीखा।

इस भुक्ति-मुक्तिका आह्वान आया था पलासी-युद्धके बाद ही। उसी पुकारसे बंगाली हिन्दू जाग्रत हो अपने भी मोहसे मुक्त हुए और समस्त भारतवर्षमें भी मुक्तिके रसका वितरण किया।

फिर विदेशी शासन हम लोगोंको असह्य हो उठा। सन् १९४७ ई०में ब्रिटिश शासनका अवसान हुआ। हमारी जीवन-यात्राने एक और मोड़ ली। अब एक और नये युगका उदय हुआ।

नव युगके इस सन्धिकालमें मनमें आता है कि हम लोग किस रास्ते चले हैं? समझ नहीं पाता। दो सौ वर्षोंके इतिहासको धो-पोंछकर क्या फिरसे हम लोग मध्ययुगके अन्धकारमें लौट हाथसे टटोलते हुए मरेंगे? क्या फिरसे हम लोग उसी राज्यकी स्थापना करेंगे—जिस राज्यमें एक ओर एक दल राज-कर्मचारी रहेंगे और दूसरी ओर क्रीत दासोंका एक समुदाय—जिसके मनमें कोई सुख-शान्ति नहीं, कोई आशा नहीं? नहीं जानता। समस्त संसारके साथ योग रख उसीसे क़दम मिलाकर चलते हुए हम लोग शौर्य-वीर्यमें, ज्ञान-विज्ञानमें, धन-सम्पत्तिमें, धर्म-कर्ममें संसारमें श्रेष्ठ स्थान ग्रहण करेंगे, न फिर अपने घरके कोनेमें बैठ माला जपते हुए फिर किसी उद्धारकर्त्ताको पुकारते रहेंगे? कह नहीं सकता।

इतिहास पढ़कर केवल यही जान सका हूँ कि विधाताके विधानमें कहीं किसी प्रकारकी अस्थिरता नहीं होनेपर भी सार्थकता अवश्य है। हम लोगोंके लिए वह सार्थक विधान क्या है—यह प्रश्न ही बना रह गया।

घटनाओं की तालिका

सन् १५५६ ई०—सन् १७५७ ई०

१५५६ अकबर दिल्लीका बादशाह; पानीपतका द्वितीय युद्ध।
१५५८ एलिजाबेथ, इंगलैण्डकी रानी।
१५७६ पठान नवाब दाऊद खाँकी पराजय। बंगालमें मुग़ल शासन-की स्थापना।
१५७८ पोर्तुगीजोंका हुगलीमें आगमन।
१५९४ मानसिंह बंगालके सूबेदार।
१६०० रानी एलिजाबेथ द्वारा ईस्ट इंडिया कम्पनीको चार्ट देना।
१६०२ डच ईस्ट इंडिया कम्पनीकी स्थापना।
१६०३ रानी एलिजाबेथकी मृत्यु। जेम्स प्रथम इंगलैण्ड के राजा।
१६०५ अकबर बादशाह की मृत्यु। जहाँगीर दिल्लीका बादशाह।
१६१२ सूरतमें अंग्रेजी कोठीकी स्थापना।
१६१५ जहाँगीरके दरबारमें सर टामस रो का दौत्य।
१६२४ सुलतान खुर्रम (शाहजहाँ) का विद्रोह।
१६२५ चुँचड़ामें डच-कोठीकी स्थापना। जेम्स प्रथमकी मृत्यु। चार्ल्स प्रथम इंगलैण्डका राजा।
१६२७ जहाँगीरकी मृत्यु।
१६२८ शाहजहाँ दिल्लीका बादशाह।
१६३२ हुगलीमें पुर्तगीजोंका उच्छेद।
१६३९ सुलतान शुजा बंगालके सूबेदार। मद्रासमें अंग्रेज़ी कोठीकी स्थापना।

१६४२ वालेश्वरमें अंग्रेज़ी कोठीकी स्थापना ।
१६४९ चार्ल्स प्रथमका शिरश्छेद ।
१६५२ सुलतान शुजा द्वारा अंग्रेज़ोंको आदेशपत्र देना । हुगलीमें अंग्रेजी कोठीकी स्थापना ।
१६५३ इंगलैण्डमें कामनवेल्थ शासनका प्रारम्भ ।
१६५६ जोव चारनकका भारत-आगमन । मुर्शिद कुली खां दक्षिण प्रदेशों-के दीवान ।
१६५८ औरंगज़ेबके द्वारा शाहजहाँका वन्दी वनाया जाना और दिल्लीकी गद्दीपर बैठना ।
१६६० मीर जुमला बंगालके सूबेदार । चार्ल्स द्वितीय इंगलैण्डके राजा ।
१६६१ पोर्तुगीज़ों द्वारा अंग्रेज़ोंको बम्बईका हस्तान्तरण । बम्बईमें अंग्रेज़ी कोठीकी स्थापना । बाण्डेलमें पोर्तुगीज़ गिर्जाका निर्माण ।
१६६३ शाइस्ता खां बंगालके सूबेदार ।
१६६४ फ्रांसीसी ईस्ट इंडिया कम्पनीका गठन ।
१६६६ शाहजहाँकी मृत्यु । औरंगज़ेब दिल्लीका बादशाह । शाइस्ता खाँ द्वारा पोर्तुगीज़ जलदस्युओंका दमन ।
१६६८ सूरतमें फ्रांसीसी कोठीकी स्थापना ।
१६७२ शिवाजीके विरुद्ध शाइस्ता खाँकी युद्ध यात्रा ।
१६७४ पांडिचेरीमें फ्रांसीसी कोठीकी स्थापना । शिवाजीका राज्याभिषेक ।
१६७९ शाइस्ता खाँ दुबारा बंगालके सूबेदार । औरंगज़ेबके द्वारा जज़िया टैक्सका फिरसे लगाया जाना ।
१६८० शिवाजीकी मृत्यु ।
१६८२ विलियम हेजेंस बंगालकी अंग्रेज़ी कोठीके प्रथम गवर्नर ।
१६८५ चार्ल्स द्वितीयकी मृत्यु । जेम्स द्वितीय इंगलैण्डके राजा ।
१६८६ जोव चारनक हुगलीमें कम्पनीके एजेण्ट । हुगलीमें मुग़ल-अंग्रेज़ोंका युद्ध । जोव चारनकका सुतानुटि आगमन ।

१६८७ जोव चारनककी हिजली यात्रा। हिजलीमें मुग़ल-अंग्रेज़ों का युद्ध। दूसरी वार जोव चारनकका सुतानुटि आगमन।

१६८८ कैप्टेन हीथका सुतानुटि आगमन। अंग्रेज़ोंकी चट्टग्राम यात्रा। चट्टग्रामसे मद्रास प्रत्यावर्तन।

१६८९ इब्राहीम खाँ वंगालके सूवेदार। जेम्स द्वितीयका सिंहासन त्याग। विलियम तृतीय इंग्लैण्डके राजा।

१६९० जोव चारनकका तीसरी बार सुतानुटि आगमन। सुतानुटिमें अंग्रेज़ी-कोठीकी स्थापना। चन्दननगरमें फ्रान्सीसी-कोठीकी स्थापना।

१६९३ जोव चारनककी मृत्यु। फ्रान्सिस एलिस कम्पनीके एजेण्ट। सर जॉन गोल्डसवराका सुतानुटि परिदर्शन।

१६९४ फ्रान्सिस एलिस बरखास्त। चार्ल्स आयर कम्पनीके एजेण्ट।

१६९५ शोभासिंहका विद्रोह।

१६९६ कलकत्तेमें फोर्ट विलियम-क़िला निर्माण आरम्भ।

१६९७ इब्राहीम खाँ बरखास्त। सुलतान आजीमुद्दीन (आजीमउश्वान) बंगालके सूबेदार।

१६९८ आजीमउश्वान द्वारा अंग्रेज़ोंको सुतानुटि, कलकत्ता और गोविन्दपुर ग्राम खरीदनेकी अनुमति प्रदान। सावर्ण चौधरियोंके पाससे अंग्रेज़ों का तीन ग्राम खरीदना।

१६९९ कलकत्तेमें प्रेसिडेन्सीकी स्थापना। नई ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी नींव।

१७०० सर चार्ल्स आयर कलकत्तेके प्रथम प्रेसिडेण्ट। र्‍याल्फ शेल्डन कलकत्तेके प्रथम अंग्रेज़ ज़मींदार।

१७०१ मुर्शिद कुली खाँ बंगालके दीवान। जॉन वियार्ड कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट।

१७०२ औरंगजेब द्वारा अंग्रेज़ोंका व्यापार उन्मूलन। विलियम तृतीयकी मृत्यु। ऐन इंग्लैण्डकी रानी।

१७०७ औरंगजेबकी मृत्यु। बहादुर शाह दिल्लीके बादशाह। कलकत्ते-का सर्वे।

१७०९ कलकत्तेमें सेण्ट ऐन्स गिर्जेकी प्रतिष्ठा। पुरानी और नई ईस्ट इण्डिया कम्पनीका संयोग।

१७१० मुर्शिद कुली खाँ दूसरी बार बंगालके दीवान। एनटनी वोएल्टडेण्ट कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट। जॉन रासल कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट।

१७१२ बहादुर शाहकी मृत्यु। जहाँदार शाह दिल्लीके बादशाह। जहाँदार शाहकी हत्या।

१७१३ फर्रुख सियर दिल्लीके बादशाह। रबर्ट हेजेस कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट। मुर्शिद कुली खाँ बंगालके डिप्टी सूबेदार।

१७१४ रानी ऐनकी मृत्यु। जर्ज (प्रथम) इंगलैण्डके राजा।

१७१७ बादशाह फर्रुख सियरके दरबारमें अंग्रेज़ोंका दौत्य।

१७१८ मुर्शिद कुली खाँ बंगालके सूबेदार। बादशाह फर्रुख सियर द्वारा अंग्रेजोंको फर्मान प्रदान। स्यामुयेल फिक् कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट।

१७१९ बादशाह फर्रुख सियरकी हत्या। रफीउद्दौला दिल्लीके बादशाह। रफीउद्दराज दिल्लीके बादशाह। मुहम्मद शाह दिल्लीके बादशाह।

१७२० कलकत्तेमें पुर्तगीज गिर्जेका निर्माण।

१७२२ जॉन डीन कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट।

१७२४ कलकत्तेमें आर्मेनियन गिर्जेका निर्माण।

१७२५ एडवर्ड स्टिफनसन एक दिनके लिए कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट। हेनरी फ्रैंकलैण्ड कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट।

१७२७ कलकत्तेमें मेयर्स कोर्ट और दूसरे कोर्टोंकी प्रतिष्ठा। मुर्शिद कुली खाँकी मृत्यु। शुजाउद्दीन खाँ बंगालके नवाब। जर्ज प्रथमकी मृत्यु। जर्ज द्वितीय इंग्लैण्डके राजा।

१७२८ जॉन डीन दूसरी बार कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट।

१७३० गोविन्द मित्रके नवरत्न मन्दिरकी प्रतिष्ठा।

१७३१ जॉन स्टैकहाउस कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट।

१७३३ अलीवर्दी खाँ बिहारके डिप्टी सूबेदार।

१७३७ कलकत्तेमें भयानक आँधी ।

१७३८ टॉमस ब्रैड्डिल कलकत्तेके गवर्नर ।

१७३९ शुजाउद्दीन खाँकी मृत्यु । सरफराज खाँ बंगालके नवाव । नादिर-शाह द्वारा दिल्लीका लूटा जाना ।

१७४० गिरियार–युद्धमें सरफराज खाँ मारे गये । अलवर्दी खाँ बंगाल के नवाव ।

१७४२ बंगालमें वर्गी हंगामेका सूत्रपात । कलकत्तेमें मराठा डिचका खोदा जाना । कलकत्तेमें साहवोंके मुहल्लेका रेलिंसे घेरा जाना ।

१७४४ डुप्लेक्स पण्डीचेरीके गवर्नर ।

१७४५ जॉन फ्रस्टर कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट ।

१७४६ दक्षिणमें अंग्रेज़-फ्रान्सीसीके युद्धका आरम्भ ।

१७४८ वादशाह मुहम्मद शाहकी मृत्यु । अहम्मद शाह दिल्लीके वादशाह । विलियम वारवेल कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट ।

१७४९ ऐडम डसन कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट ।

१७५१ आर्कटमें क्लाइवकी युद्ध-विजय । मराठोंके साथ अलीवर्दी खाँकी सन्धि । सन्धिके फलस्वरूप मराठोंको उड़ीसा-प्रदेश मिलना ।

१७५२ विलियम फिट्स कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट । रोजर ड्रेक कलकत्तेके प्रेसिडेण्ट ।

१७५३ कम्पनी द्वारा दलालके बदले गुमाश्ता प्रवर्तन ।

१७५४ डुप्लेक्सका स्वदेश प्रत्यावर्तन । दक्षिणमें अंग्रेज़-फ्रान्सीसीके युद्धका अवसान । बादशाह अहम्मद शाह गद्दीसे हटाये गये । आलमगीर द्वितीय दिल्लीके वादशाह । डेनिश कम्पनी द्वारा श्रीरामपुरमें कोठीकी स्थापना ।

१७५५ क्लाइव और ऐडमिरल वाटसन द्वारा गिरियार विजयदुर्ग जय ।

१७५६ अलीवर्दी खाँकी मृत्यु । सिराजुद्दौला बंगालके नवाव । यूरोपमें अंग्रेज़-फ्रान्सीसियोंके बीच सप्तवर्षीय युद्धका आरम्भ ।

१७५६ सिराजुद्दौला द्वारा कासिमबाज़ारकी कोठीका लूटा जाना (२४ मई)।
,, सिराजुद्दौला द्वारा कलकत्ता आक्रमण (१६ जून)।
,, सिराजुद्दौलाका फोर्ट विलियम क़िलेपर अधिकार (१६ जून)।
अन्धकूप-हत्या (२० जून)। अंग्रेज़ोंका फलता भागना।
,, सिराजुद्दौलाके साथ मनीहारी-युद्धमें पुर्नियाके नवाब शौकतजंगकी मृत्यु (१६ अक्तूबर)।
,, क्लाइव और वाटसनका फलता आगमन (१५ दिसम्बर)।
,, बजबजका युद्ध। अंग्रेज़ोंका बजबजके क़िलेपर अधिकार (२९ दिसम्बर)। अहम्मद शाह अब्दाली द्वारा मथुरा और दिल्लीका लूटा जाना।
१७५७ क्लाइव और वाटसन द्वारा कलकत्तेका पुनरुद्धार (२ जनवरी)।
,, सिराजुद्दौलाके विरुद्ध क्लाइव और वाटसनकी युद्ध-घोषणा (३ जनवरी)।
,, अंग्रेज़ोंका हुगलीपर आक्रमण (१०–१९ जनवरी)।
,, सिराजुद्दौलाका सेना सहित कलकत्तेमें आगमन (३ फरवरी)।
,, हाल्सीबागमें सिराजुद्दौलाके शिविरपर क्लाइवका आक्रमण (५ फरवरी)।
,, अंग्रेज़ोंके साथ सिराजुद्दौलाकी सन्धि (९ फरवरी)।
,, अंग्रेज़ोंका चन्दननगरपर अधिकार (२३ मार्च)।
,, क्लाइवका पलासी-अभियान (१३–२२ जून)।
,, पलासीका युद्ध (२३ जून)।
,, सिराजुद्दौलाकी हत्या (२ जुलाई)। मीरजाफर खाँ बंगाल के नवाब।

सहायक-ग्रन्थावली

1. A New Account of the East Indies—Captain Alexander Hamilton.
2. Bengal in 1757–1758, 3 Vols.—S. C. Hill.
3. Cambridge History of India, Vol. V.
4. Census of India 1901, Vol. VII—A. K. Ray.
5. Early Annals of the English in Bengal, Vol. I., Vol. II. (Parts 1 & 2)—C. R. Wilson.
6. Early Records of British India—J. Talboys wheeler.
7. History of Aurangzib, Vol. V.—Sir Jadunath Sarkar.
8. History of Bengal, Vol. II.—(Dacca University)-Edited by Sir Jadunath Sarkar.
9. History of Bengal—Charles Stewart.
10. History of Military Transactions of the British in Indostan, 3 Vols.—Robert Orme.
11. Historical and Topographical Sketches of Calcutta—H. J. Rainey.
12. India Tracts—J. Z. Holwell.
13. Memoire sur l' Empire Mogul—Jean Law (Edited by A. Martinean).

14. Muzaffarnamah—Karam Ali (English Translation by Sir J. Sarkar in Nawabs of Bengal).
15. Old Fort William in Bengal, 2 Vols.—C. R. Wilson.
16. Oriental Commerce, 2 Vols.—W. Milburn.
17. Press List of Consultations etc. (1704—1742)—Edited by A. N. Wolarton (India Office).
18. Press List of Consultations etc. (1742–1757)—Bengal Secretariat Press.
19. Selections from Unpublished Records etc. (1748-1767)—Rev. James Long.
20. Siyar-ul-Mutakharin—Ghulam Hussain (English Translation by Raymond).
21. Tarikh-i-Bangala—Salimullah (English version: Narrative of Bengal—Francis Gladwin).
2. The Parish of Bengal—Rev. H. B. Hyde.
23. Voyage to India—Edward Ives.
24. महाराष्ट्र-पुराण-गङ्गाराम भट्टाचार्य (साहित्य परिषत् पत्रिका—१३१३; Journal of the Department of Letters, Calcutta University, Vol. XIX, 1929).
25. राममोहन रायेर ग्रन्थावली—वंगीय साहित्य परिषत् कर्तृक प्रकाशित।